जगजीवन साहब की बानी

पहिला भाग

जिस में

उन महात्मा के अति मनोहर और उपकारक पद चार अंगों के मय जीवन-चरित्र बड़े जतन से शोध कर गूढ़ शब्दों और कड़ियों के अर्थ व संकेत सहित छापे गये हैं।

PRINTED AND PUBLISHED AT THE
BELVEDERE STEAM PRINTING WORKS, ALLAHABAD,
BY SACHCHIDANANDA.

1909.

[दाम ॥।-)

॥ अंगों का सूचीपत्र ॥

॥ शब्दों का सूचीपत्र ॥

—— :o: ——

अ

शब्द	पृष्ठ

शब्द	पृष्ठ

शब्द	पृष्ठ

स

जगजीवन साहब का जीवन-चरित्र

जगजीवन साहब जाति के छत्री थे और सरदहा गाँव में जो बाराबंकी (अवध) के ज़िले में सरजू नदी के किनारे कोटवा से दो कोस की दूरी पर बसा है जन्म लिया था। ठीक समय इन के जन्म और मरन का मालूम नहीं होता लेकिन हिसाब करने से अब से अनुमान दोसै बरस पहिले उन का प्रगट होना और १५० बरस हुए गुप्त होना पाया जाता है। इस का प्रमान पादरी जान टामस के लेख से भी मिलता है जिन्हों ने लिखा है कि जगजीवन साहब ने सत्तनामी मत को चलाया और बिक्रमी संबत १८१७ मुताबिक़ ईसवी सन १७६१ में ज्ञान-प्रकाशक नामी ग्रंथ लिखा। इस हिसाब से उस ग्रंथ को रचे १४७ बरस हुए। पादरी साहब ने जगजीवन साहब की जाति खत्री लिखी है पर यह भूल जान पड़ती है—उन्हों ने छत्री को खत्री समझा।

जगजीवन साहब के पिता खेती करते थे और लड़कपन में जगजीवन साहब अपने बाप के गाय बैल चराया करते थे परंतु बाल अवस्था ही से इन के चित्त का संसारी कामों से हटाव और परमार्थ की ओर झुकाव था और साधुओं का संग जहाँ तक औसर मिलता करते थे। एक दिन एक पूरे फ़क़ीर बुल्ला साहब मय एक महात्मा गोबिंद साहब के (जो पलटू साहब के गुरू थे) जिस मैदान में जगजीवन साहब गोरू चरा रहे थे पहुंचे और उन से चिलम चढ़ाने के लिये आग माँगी। जगजीवन साहब तुरत अपने घर दौड़ कर गये और आग लाये और उसी के साथ दोनों

महात्माओं के पीने को दूध भी लेते आये, पर जी में डरते थे कि बाप की मार न पड़े। उन के चित्त की यह दशा देख कर बुल्ला साहब ने हँस कर दूध ले लिया और बोले कि डरो मत हम लोगों को देने से तुम्हारे घर का दूध घटा नहीं बरन बढ़ गया। जगजीवन साहब अचरज में आकर उलटे पाँव घर को लौटे तो देखते क्या हैं कि दूध का बरतन नकानक भर कर उबल रहा है और सारे घर में मानो दूध की नदी बह रही है। जगजीवन साहब उन साधुओं के पीछे दौड़े जो वहाँ से चल दिये थे और कुछ दूर जाकर उन को पकड़ा और प्रार्थना की कि हम को मंत्र उपदेश करके अपना चेला बनाइये। बुल्ला साहब ने जवाब दिया कि कान में मंत्र फूकने की ज़रूरत नहीं है और साथ ही उन पर ऐसी दया की दृष्टि डाली कि जगजीवन साहब की दशा कुछ और ही हो गई और गहरा प्रेम और बैराग जाग उठा। फिर बु़ा साहब बोले कि हम केवल तुम को चिताने के लिये आये थे तुम पिछले जन्म के बड़े अभ्यासी हो अब थोड़े ही दिन के अभ्यास से तुम्हारा जोग पूरा हो जायगा। जगजीवन साहब ने उन के चरनों पर गिर कर प्रार्थना की कि कोई चिन्ह अपना देते जाइये जिस पर बुल्ला साहब ने अपने हुक्के में से एक काला धागा और गोबिंद साहब ने अपने हुक्के में से सफ़ेद धागा तोड़ कर उन की दहनी कलाई पर बाँध दिया। यह चाल दहनी कलाई पर काला और सफ़ेद धागा बाँधने की जगजीवन साहब के पंथ वालों में जो सत्तनामी कहलाते हैं अब तक जारी है और इस दोरंगे धागे को आँदू कहते हैं।

फिर तो जगजीवन साहब तन मन की सुद्ध बिसार कर अभ्यास और भक्ति में लगे और दूर दूर से लोग उन के दर्शन और उपदेश लेने के निमित्त आने लगे। यह महिमा उन की देख कर गाँव वालों को ईर्षा पैदा हुई और उन को सताने का कोई जतन उठा नहीं

रक्खा। जगजीवन साहब उन से पीछा छुड़ाने के लिये सरदहा गाँव को छोड़ कर कोटवा में जा रहे। कहते हैं कि उन के जाते ही सरदहा गाँव को सरजू नदी बहा ले गई।

कोटवा में जगजीवन साहब की समाध और सातवीं गद्दी अब तक मौजूद है और हर साल उन के पंथ वालों और साधारन लोगों का बड़ा भारी मेला होता है पर और पुराने मतों की तरह इस मत में भी अब सच्चे अभ्यासी देख नहीं पड़ते।

जगजीवन साहब गृहस्थ आश्रम में थे। उन के बिषय में कितने चमत्कार प्रसिद्ध हैं जिन में से एक यह है कि उन की लड़की का ब्याह राजा गोंडा के लड़के से ठहरा। जब बरात आई समधी ने बिना माँस के भोजन करने से इनकार किया। इस पर जगजीवन साहब ने मौज से बैंगन की तरकारी बनवा दी जिसे सब बरातियों ने माँस समझ कर बड़ी रुचि से खाया। इसी कारन उनके पंथ वाले बैंगन को माँस के तुल्य समझ कर उस को नहीं खाते।

(जगजीवन साहब पूरे संत थे जिन की ऊँची गति उनकी बानी पुकारती है। संपूर्ण बानी रत्न-जटित है जिस के अंग अंग से भेद, दीनता और प्रेम टपकता है)और पाठ करने से चित्त गद्गद होकर प्रेम के घाट पर आ जाता है। इनके गुरू बुल्ला साहब की बानी भी बड़े ऊँचे घाट की और अत्यंत कोमल है जो छापी जायगी।

जगजीवन साहबका अति मनोहर ग्रंथ शब्द-सागर है जिस का पहिला भाग यह है जो दो लिपियों से मिलान करके अंगों के क्रम अनुसार भरसक बहुत शुद्धता के साथ छापा गया है। दूसरा भाग जिस में और और अंग हैं फिर छापा जायगा।

इस के सिवाय पादरी जान टामस लिखते हैं कि जगजीवन साहब के दो ग्रंथ ज्ञानप्रकाश और महाप्रलय और हैं। इन ग्रंथों को हमने नहीं देखा है। पहिली पुस्तक के बिषय में पादरी साहब कहते हैं कि वह महादेव और पारबतीजी के बीच प्रश्नोत्तर के रूपक में है पर उस का बिषय क्या है यह नहीं बतलाया–ज़ाहिर में जैसा कि नाम से जान पड़ता है ज्ञान पर सम्बाद होगा। दूसरी पुस्तक में इस तरह चर्चा की है कि भक्त जन सब के बीच में रह कर सब से अलग है, वह सब जानता है किसी से पूछने का मुह-ताज नहीं है, वह न जनमता न मरता है, न सीखता न सिखाता है, न रोता न पछताता है, उस को न दुख व्यापता है न सुख, न न्याय न अन्याय, इत्यादि–फिर पूछा है कि ऐसे पुरुष का कोई पता बतला सकता है।

जगजीवन साहब के गुरमुख चेले दूलनदास जी थे जिन का नाम प्रसिद्ध है।

श्रीमहंत राजारामजी बड़ागाँव ज़िला बलिया की कृपा से हम को जगजीवन साहब के गुर-घराने की बंशावली का वृक्ष मिला है जो यहाँ छापा जाता है। उस से जान पड़ेगा कि कैसे कैसे भारी भक्त और महात्मा इस गुर-घराने में हुए हैं, और पलटू साहब जिन की अद्भुत कुंडलिया और शब्दावली हम छाप चुके हैं और भीखा साहब जिन की शब्दावली अब छपेगी इसी घराने के थे॥

बीरू साहब
दिल्ली
यारी साहब
बुल्ला साहब
भुरकुड़ा, ज़िला ग़ाज़ीपुर
जगजीवन साहब
गुलाल साहब
दूलमदास साहब
भीखानन्द साहब
गोबिन्द साहब
अहिरौली, ज़िला फ़ैज़ाबाद
पलटू साहब
अयोध्या
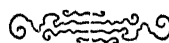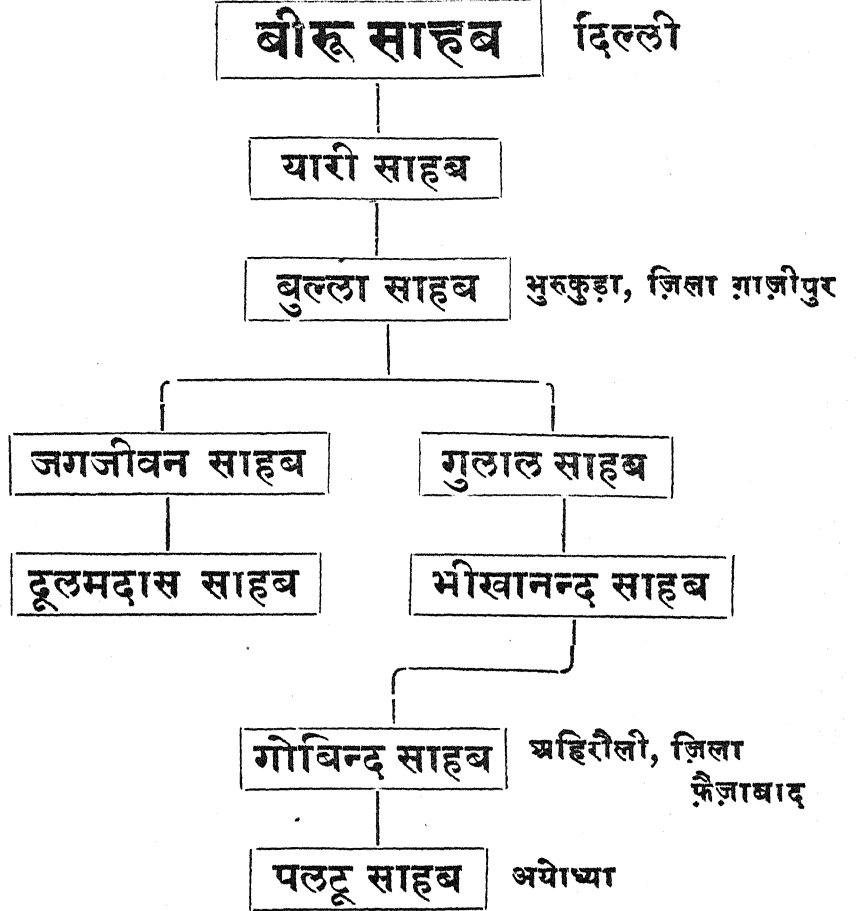
सेस सम्भू थके ब्रह्मा, बिस्नु तारी लाइ ।
है अपार अगाध गति प्रभु, कहूं नाहीं पाइ ॥२॥
भान गन ससि तीनि चौथौ, लिया छिनहिं बनाइ
जोति एकै कियौ बिस्तर, जहां तहां समाइ ॥३॥
सीस दैकै कहैं। चरनन, कबहुं नहिं बिसराइ ।
जगजीवन के सत्य गुरु तुम, चरन की सरनाइ ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

तुम ते कहै को बारम्बार ।
जानिये हित आपनो, मो राखिये दरबार ॥ १ ॥
टरौं ना मैं करहुं सेवा, कठिन माया जार ।
समुझि सो डर होत निसु दिन, तारु अब की बार ।२।
नहीं गुन कछु अहै एकौ, औगुनं अधिकार ।
करहु माफ गुनाह जैसे, मातु पालत बार* ॥३॥
जात जानी दयाति† अब, प्रभु मोहिं है इतबार ॥
जगजीवन निरबाहिये, प्रभु जवन कीन करार।४।

॥ शब्द ४ ॥

मोहिं ते करि न बंदगी जाइ ।
सुद्धि तुमहीं बुद्धि तुमहीं, तुमहिं देत लखाइ ॥१॥
केतनि हैं। गनती में केती, कहि न सकैं। बनाइ।
चहे चरन लगाइ राखौ, चाहिये बिसराइ ॥२॥

*बालक । †दात, बख़्शिश ।

देवता मुनि जती सुर सब, रहे तारी लाइ ।
पढ़ै चारिउ बेद ब्रह्मा, गाइ गाइ सुनाइ ॥३॥
भस्म अंग लगाइ संकर, रहे जोति मिलाइ ।
कौन जानै गति तुम्हारी, रहे जहँ तहँ छाइ ॥४॥
जानिये जन आपना मोहिं, कबहुं ना बिसराइ ।
जगजीवन पर करहु दाया, तबहिं भक्त कहाइ ॥५॥

॥ शब्द ५ ॥

अब मैं कवन गनती आउ ।
दियो जबहिं लखाइ महिं कहँ, तबहिं सुमिरौ नाउ ॥१॥
समुझि ऐसे परत मोहिं कहँ, बसे सरबस ठाउँ ।
अहो न्यारे कहूं* नाहीं, रूप की बलि जाउँ ॥२॥
नाम का बल दियो जेहि कहँ, राखि निर्भय गाउँ ।
काल को डर नहीं उहवां, भला पायो दाउँ ॥३॥
चरन सीसहिं राखि निरखौ, चाखि दरस अघाउँ ।
जगजीवन गुर करहु दाया, दास तुम्हरा आउँ ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

अब मोहिं जानु आपन दास ॥ टेक ॥
सीस चरन में रहै लागो, और करौं न आस ।
दियो मोहिं उपदेस तुमहीं, आइ तुम्हरे पास ॥१॥

---

*कभी ।

लियो ढिग बैठाइ कै जग, जानि सबै निरास ।
भला है अस्थान अम्मर, जोति है परगास ॥२॥
करौं बिनती बहुत बिधि ते, दीजिये विस्वास ।
गति तुम्हारी कौन जानै, जगजीवन है दास ॥३॥

॥ शब्द ७ ॥

बिनती लेहु इतनी मानि ।
कहैं का कहि जात नाहीं, कवन अहैं केतानि ॥१॥
कियो जबहीं दया तुमहीं, लियो संतन छानि ।
रूप नीक लखाय दीन्ह्यौ, होत लाभ न हानि ॥२॥
रहत लागे सदा आगे, सब्द कहत बखानि ।
लागि गा सो पागि गा, पुनि गगन चढ़ि ठहरानि।३।
निरमल जोति निहारि निरखत, होत अनहद बानि*।
जगजिवन गुरु की भई दाया, लियो मन महँ छानि।४।

॥ शब्द ८ ॥

सांईं को केतानि गुन गावै ।
सूझि बूझि तस आवै तेहि का, जेहि काजैान लखावै१
आपुहि भजत है आपु भजावत, आपु अलेख लखावै।
जेहिं कहं अपनी सरनाहिं राखै, सोई भगत कहावै।२।
टारत नहीं चरन ते कबहूं, नहिं कबहूं बिसरावै ।
सूरति खैंचि-ऐंचि जब राखत, जोतिहिं जोत मिलावै३

*बानी ।

सतगुर कियो गुरुमुखी तेहिकाँ, दूसर नाहिं कहावै ।
जगजीवन ते भे संग बासी, अंत न कोऊ पावै ॥४॥

॥ शब्द ९ ॥

अब मैं करौं कौन बयान ।
चहौ पल में करहु सोई, होय सो परमान ॥१॥
सहस जिभ्या सेस बरनत, कहत बेद पुरान ।
मोहिं जैसी करहु दाया, करहुं तैसि बखान ॥२॥
संतन काँह सिखाइ लीन्ह्यो, कहत सोई ज्ञान ।
लागि पागि कै रहै अन्तर, मस्त रहत निर्बान ॥३॥
रहे मिल तुम्ह नहीं न्यारे, कबहुं नहिं बिलगान ।
जगजीवन धरि सीस चरनन, नहीं भावै आन ॥४॥

॥ शब्द १० ॥

अब मैं कहौं का कछु ज्ञान ।
बुद्धि हीनं सुद्धि हीनं, हौं अजान हैरान ॥१॥
ब्रह्म सेस महेस सुमिरत, गहै अन्तर ध्यान ।
संत तंते रहत लागे, कहत ग्रंथ पुरान ॥२॥
जोति एकै अहै निर्मल, करै सबै बयान ।
जहाँ जैसै भाव आहै, भयो तस परमान ॥ ३ ॥
करौ दाया जानि आपन, नहीं जानहुं आन ।
जगजीवन दास सत्य समरथ, चरन रहु लिपटान ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

सांईं मैं नहीं कछु जाना ॥ टेक ॥
बाल बुद्धि कछु नाहिं जान्यो,
रह्यो सदा हैवाना ।
करि कुसंग कुमारग डोल्यौ,
निसि बासर अभिमाना ॥ १ ॥
नहिं मति मोरि कहौं मैं कहँ लगि,
तुम सब कृपा-निधाना ।
मोहिं सिखाइ पढ़ाइ दृढ़ावहु,
तबहिं धरौं मैं ध्याना ॥ २ ॥
मैं बपुरा केतनि किन माहीं,
करि नहिं सकौं बखाना ।
जगजीवन पर दाया करिये,
गुरु निरखै निरबाना ॥ ३ ॥

॥ शब्द १२ ॥

सांईं जब तुम मोहिं बिसरावत ।
भूलि जात भौजाल जगत मां,
मोहिं नहीं कछु आवत ॥ १ ॥
जानि परत पहिचान होत जब,
चरन सरन लै आवत ।

तब पहिचान होत है तुम ते,
सूरति सुरति मिलावत ॥ २ ॥
जो कोइ चहै कि करौं बंदगी,
बपुरा कौन कहावत ।
चाहत खैंचि सरन ही राखत,
चाहत दूरि बहावत ॥ ३ ॥
हौं अजान अज्ञान अहौं प्रभु,
तुम ते कहि कै सुनावत ।
जगजीवन पर करत है दाया,
तेहि ते नहिं बिसरावत ॥ ४ ॥

॥ शब्द १३ ॥

प्रभुजी का बसि अहै हमारी ।
जब चाहत तब भजन करावत,
चाहत देत बिसारी ॥ १ ॥
चाहत पल छिन छूटत नाहीं,
बहुत होत हितकारी ।
चाहत डोरि सूखि पल डारत,
डारि देत संसारी ॥ २ ॥
कहँ लहि बिनय सुनावौं तुम ते,
मैं तौ अहौं अनारी ।
जगजिवन दास पास रहै चरनन,
कबहूं करहु न न्यारी ॥ ३ ॥

॥ शब्द १४ ॥

बंदा कौन बंदगी करई ।
रात दिवस मिलि करै बंदगी,
जो पै कबूल न परई ॥ १ ॥
चाहत है मैं रहौं चरन ढिग,
दृढ़ ह्वै धरनी धरई ।
सांईं चहत मोर है नाहीं,
दूर दूर ह्वै रहई ॥ २ ॥
जोगी जती मुनि जब सब थाके,
करि के तपस्या मरई ।
नाहीं हित करि जानत आपन,
नाहिं काज कछु सरई ॥ ३ ॥
आपु बंदगी करत करावत,
जेहिं पर किरपा करई ।
जगजिवन दास बिनती करि,
बिनवै सीस चरन तर धरई ॥ ४ ॥

॥ शब्द १५ ॥

प्रभु जी तुम जानत गति मेरी ।
तुम ते छिपा नहीं आहै कछु,
कहा कहौं मैं टेरी ॥ १ ॥

जहँ जहँ गाढ़ पस्यो भक्तन कों,
तहँ तहँ कीन्ह्यो फेरी ।
गाढ़ मिटाय तुरन्तहिं डास्यो,
दीन्ह्यो सुक्ख घनेरी ॥ २ ॥
जुग जुग होत ऐसै चलि आवा,
सो अब साँझ सबेरी ।
दियो जनाय सोई तस जानै,
बास मनहिं तेहि केरी ॥ ३ ॥
कर औ सीस दियो चरनन महँ,
नहिं अब पाछे हेरी ।
जगजीवन के सतगुरु साहब,
आदि अंत तेहि केरी ॥ ४ ॥

॥ शब्द १६ ॥

प्रभु बिन किरपा भक्ति न होय ।
कर्म अघ तेहि मेटि डास्यो, मंत्र सिखयो सोय ॥ १ ॥
तिरथ बरतं करि तपस्या, डारि यहु तन खोय ।
नाहिं लाहत नाम रस बहु, नाहिं दृढ़ता होय ॥ २ ॥
कोटि तीर्थ अस्नान करि कै, सैन रहे समोय ।
ऐस करि कै बिचार नाहीं, रहे मन मन रोय ॥ ३ ॥

पढ़ि पुरान गरंथ गीता, बकत कीरति सोय ।
नहीं अजपा डोरि लागै, भक्ति कैसे होय ॥ ४ ॥
हो दयाल निहाल कर मोहिं, दूजा नाहिन कोय ।
जगजीवन को चरन गुरु के, नहीं न्यारा होय ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

प्रभु जी बुद्धि मोहिं केतानि ।
दया जब तुम कीन मो पर, कह्यौ ज्ञान बखानि ॥१॥
भ्रमत रह्यौ अपंथ मारग, पर्‌यो जाही जानि ।
कहाँ लहि मैं कहौं औगुन, महा अघ की खानि ॥२॥
मेटि सकल गुनाह औगुन, सरन लीन्ह्यो आनि ।
जानि हित करि आपना मोहिं, और नाहीं मानि ॥ ३॥
कहत हौं कर जोरि सुनिये, मोरि अन्तर जानि ।
जगजिवन दास तुम्हार आहै, तुमहिं लियो पहिचानि४

॥ शब्द १८ ॥

मैं तो दास तुम्हार कहावौं ।
तुम तजि और न जानौं कोई,
औरै सीस न नावौं ॥ १ ॥
चरन तुम्हारे लागि रहौं मैं,
और सबै बिसरावैं ।
तुमहीं ते निरबाह हमारा,
तुम्हरी कीरति गावैं ॥ २ ॥

चलौं दीनता ह्वै कै सब ते,
नाहिं बिबाद बढ़ावौं ।
जो कोइ कीन* जानि है मोहीं,
तेहि का दूरि बहावौं ॥ ३ ॥
आदि अन्त का आहौं संगी,
त्यागि न अन्तै धावौं ।
जब तुम खुसी सुचित्त होत हौं,
तब मैं सुरति मिलावौं ॥ ४ ॥
अपने अपने रँग रस माते,
केहि केहि राह लगावौं ।
जगजीवन गुरु चरनन परि कै,
नाहीं सीस उठावौं ॥ ५ ॥

॥ शब्द १९ ॥

साईं इतनी बिनती मोरि ।
माँगत हौं कर जोरि कै तुम ते,
लागि रहै दृढ़ डोरि ॥ १ ॥
रह्यों अजान नहीं मैं जान्यो,
बहुत हीन मति थोरि ।
जब ते कृपा करि आपन जान्यो,
तब ते सकैं का तोरि ॥ २ ॥

*द्रोही ।

अब उसवास* न एकौ मानौं,
चाखि नाम रस घोरि ।
सदा भरोसा आस तुम्हारी,
भर्म फंद ते तोरि ॥ ३ ॥
चरन ते सीस टरै नहिं टारे,
दीजै हमहिं न खोरि ।
जगजिवन दास तुम्हार कहावै,
सतसंगति गहि पोढ़ि ॥ ४ ॥

॥ शब्द २० ॥

अब मोर मनुवां समुझि डेरात ।
वहि दिन का मोहिं संसा व्यापत,
कछु गति जानि न जात ॥ १ ॥
काम न आइहि कोउ काहू के,
नारि बंधु पितु मात ।
धोखा देखि सबै कोउ भूला,
थिर नाहीं सब जात ॥ २ ॥
जन्म पाइ जो जानै नाहीं,
कौनि कहौं कुसलात ।
जगजीवन साईं तुम तारहु,
तुमहिं हाथ सब बात ॥ ३ ॥

*संसय ।

॥ शब्द २१ ॥

अब सुनि लीजै इतनी हमारी ।
लागी रहै प्रीति निसि बासर
दास को अपने नाहिं बिसारी ॥ १ ॥
जो मैं चहौं कहि कहँ लौ सुनावौं,
औगुन कर्म बहुत अधिकारी ।
सरन चरन की राखि आपनी,
यहु कछु मन में नाहिं बिचारी ॥ २ ॥
काया यहि कर्महिं की आहै,
आपु ते नाहीं जात सँवारी ।
भौसागर हित जानि बूड़ जग,
जेहिं जान्यो तेहिं लियो उबारी ॥ ३ ॥
लीजै राखि भाखि कहौं तुम ते,
केतिक बात लियो अनगन* तारी ।
जगजीवन के साईं समरथ,
अपने निकट ते कबहुं न टारी ॥ ४ ॥

॥ शब्द २२ ॥

साईं मैं नहिं आप का चीन्हा ।
को मैं आहुँ कहाँ ते आयो,
तुम हीं सब कछु कीन्हा ॥ १ ॥

---

* अनगिनत ।

बिंदम बुंद बनायो जामा,
सो पहिराइ कै दीन्हा ।
रहि दस मास अगिन महँ बासा,
तहँ तुम रच्छा कीन्हा ॥ २ ॥
बाहर होत पियत पय बिसरयो,
वह सुधि सब हरि लीन्हा ।
बाल तरुन फिर बृद्ध भये जब,
तबहुँ बिचार न कीन्हा ॥३ ॥
अब दाया करि दास जानि कै,
आपन करि कै लीन्हा ।
जगजीवन निरगुन छबि देखै,
चरन कमल चित दीन्हा ॥ ४ ॥

॥ शब्द २३ ॥

तुम सों मन लागो है मोरा ।
हम तुम बैठे रही अटरिया
भला बना है जोरा ।॥ १ ॥
सत की सेज बिछाय सूति रहि,
सुख आनन्द घनेरा ।
करता हरता तुमहीं आहहु,
करौं मैं कौन निहोरा ॥ २ ॥

रह्यौं अजान अब जानि पर्‍यो है,
जब चितयो एक कोरा ।
अब निर्बाह किये बनि आइहि,
लाय प्रीति नहिं तोरिय डोरा ॥ ३ ॥
आवा गमन निवारहु साईं,
आदि अंत का आहिउ चेरा ।
जगजीवन बिनती करि माँगै,
देखत दरस सदा रहौं तोरा ॥ ४ ॥

॥ शब्द २४ ॥

साँई मोहिं ते सुमिर न जाई ।
पाँच अपरबल जोर अहैं एइ,
इन ते कछु न बिसाई ॥ १ ॥
निसि बासर कल देहि नहीं एइ,
मोहिं औरै राह लगाई ।
जो मैं चहौं गहौं तुव चरना,
इन छिन छिन भरमाई ॥ २ ॥
साथ सहेली लिहे पचीसौं,
अपन अपन प्रभुताई ।
जो मन आवै सोई ठानैं,
हठ हटकि देहिं भटकाई ॥ ३ ॥

महल माँ टहल करै नहिं पावा

केहि बिधि आवहुँ धाई।

ऊंचे चढ़त आनि कै रोकत,

मानहिं नहीं दोहाई ॥ ४ ॥

अब करु दाया जानि आपना,

बिनय कै कहौं सुनाई।

जगजीवन कै इतनी बिनती,

तुम सब लेहु बनाई ॥ ५ ॥

॥ शब्द २५ ॥

साईं मैं तो बड़ा अनारी।

कुमति प्रसंग बास नर्कहिं मा,

आवत नाहिं बिचारी ॥ १ ॥

पर्‌यों अपरबल महा मोह महँ,

सुधि वह नाहिं सँभारी।

गुन नाहीं औगुन सब बहु बिधि,

बिसरी सुरति हमारी ॥ २ ॥

केतौ करि उपाय मैं थाक्यों,

मैं मन मान्यों हारी।

अब दाया करि चरन लाइ कै,

निकट ते कबहुं न टारी ॥ ३ ॥

देहु सिखाइ पढ़ाइ ज्ञान मोहिं,
करहु योग अधिकारी ।
जगजीवन को चरन तुम्हारे,
सूरति रहौं निहारी ॥ ४ ॥

॥ शब्द २६ ॥

साईं कुदरति अजब तुम्हारी ।
तुम हहु अजब अजब हैं बंदे,
मैं तुम्हरी बलिहारी ॥ १ ॥
दुनिया अजब धंध मा लागी,
सुधि बुधि नाहिं सँभारी ।
आये फूटि टूटि गारत भे,
का सों कहौं पुकारी ॥ २ ॥
समुझै बूझै सूझै नाहीं,
शब्द कही कहि हारी ।
सो अँदेस होत मन मोरे,
का धौं करहि बिचारी ॥ ३ ॥
आये कहँ ते फिरि कहँ जैहैं,
कहँ ग्रह ग्राम सँवारी ।
भूले फिरहिं मोह मद माते,
इहँ हहिं दिन दुइ चारी ॥ ४ ॥

जेहिं अपनाइ कै चेत चितायौ,
तिन सत सुरति सँभारी ।
जगजीवन सूरति मा मिलि गे,
नैन सों निरखि निहारी ॥ ५ ॥

॥ शब्द २७ ॥

सतगुरु समरथ साहब चरनन पर वारी ॥ टेक ॥
हौं अज्ञान बुद्धिहीन सुद्धि ना संभारी ।
कर दोऊ तन सीस दीन्ह्यौ गोद हौं तुम्हारी ॥१॥
राखिये अब सरन अपनी कर्म ना बिचारी ।
नेग* जन्म भर्म के रे डारिये मिटा री ॥ २ ॥
हौं तुम्हार आदि अन्त देहु ना बिसारी ।
ऐसी भाँति दिनं राति चित्त ते न टारी ॥ ३ ॥
बिनय करि कै कहत हौं सुनि लीजिये हमारी ।
जगजीवन का और ना पनाह है तुम्हारी ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

बालक बुद्धि हीन मति मोरी ।
भरमत फिरौं नाहिं दृढ़ डोरी ॥ १ ॥
सूरति राखौ चरनन मोरी ।
लागि रहै कबहूं नहिं तोरी ॥ २ ॥
निरखत रहौं जाउँ बलिहारी ।
दास जानि कै नाहिं बिसारी ॥ ३ ॥

*अनेक ।

तुमहिं सिखाय पढ़ायो ज्ञाना।
तब मैं धर्यौं चरन का ध्याना ॥ ४ ॥

साईं समरथ तुम हौ मोरे।
बिनती करौं ठाढ़ कर जोरे ॥ ५ ॥

अब दयाल ह्वै दाया कीजै।
अपने जन कहँ दरसन दीजै ॥ ६ ॥

नाम तुम्हार मोहिं है प्यारा।
सोइ भजे घट भा उजियारा ॥ ७ ॥

जगजीवन चरनन दियो माथ।
साहब समरथ करहु सनाथ ॥ ८ ॥

॥ शब्द २९ ॥

तेरा नाम सुमिरि ना जाय।
नहीं बस कछु मोर आहै, करहुं कौन उपाय ॥ १ ॥
जबहिं चाहत हितू करि कै, लेत चरनन लाय।
बिसरि जब मन जात आहै, देत सब बिसराय ॥ २ ॥
अजब ख्याल अपार लीला, अंत काहु न पाय।
जीव जंत पतंग जग महँ, काहु ना बिलगाय ॥ ३ ॥
करौं बिनती जोरि दुउ कर, कहत अहौं सुनाय।
जगजीवन गुरु चरनसरनं, है तुम्हार कहाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३० ॥

मैं तो अरज करौं दरबार ।
भौसागर तकि भरम होत मोहिं,
अब की उतारहु पार ॥ १ ॥
औगुन बहुत नहीं गुन एकौ,
काम करत बिन कार ।
पग बिहीन कर नाहीं जिन के,
ताहि खवावत चार ॥ २ ॥
बुद्धि हीन सुधि हीन अहौं मैं,
का करि सकौं बिचार ।
अहौं भरोसे सदा तुम्हारे,
तुम प्रति पालनहार ॥ ३ ॥
सुनियत ग्रंथ पुरान कहत अस,
बहुतन करि निस्तार ।
छिनहिं निहाल किहेउ प्रभु बहुतन,
द्विज के दारिद मार ॥ ४ ॥
अब दाया करिये प्रभु इतनी,
आवै मोहिं इतबार ।
जगजीवन चरनन परि बिनवै,
मन ना बहै हमार ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३१ ॥

हम तें चूक परत बहुतेरी ।

मैं तो दास अहौं चरनन का, हम हूं तन हरि हेरी ॥१॥

बाल-ज्ञान प्रभु अहै हमारा, झूठ साँच बहुतेरी ।

सो औगुन गुन का कहौं तुम तें, भौसागर तें निबेरी ।२।

भव तें भागि आयौं तुव सरनै, कहत अहौं अस टेरी ।

जगजीवन की बिनती सुनिये, राखौ पत जन केरी ।३।

॥ शब्द ३२ ॥

अब तुम होहु दयाल तुम्हारी पैयाँ परौँ ॥टेक॥

सूझत नहिं मैं भ्रमत फिरत हौं,
परयों मोह के जाल ॥ १ ॥

नाम तुम्हार सुमिरि नहिं आवै,
जग संगति जंजाल ॥ २ ॥

आवत जब सुधि वहै समय की,
ब्याकुल होहुं बेहाल ॥ ३ ॥

हाथ पाँव मेरे बल नाहीं है,
तुम हिं करहु प्रतिपाल ॥ ४ ॥

जगजीवन कौं दरसन दीजै,
अब मोहिं करहु निहाल ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३३ ॥

बार बार कहि बिनय सुनावौं ।
तुम्हरी कृपा तें सुरति लगावौं ॥ १ ॥
अनत न जाउँ जाउँ बलिहारी ।
सूरति कबहूं रहै न न्यारी ॥ २ ॥
जब तुम चहहु रहौं तब पासा ।
कृपा करहु तब बसि बिस्वासा ॥ ३ ॥
दास केर बस एकौ नाहीं ।
तुम जानौ जानै मन माहीं ॥ ४ ॥
जब तुम जन का देत जनाई ।
तब मन भजत अहै लौ लाई ॥ ५ ॥
दूजा कौन है काहि बतावौं ।
कृपा करहु तब ना बिसरावौं ॥ ६ ॥
जगजीवन कहै बिनय सुनाई ।
सतगुरु चरन बिसरि नहिं जाई ॥ ७ ॥

॥ शब्द ३४ ॥

साईं को गति गावै तेरी ।
जेहि जस ज्ञान बयान कीन्ह तस,
सूरत बास बसे री ॥ १ ॥
ब्रह्मा सनक सनंदन सक्ती,
संकर सहस फने री ।
बिस्नु सत्य रस चाखि मस्त है,
गावत ज्ञान घनेरी ॥ २ ॥

अंत अनंत ध्यान तेहि कीन्हे,
भे सतलोक बसेरी ।
नाम अधार बिचारत ज्यों जग,
सन्मुख पलक न फेरी ॥ ३ ॥
जेहि हित जानि दया दुख काट्यौ,
भौजल धार निवेरी ।
जगजीवन बिस्वास तुम्हारी,
टूटी भ्रम की बेरी ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३५ ॥

चरन सरन अब आयौं, मैं नहिं जानी रे । ॥टेक॥
मैं अजान अज्ञान हौं, कछु सुधि न सँभारो रे ।
अंध रह्यों सूझा नहीं, भूल्यों संसारी रे ॥१॥
पाँच भ्रमत जहँ तहाँ, एक नहिं आयो रे ।
मोरि लागु नहिं अहै, ता ते बिसरायो रे ॥२॥
मिलि पचीस तेहि सँग, मोहिं बहुरि दिखायो रे ।
नाचि नाचि मोहिं लियो, नाम नहिं आयो रे ॥३॥
मैं तौ मद माता फिर्यों, चित ठहर न आना रे।
भा गुमान रस पाय तेहिं, सुधि बुधि हैवाना रे॥४॥
कठिन जार भ्रम फाँसि है जग, बँधा संसारा रे ।
जेहि का तुम दाया करी, तेहि भयो उबारा रे ॥५॥

न्यारे तुम्हरे दास भे, लिप्त नहिं काहू माहीं रे ।
जगत कहै हम महँ अहैं, वै तुमहीं माहीं रे ॥
औगुन क्रम सब मेटिये, सुनु कृपा-निधाना रे ।
जगजीवन दास तुम्हार है, चरनन लिपटाना रे ॥

॥ शब्द ३६ ।

बिनती सुनिये कृपा-निधान ।
जानत अहौ जनावत तुमहीं, का करि सकौं बयान ।१।
खात पियत जो डोलत बोलत, और न दूसर आन ।
ब्यापि रह्यौं कहुं चेत सरन करि, काहू भरम भुलान ।२।
माया प्रबल अंत कछु नाहीं, सो मन समुझि डरान ।
अब तो सरन और ना जानौं, करिहौ सो परमान ।३।
सुद्धि बुद्धि कछु नाहीं मोरे, बालक जैसे अजान ।
मात सुतहि प्रतिपाल करत है, राखत हित करि प्रान ।४।
मैं केतानि कवनि गिनती महँ, गावत बेद पुरान ।
जगजीवन का आपन जानहु, चरन रहे लिपटान ।५।

॥ शब्द ३७ ॥

साईं मैं तुम्हरी बलिहारी ।
कहौं काह कहि आवत नाहीं, मन तन तुम पर वारी ।१।
देखत अहौं खरो ताम्रोवर*, झलकै जोति तुम्हारी ।
केहु भरमाय देत माया महँ, केहु करत हितकारी ।२।

* तांबा की सदृश यानी लाल रंग ।

देखत अहहूं खेलत सब महँ को करि सकै बिचारी
करता हरता तुम हीं आहौ अजब बनी फुलवारी ॥३॥
दासन दास कै मोहिं जानिये जानत अहौ हमारो ।
जगजीवन दियो सीस चरन तर
कबहूं नाहिं बिसारी ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३८ ॥

सांईं मैं अजान अज्ञाना ।
जानों नहीं बूझि नहिं आवै भरमत फिरौं भुलाना॥१॥
हौ समरत्थ सिद्धि के दाता मोहिं सिखावहु ज्ञाना ।
करौं सो जानि जनाय देव जब धरौं चरन कै ध्याना॥२
दीन लीन सुभ सुमन सुमारग यह बर दीजै दाना ।
आवै दृष्टि दिष्ट देखत रहौं परगट करौं बयाना ॥३॥
काहूं* रहौं सरन नहिं छूटै तुम तजि भजौं न आना ।
जगजीवन कर जोरि कहैं यह निरखत
रहौं निरबाना ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३९ ॥

अब मैं कासों कहौं सुनाई ।
केहू घट की छापी नाहीं, जोति रही सब छाई ॥१॥
तुम हीं ब्रह्मा तुम हीं बिस्नू, संभू तुमहिं कहाई ।
सक्ती सेस गनेस तुम्हीं हौ, दूजा नाहिं कहि जाई ॥२॥

* कहीं ।

श्रासा सब महँ अहै तुम्हारो, नहीं कहूं बहराई*
जानि ऐसी परत मोहिं का, चरन सरन महँ आई ॥३॥
दुक्ख दे फिर दुक्ख मेटत, सुक्ख देत अधिकाई ।
दास आपन जानी जिन का, तिन के रही सहाई ॥४॥
तुम हीं करता तुम हीं हरता, सृष्टी तुमहिं बनाई ।
जगजीवन के सत्त गुरू तुम, कौन कहै गोहराई ॥५॥

॥ शब्द ४० ॥

मेरे गुनाह माफ करिये अब साईं ॥टेक॥
जैसे मातु सुतहिं पालत छीर दै पियाई ।
लिये गोद रहै निसु दिन कबहुं ना घिनाई ॥१॥
रहै सुखित दुक्ख नाहिं कर ते ले उठाई ।
कंठ लावै मुक्ख चूमै हुलसि के हँसाई ॥२॥
सुतहिं दुक्ख दुखित मातु कछु ना सुहाई ।
इहै मोर बिनती जानु राखु ऐसी नाईं ॥३॥
पतित अनेक तारि लीन्हे गनत ना सिराई ।
मेटि औगुन छिनक माहिं लयो है अपनाई ॥४॥
सुने ते बिस्वास आवत बेद सब्द गाई ।
सूझि सत मत परा जबहीं दियो तबहिं लखाई ॥५॥
बुद्धि केतनि अहै मोहिं मां करौं का कबिताई ।
जगजीवन का करहु आपन चरनन में लिपटाई ॥६॥

*बाहर ।

॥ शब्द ४१ ॥

अब मैं करौं धौं कौन उपाई ।

मैं चाहौं निस बासर सुमिरौं, तुम डारत बिसराई ॥१॥

तुम जब जानत तब मैं जानत, तब हीं मोहिं सुधि आई।

सूझत बूझत जानि परै तब, रहत हौं सुरति लगाई॥२॥

है केतनि मति कहौं कहां लहि, तुम ते कहा छिपाई ।

जल थल घट घट सबके मन महँ, जहँतहँ रह्यो समाई॥३॥

ब्रह्मा सिव औ बिस्नु के राचित, वहि मन रह्यौ समाई।

जगजीवन जब कृपा तुम्हारी, चरन रह्यो लिपटाई॥४॥

॥ शब्द ४२ ॥

नैंना चरनन राखहुं लाय ।

केतो रूप अनूपम आहै, देऊं सब बिसराय ॥१॥

राति दिना औ सोवत जागत, मोहीं इहै सोहाय ॥

नहीं पल पल तजौं कबहूं, अनत* नाहीं जाय ॥२

मोरि बस कछु नाहिं है, जब देत तुमहिं बहाय ।

चहत खैंचि कै ऐंचि राखत, रहत हौं ठहराय ॥३॥

दियो नाथ सनाथ करि अब, कहत अहौं सुनाय ।

जगीजवन के सत्त गुरु तुम, सदा रहहु सहाय ॥४॥

॥ शब्द ४३ ॥

भइउँ मैं सनाथ आइ कै ॥टेक॥

महा मोह सोवत रहिउँ ।

उठिउँ चौंकि जागि कै ॥१॥

*और कहीं ।

मोहिं उपदेस दियो मते महँ ।
चरन कमल रहिउँ लागि कै ॥२॥
जग को देखि मोहिं डरु लाग्यो ।
आइउँ सरन में भागि कै ॥३॥
जगजीवन छबि निरखि देखि रहि ।
मस्त भइउँ रस पागि कै ॥४॥

॥ शब्द ४४ ॥

साईं मोहिं और न भावै ।
जो मैं चहौं रहौं चरनन ढिग, जगत भेख भरमावै ॥१॥
कानि न मानत जानत आहै, नहिं बिबेक मन आवै ।
जेहिं के मन मां जैसी आवत, सो तैसे गुन गावै ॥२॥
अद्भुत ख्याल तुम्हारे आहैं, बिन कर नाच नचावै ।
कहुं उपदेस अँदेस मिटावै, केहूं दूरि बहावै ॥३॥
अब सरनाय चरन की राखौ, सूरति नहिं भरमावै ।
जगजीवन जो बूझै जैसे, तेहि को तैसे भावै ॥४॥

॥ शब्द ४५ ॥

प्रभु जी बक्सहु चूकि हमारी ।
जो पुरबुज अपने कर्मन ते, डार्यो सर्ब मिटा री ॥१॥
राखहु पास सदा चरनन के, निकट ते नाहीं टारी ।
जानत रहहु सदा हित आपन, कबहूं नाहिं बिसारी ॥२॥

पाँच पचीस बड़े पर पंची, यइ डारत संसारी।
येई पल छिन छिनहिं भ्रमावत, नाहीं लागु हमारी॥३॥
अब मन लागि पागि रह तुम ते, सूरति रहै न न्यारी।
जगजीवन को भक्ति बर दीजै, जुगजुग आस तुम्हारी॥४॥

॥ शब्द ४६ ॥

अब मैं कहौं कहां लगि ज्ञान।
सहस मुख सों सेस बरनत, मैं अहौं केतान॥१॥
बिस्नु सुमिरत सिवं सक्ती, ब्रह्म बेद बखान।
सर्ब मई बिराजं रही है, जोति वह निर्बान॥२॥
चहै सो करि लेहु पल में, अहै सो न प्रमान।
कृपा करि जेहिं लियो छिन में, जानि आपु समान॥३॥
करौं विनती बहुत बिधि ते, हौं अजान हैवान।
जगजीवन गुरु अहै समरथ, चरन हौं लिपटान॥४॥

॥ शब्द ४७ ॥

प्रभु तुम सों मन लागा मोरा।
नेग* जन्म के कर्म काटो, माँगौं दरसन तोरा॥१॥
मोहिं ते तौ कछु कहि नहिं आवै, मैं पापी हौं चोरा।
निसु दिन तुम कहँ सुमिरत राहौं, इतना मानु निहोरा॥२॥
यह अरदास† मानि ले साईं, तनिक देखिये कोरा।
जगजीवन काँ जानु आपना, तोरु प्रीत नहिं छोरा॥३॥

*अनेक। †अरजदाश्त, प्रार्थना।

॥ शब्द ४८ ॥

मेरी बिनय सुनिये राम ।

भरमत हौं दिन रात छिन छिन, कैसे सुमिरौं नाम ॥१॥

महा अहै अपार माया, मोह सुख परि काम ।

छूटि गे सत टूटि डोरी, लागि हित धन धाम ॥२॥

मेटु सर्ब गुनाह मेरे, पाप कर्म हराम ।

जगजीवन काँ जानु आपन, चरन केर गुलाम ॥३॥

॥ शब्द ४९ ॥

पर्यौं मैं जार* कैसे जानौं रे ।

जो तुम कौल कीन तब हमते, अब कैसे सुधि आनौं रे ॥१॥

निस बासर मैं भ्रमत फिरत रहि, केहि बिधि
मन थिर आनौं रे ।

दे उपदेस अँदेस मिटावो, तौन ठान मैं ठानौं रे ॥२॥

लागि रहै मोहिं टूटै नाहीं, माँगि माँगि रस सानौं रे

जगजीवन बिनती करि माँगै, चरन
कमल अनुरागौं रे ॥३॥

॥ शब्द ५० ॥

साँईं मेरे हम हैं दास तुम्हारे ।

तुम्हरी कृपा ते सुमिरौं निसु दिन, कबहूं
न रहौं बिसारे ॥१॥

लागी रहै प्रीति चरनन ते, होउँ न कबहूं न्यारे ।

नहिं बसि अहै मोर बपुरे† को, रहिये आपु सँभारे ॥२॥

*जाल । †गरीब ।

बालक बुद्धि अजान जान नहिं, जननी केर दुलारे।
खेलत सुभ औ असुभ न जानत, हितकरिगोद लिया रे॥३
अस्थन लाग पियत पय हित करि, नहीं कुदृष्टि निहारे।
सुनिय कहौं कर जोरि मोरि यह, बिनय सों करौं पुकारे॥४
छबि मूरति निरखत देखत रहौं, नाहीं और निहारे।
जगजीवन काँ आपन जानहु, औगुन सर्ब मिटारे॥५

॥ शब्द ५१ ॥

साईं मैं नहिं आपु क जाना।
को मैं आहुं कहाँ ते आयों, फिरत हौं कहाँ भुलाना॥१॥
काया कंचन लोक बनायो, तेहि का अंत न जाना।
बूझौं कहँ अस्थान कौन है, सर्ब अंग ठहराना॥२॥
देखत हौं काहू नहिं न्यारा, समुझत आहौं ज्ञाना।
कैान जुक्ति जग बंध निकरिये, कैसे ह्वै मस्ताना॥३॥
मैं जानौं मन तुम हीं साहब, ता ते मन बिलगाना।
तेहिका रूप अनूप अमूरति, गगन मँडल अस्थाना॥४॥
तेहि ते सूरति फूटी तेहि माँ, गुरू अलख करि माना।
चेला ह्वै कै करहुं बंदगी, सीस करहुं कुरबाना॥५॥
तुम ते मैं संतुष्टा ह्वै हौं, अहहु मूर्ति निर्बाना।
जगजीवन पर दाया कीन्हो तब ते अब पहिचाना॥६॥

॥ शब्द ५२ ॥

मोहिं का बार बार भटकायो।
भूला फिरयौं अनेक जन्म लहि, अंत जानि नहिं पायो॥१

काया धरि धरि नाच्यौं बहु बिधि, आसा बँधि बिसरायो।
जो सुधि रही सुक्ख हरि मोरी, चेत नहीं कछु आयो ॥२
आवत सुधि मोहिं कबहूं कबहूं, साँचु मैं नाहीं पायो।
थिर नहिं बास भई नहिं काहूं, अवत जात दुख पायो।।३
करि करुना अघ करम मिटायो, अपनि सरन लै आयो।
जगजीवन अब संसै नाहीं, चरनन सीस चढ़ायो ॥४

।। शब्द ५३ ॥

साँई यह बिनती सुनु मोरी ॥ टेक ॥

जन्म पाइ कछु जान्यों नाहीं, कछु बसि नाहीं मोरी ।
बाद बिबाद निंदा कुटिलाई, यह सब मोहिं माँखोरी॥१
औगुन अपने कहँ लौं भाखौं, गनिन सिराय* बहु को री।
महा मोह भव जाल में बंधो, दाया करि कै छोरी ॥२।
माय सुतहिं दुख देत न कबहूं, नहिं कुदृष्टि करि हेरी।
जगजीवन काँ आपन जानहु, प्रीति न कबहूं तोरी ॥३

॥ शब्द ५४ ॥

मेरी हाथ तुम्हारे डोरी ॥ टेक ॥

है केतनि मति बुद्धि हीन है ।
नहिं कछु अहै बूझ मति मोरी ॥१॥
मन कठोर आभाव भाव नहिं ।
करौं कपट भ्रमि भटकौं चोरी ॥२॥
निसु बासर छिन छिन बिसरत है ।
नहिं निरखि जात छबि तोरी ॥३॥

*पार पावै ।

राखहु पास बिस्वास देहु बर, बिनय कहौं कर जोरी ।
जगजीवन चित चरनन दीन्हे, रहै सीस कर जोरी ॥४॥

॥ शब्द ५५ ॥

साँईं नावों तोहिं काँ माथ ।
सत्त गुरु समरत्थ साँई, जनहिं करहु सनाथ ॥ १॥
सत्त संगं रंग मोहिं मन, जुग बंध अंतर सोय ।
निरखि देखहुं नैन ते छबि, रही सुरति समोय ॥२॥
जलं थलं औ पवन पानी, व्यापितं है सोय ।
ब्रह्म बिस्नु महेस सेसं, एक दूज न कोय ॥ ॥३॥ ।
जक्त संगति रहैं न्यारे, दास ते जग माहिं ।
कमल मधुकर प्रीति संपुट*, बिलग होवैं नाहिं ॥४॥
रहि निरासं नाम आसं, चित्त चरन समाय ।
जगीजवन बिस्वास मन, सो मुरति दरस कराय ॥५॥

॥ शब्द ५६ ॥

प्रभु जी बसि हमार कछु नाहीं ।
जो तुम चहत करत है। सोई, ब्यापि रह्यो सब माहीं ॥१॥
कहुं कबि ज्ञानी ज्ञान कथत हौ, कहुं पंडित बेद कहानी ।
कहूं कुमति कहुं सुमति बिराजत, केहु गति नाहीं जानी ॥
कहूं चोर कहुं साह कहावत, कहुं अदत्त कहुं दानी ।
कहुं हरि लेत देत पल छिन माँ, आहै अकथ कहानी ॥३॥

*भँवरा को कंवल से ऐसी प्रीत है कि जब वह उस पर बैठा कोई सुध बुध नहीं रहती यहाँ तक कि साँझ को जब कँवल बटुर कर संपुट हो जाता है तो भँवरा उसी के भीतर बंद होजाता है ।

कहूं दैत्त कहुं अहौ देवता, कहुं बिबाद रचि ठानी ।
कहुं रच्छा कहुं बद्ध करत हौ, केहू करत प्रधानी ॥४॥
माया प्रबल नचावत नाचत, निर्मल जोत निर्बानी ।
जगजीवन के सतगुरु साहब, चरन सुरति लिपटानो ॥५॥

॥ शब्द ५७ ॥

साहब तुम केते अधम उधारी ।
अजब रीझ तुम्हारि आहै, करि को सकै बिचारी ॥१॥
पतित अनंत गनै को कहँ लौं, लीन्ह्यो छिन महँ तारी ।
मैं कह कहौं बरनि नहिं आवै, बेद पुरान पुकारी ॥२॥
जेहि काँ आपन हित कर जान्यो, दीन्ह्यो सुख अधिका री ।
जब जब संकट पर्‍यो भक्त कहँ, लीन्ह्यो ताहि उबारी ॥३॥
जिन केहु गरब कीन भक्तन ते, तिन का गरब निवारी ।
निकटहिं बसत अहहु अंतर महँ, रहत जोत नहिं न्यारी ॥ ४ ॥
कहौं कर जोरि लेहु सुन मोरी, हमरे टेक तुम्हारी ।
जगजीवन गुरु चरन तुम्हारे, कबहुं न रहौं बिसारी ॥५॥

॥ शब्द ५८ ॥

साईं मोहिं भरोस तुम्हारा ।
मोरे बस नहिं अहै एकौ, तुमहिं करो निस्तारा ॥१॥
मैं अज्ञान बुद्धि है नाहीं, का करि सकौं बिचारा ।
जब तुम लेत पढ़ाय सिखावत, तब मैं प्रगट पुकारा ॥२॥

बहुतक भवसागर महँ बूड़त, तेहि उबारि कै तारा ।
बहुतन का जब कष्ट भयो है, तिन कै कष्ट निवारा ॥३॥
अब तौ चरन कि सरनहिं आयों, गह्यों मैं
पच्छ तुम्हारा ।
जगजीवन के साँईं समरथ, मोहिं बल अहै तुम्हारा ॥४॥

॥ शब्द ५९ ॥

साँईं चहहु करहु सो होई ।
जस चाहो तस नाच नचावो,
काह करै जग कोई ॥१॥
पैदा करत निपैद करत हौ,
दै हरि लेत हौ सोई ।
केहु धन माया बिदित देत हौ,
फिर छिन डारत खोई ॥२॥
केहु हूँ दीनं लीन सुमति ते,
अंतर ध्यान चरन रह टोई ।
कोई मरै बहै अपंथ महँ,
भे अनाथ नर लोई ॥३॥
अब बिस्वास आस है तुम्हरी
तकौं चरित कहि जात न कोई ।
जगजीवन का आपन जानहु,
सूरति राखौ छबिहिं समोई ॥४॥

॥ शब्द ६० ॥

काह कहौं कहि आवत नाहीं,
मन तन तुम पर वारी ॥टेक॥

देखत अहौं दूसरो नाहीं, एकै जोति तुम्हारी ।
केहु भरमाय देत माया महँ, केहु करत हितकारी॥१॥
देखत आहौं खेलत सब महँ, को करि सकै विचारी।
करता हरता तुमहीं आहौ, अजब बनी फुलवारी॥२
दासन दासा मोहिं जानिये, जानत अहौ हमारी ।
जगजीवन दास सीस दियो चरनन, कबहूं
नाहिं बिसारी ॥३॥

॥ शब्द ६१ ॥

आरति करौं सुनो मेरे प्यारे,
तुम गुनाह के मेटनहारे ॥ टेक ॥
बुद्धि हीन कछु गति नहिं जानौं,
कृपा करहु तब नाम बखानौं ॥१॥
सेस महेस ब्रह्म धर ध्याना,
वेहू नाहिं करि सकैं बखाना ॥२॥
अंत न खोज अगाध को गावै,
जेहि जस चह तस ध्यान लगावै ॥३॥
जगीजवन के बस कछु नाहीं,
दाया चरन बसहिं मन माहीं ॥४॥

॥ शब्द ६२ ॥

प्रभु जी चहौ सो तुम करहु ।
होय तुरत बिलंब नाहीं, जौन इच्छा धरहु ॥१॥
चहहु सुमेरहि करहु तिनका, कन सुमेरहि करहु ।
अहै सबै बनाव तुम्हरा, गिरहिं अधरै* धरहु ॥२॥
तीन लोक बनाउ चौथा, चहहु बिन कर मलहु ।
चहहु देहु बढ़ाइ दै कर, चहहु तौ फिर लरहु ॥३॥
चहहु पाल जियाइ करि कै, चहहु छिन महँ मरहु† ।
जगजीवन के सत्त गुरु तुम, बास गगनहिं करहु ॥४॥

॥ शब्द ६३ ॥

साईं कठिन भक्ति है तेरी ।
जिन काहू का सुमिरन आवा, जब किरपा भै तेरी ॥१॥
नहीं कबूलौ परत बंदगी, केतो कहत हौं टेरी ।
जिन काँ चहा लहा पै तिन हीं, मिट्यो भरम तेहि केरी ॥२॥
माला मुद्रा तिलक दिहे हैं, करि उपाय बहुतेरी ।
बैठि तपस्या करि जंगल माँ, ह्वै रह खाक कि ढेरी ॥३॥
मते मंत्र जेहि काँ कहि दीन्ह्यो, भै सुधि सत्य घनेरी ।
जगजीवन सतगुरु मिलि उतरे, बहुरि कराहिं
नहिं फेरी ॥४॥

*आसमान । †मारो ।

॥ शब्द ६४ ॥

साहब अजब कुदरत तोर।
देखि गति कहि जात नाहीं, केतिक मति है मोर॥१॥
नचत सब कोउ काछि नाचा, भ्रमत फिर बिन डोर।
होत औगुन आप ते, सब देत साहब खोर* ॥ २ ॥
कौल कै जग पठै दीन्ह्यो, तौन डार्यो तोर।
करत कपट संत तेती, कहैं मोरी मोर ॥ ३॥
ऐसि जग की रीति आहै, कहा कहिये टेर।
जगजीवन दास चरन गुरू के, सुरत करिये पोढ़ ॥४॥

॥ चेतावनी ॥

॥ शब्द १ ॥

अरे मन देहु तजि मतवारि।
जे जे आये जग्त महँ एहि, गये ते ते हारि॥ १ ॥
नहीं सुमिर्यौ नाम काँ, सब गयो काम बिगारि ॥
आपु काँ जिन बड़ा जान्यो, काल खायो मारि॥ २॥
जानि आपुहिं छोट जग, रहि रहौ डोरि सँभारि।
बैठि कै चौगान निरखहु, रूप छबि अनुहारि† ॥३॥
रहौ थिर सतसंग बासी, देहु सकल बिसारि।
जगजिवन सतगुरु कृपा करि कै, लेहैं सबै सँवारि॥४॥

॥ शब्द २ ॥

अरे मन समुझ करु पहिचान।
को तैं अहसि कहाँ ते आयसि, काहे भर्म भुलान ॥१॥

*दोष। †देखकर।

सुधि सँभार बिचार करिकै, बूझु पाछिल ज्ञान ।
नाचु एहि दुइ चारि दिन का, अचल नहिं अस्थान ॥२॥
लोक गढ़ एहु कोट काया, कठिन माया बान ।
लाग सब कें बचे कोउ नहिं, हस्यो सब का ध्यान ॥३॥
खबरदार बेखबर हो नहिं, ओट नाम निर्बान ।
जगजिवन सतगुरु राखि लेहैं, चरन रहु लिपटान ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

अरे नर का एहिं तकि बौराना ।
सुख परि कौल कीन तेहिं त्यागी,
मन माना मन जाना ॥ १ ॥
चला जात कोउ अचल नहीं है,
अबहूं समझ हैवाना ।
धोखा है तकि भूल फूल नहिं,
होइहि सबै बिराना ॥ २ ॥
दिन दुइ चार की संगत सब की,
ह्वैहै अंत चलाना ।
एत दिन रहि इतर भ्रम भीतर,
बिना भजन पछिताना ॥ ३ ॥
लेहु बचाय नचाय नाम गहि,
कहौं नियाये ज्ञाना ।
जगजीवन सब बृथा जानि कै,
धरहु चरन कर ध्याना ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४ ॥

मनुवाँ ऐसी प्रीति लगाव ।
ससि रूप जैसे चकोर निरखत, ऐसे चित्त मिलाव॥१॥
सूम के हित दाम ज्यौं नित, नेम कौड़ी भाव ।
अस लागि रहु रस पागि दुनियाँ, धंध सब बिसराव॥२॥
जुवा कामी रतै कामिनि, रैन दिन भरमाव ।
अस रहै लागी नहीं भूलै, दूरि दुबिधा भाव ॥३॥
बहुत सुत हित बाँझनी के, बसत हिरदय ठावँ ।
जगजिवन गुरु के चरन गहि रहु, भक्ति को अस नावँ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

मन तैं काहे का करत गुमान ।
रहहु अधीन नाम वह सुमिरहु, तोहिं सिखावौं ज्ञान॥१॥
आये जे जे फूलि भूलि गे, फिर पाछे पछितान ।
फिरि तौ कोई काम न आवा, ह्वै गा जबै चलान॥२॥
जो आवा सो खाकहिं मिलि गा, उड़ि उड़ि खेह उड़ान ।
बृथा गयो आय जग जनमें, जो पै नाहीं जान॥३॥
सुद्धि सँभारि सँवारि लेहु करि, अधरम करहु अड़ान ।
जगजीवनगुरुचरनगहेरहु, निरगुनतकु निरबान ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

मैं तैं जग त्यागि मन चलिय सिर नाई ।
नाम जानि दीन हीन करिये दीनताई ॥ १ ॥

अहंकार गर्ब ते सब गये हैं बिलाई ।
रावन के सीस काटि राम की दोहाई ॥ २ ॥
जिन जिन गुमान कीन मारि गर्दही मिलाई ।
साधि साधि बाँधि प्रीति ताहि पर सहाई ॥३॥
परसहु गुरु सीस डारि दुनिया बिसराई ।
जगजीवन आस एक टेक रहिये लगाई ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

अरे मन देहु सबै बिसराय ।
दीन ह्वै लवलीन करि कै नाम रहु लै लाय ॥१॥
नाम अमृत जपहु रसना गुप्त अंतर पाय ।
मैल छूटि कै होय निर्मल सुद्धि पाछिल आय ॥२॥
निर्गुनं निहारि निरखहु अनत नाहीं जाय ।
सीस दुइ कर परहु चरनन छूटि नाहीं जाय ॥३॥
सदा रहहु सचेत हेत लगाइ नहिं बिसराय ।
जगजीवन परकास मूरति सूरति सुरति मिलाय॥४॥

॥ शब्द ८ ॥

हमारा देखि करै नहिं कोई ।
जो कोइ देखि हमारा करिहै, अंत फजीहति होई।१।
जस हम चले चलै नहिं कोई, करी सो करै न सोई ।
मानै कहा कहे जो चलिहै, सिद्धि काज सब होई।२।

हम तो देह धरे जग नाचब, भेद न पाई कोई ।
हम आहन सतसंगी बासी, सूरति रही समोई ।२।
कहा पुकारि बिचारि लेहु सुनि, बृथा सब्द नहिं होई।
जगजीवन दास सहज मन सुमिरत, बिरले
यहि जग कोई ।३।

॥ शब्द ९ ॥

साधो समझौ मन ही माहीं ।
अजब तमासे हैं दुनिया के, कछु कहिबे को नाहीं।१।
अस्तुति करहिं भाव करि बहु बिधि, फिर
फिर निंदै कराहीं ।
मैं नहिं जानौ साँच कहतु हौं परिहैं नर्कहिं माहीं।२
मैं केतानि कौनि गनती महँ, कहा जात कछु नाहीं।
साहब समरथ दाया करिहैं, नाम बसत जेहि माहीं।३।
करै न निंदा मैं तैं त्यागै, दीन रहै मन माहीं ।
जगजीवन तेहि पर किरपा भै, बैठे अम्मर छाहीं॥४॥

॥ शब्द १० ॥

दुनिया जानि बूझि बौरानी ।
झूठै कहै कपट चतुराई, मनहिं न आनहि कानी॥१॥
नाहिं डरपत है सत्त राम कहं, ऐसे हहिं अभिमानी।
है बिबाद निंदा कहि भाखहिं, तेही पाप ते आगे हानी ॥२॥
जानत हैं मन मानत नाहीं, बड़े कहावत ज्ञानी ।
नवहिं नहिं न साधु ते दीनता, बूड़ि मुए बिनु पानी।।३॥

मैं तैं त्यागि अंतर माँ सुमिरै, परगट कहौं बखानी ।
जगजीवन साधन ते नय चलु, इहै सुक्ख कै खानी ॥४॥

॥ शब्द ११॥

साधौ कहा जो मानै कोई ।
जो कोइ कहा हमार मानिहै, भला ताहि कै होई ।१।
तजै गरूर पूर कहि बानी, मनहिं दीनता होई ।
तेहि काँ काज सिद्धि कै जानौ, सुखानंद तेहि होई ।२॥
अन्तर भजु केहुं दुक्ख देइ नहिं, मैं तैं डारै खोई ।
तेहि काँ राम सदा सुख दायक, सुद्धि ताहि कै लेई ।३।
परगट कहत अहौं गोहराये, जग ते न्यारे वोई ।
जगजीवन मूरति वह निरखा, सूरति रही समोई ॥४॥

॥ शब्द १२॥

दुनिया दुबिधा सबै परी ।
जाहि केर बनाव है सब भजत नाहिं घरी ॥१॥
पाइ दौलत धाम सुख परि मोर मोर करी ।
मारि कै जमदूत खूंदा सबै सुधि बिसरी ॥ २ ॥
मातु पितु सुत साथ ना कोइ चले लै पकरी ।
महा दुर्गति दूत कीन्ह्यौ सबै सुद्धि हरी ॥ ३ ॥
समुझि बूझि सँभार सूरति नाम चित्त धरी ।
जगजीवन ते पार उतरे नाम बल उबरी ॥ ४ ॥

॥ शब्द १३ ॥

मनुवाँ का तकि तैं बौराना ।
झूठे जग्त तमासा आहै, सुधि करु कृपानिधाना ॥१॥
देखु बिचारि कै फूलु भूलु नहिं, साईं बहु निर्बारी ।
छिन महँ एक बुन्द ते कीन्ह्यो, जग्त सबै बिस्तारी ।२।
देखि ऐसी जुक्ति रहिये, पलक नाहीं मारि ।
जैसे ससिहिं चकोर निरखत, दियो तन मन वारि ॥३॥
रहो दीन आधीन ह्वै कै, तमा* तजु कहि मारि
सांईं का तब दरद आइहि, लेहै सबै सँवारि ॥४॥
होहु थिर कहुं बहहु नाहीं, देहु दुबिधा डारि ।
जगजिवन गुरु के चरन परि कै, बिनय करैपुकारि ।५।

॥ शब्द १४ ॥

मन तुम काहे रसनि बिसराई ।
तब तो रसनि रही रर नी महँ, अब काहे गाफिलाई ॥१।
पाँच प्रचंड संग हैं तेरे, संग पचीस लेवाई ।
इन ते ऐंचि खैंचि नहिं आवै, जहाँ तहाँ उठि धाई ॥२॥
जुक्ति बाँधि करि लेहु एक करि, मैं तैं देहु छुड़ाई
चलि अस्थान जहाँ गुरु बैठे, रहहु बंदगी लाई ॥३॥
देखत रहहु दृष्टि नहिं टारहु, निर्मल जोति निरखाई।
जगजीवन सतगुरु के चरन गहि, रहिये
थिर ठहराई ॥ ४ ॥

*लालच ।

॥ शब्द १५ ॥

बैठि उजियारी देखि ले भाई ॥ टेक ॥

सतगुरु साहब गहे रहहु तुम, त्यागि देहु दुचिताई।
कर करु ध्यान दिया दाया करु, तेल तत्त भरि लाई ॥१॥
बाती ब्रह्म ताहि में भेंवहु, पारसलाइ अंधियारी जाई।
जगजीवन अस निरमल निरखहु, काहे काँ
जीव डेराई ॥ २ ॥

॥ शब्द १६ ॥

रहु सत साँईं राखु निहार ॥ टेक ॥
दिल खाक करु सब खाक है,
चढ़ु पवन दसहूं द्वार।
तहँ सोधि रहु छबि निरखि नैनन,
ससि भानु छबि तेहिं वार ॥ १ ॥
बैठि तहँ भ्रम त्याग करिकै,
मूरति अलख अधार।
जगजीवन यहि जुक्ति रहै तेहिं,
नाहिं बाँकहि बार* ॥ २ ॥

॥ शब्द १७ ॥

बौरे जामा पहिरि न जाना।
को तैं आसि कहाँ ते आइसि,
समुझि न देखसि ज्ञाना ॥ १ ॥

*बाल टेढ़ा न हो।

घर वहु कौन जहाँ रह बासा,
तहाँ ते किहेउ पयाना ।
इहाँ तौ रहिहौ दुई चार दिन
अंत कहाँ कहँ जाना ॥ २ ॥
पाप पुन्न की यह बजार है,
सौदा करु मन माना ।
होइहि कूच ऊँच नहिं जानसि,
भूलसि नाहिं हैवाना ॥ ३ ॥
जो जो आवा रहेउ न कोई,
सब का भयो चलाना ।
कोऊ फूटि टूटि गारत भा,
कोउ पहुंचा अस्थाना ॥ ४ ॥
अब कि सँवारि संभारि बिचारि ले,
चूका सो पछिताना ।
जगजीवन दृढ़ डोरि लाइ रहु,
गहि मन चरन अड़ाना ॥ ५ ॥

॥ शब्द १८ ॥

मन महँ अन्तर सुमिरहु नाम ।
कर्म अनेक कटहिं छिनमहियाँ, सुफलहोहिं दृढ़ काम ॥१॥
तजु परपंच दुष्टई झूठी, झूठे हैं गृह ग्राम ।
झूठे हैं सब नाम बिहूना, झूठे हैं धन धाम ॥ २ ॥

मात पिता भगनी भाई सुत, हित कुटुम्ब सुख बाम।
एहि आसा झूठे परि भूले, कोउ नहिं आयो काम॥३॥
गहि रहु जुक्ति जग्त ते न्यारे, सत संजोग बिस्राम।
जगजीवन निर्मल निर्भय ह्वै, दाग छूटि गा स्याम॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

मन महँ नाहिं बूझत कोय।
नहीं बसि कछु अहै आपन, करै करता होय॥१॥
कहत मैं तैं सूझि नाहीं, भर्म भूला सोय।
पड़े धारा मोह की बसि, डारि सर्बस खोय॥२॥
करै निंदा साध की, परि पाप बूड़े सोय।
अंत फजिहत होहिंगे, पछिताय रहिहैं रोय॥३॥
कहौं समुझि बिचारि कै, गहि नाम दृढ़ धरु टोय।
जगजीवन ह्वै रहहु निर्भय, चरन चित्त समोय॥४॥

॥ शब्द २० ॥

मन तैं नाहिं इत उत धाव।
रटत रहु दुइ अच्छर अंतर, अपथ गैल न जाव॥१॥
उहाँ ते निर्बिन्दु आयो, पिंड बासा गावँ।
चेति सुद्धि सँभार ले तैं, चूकु नाहीं दाव॥२॥
समुझि फिरि पछिताइ है, परि जोनि बहु डरुपाव।
सत्त सरसौं बाँटि उपटन, अंग अपने लाव॥३॥
छूटि मैलं होय निर्मल, नूर नीर अन्हाव।
जगजीवन निर्बान होवै, मिटै सब दुचिताव॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

आपु ते डारत आपु नसाई ।
कहूँ बिबाद कीन्ह भक्तन ते,पाछे मन पछिताई॥१॥
काहू क दोष देइ नहिं कोई, धाइ जरै जो जाई ।
साधु बिबेकी दाया राखत,रामहिं दरद न आई॥२॥
गर्ब-प्रहारी गुमान न राखैं, करै जानि जो जाई।
रावन औ हरनाकुस मारा,कछू बिलम्ब न लाई ॥३॥
नर केतान कवनि गिनती महँ,कीट कि नहिं समताई।
जो भक्तन ते बैर कियो है, अंत रसातल जाई ॥ ४ ॥
नहिं मानै तौ बूझति ले मन,कहत अहौं गोहराई।
जगजीवन जे दीन लीन मन,तिन पर सदा सहाई ॥५॥

॥ शब्द २२ ॥

दुनियाँ परि परिपंच न जानी ।
नहिं नय चलहिं गुमान लादे,बोलहिं बिष रस बानी॥१॥
सिद्ध साध कै निंदा करि,नहिं डेरु राम क मानी।
अंत भला नहिं आगे होइहि,दिन दिन होइहि हानी॥२॥
परिहैं अंतहिं घोर नरक महँ,कहैं सत ज्ञान बखानी।
तहाँ परे भुक्तहिं फिरि बहुतै,समौ बीति पछितानी ॥३॥
अहै उबार दीनता ह्वै चलि,गहि सत नाम निसानी।
जगजीवन गुरु चरनन लागे, निरखत छबि
निरबानी ॥४॥

॥ शब्द २३ ॥

देखहु रे बौरे नैन उघारि ।
काह कौल करि आयहु जग महँ,
अब कस डारेहु मनहिं बिसारि ॥ १ ॥
थिर ह्वै कोउ रहै ना पाइहि,
इहाँ बसेरा है दिन चारि ।
अइहैं दूत बाँधि लै जैहैं,
कोऊ नाहीं लगहि गोहारि ॥२॥
दौलत धाम छूटि सब जाइहि,
छुटिहैं मातु पिता सुत नारि ।
जगजीवन गुरु-चरन गहे रहु,
गाढ़ परिहि तौ लेहैं उबारि ॥३॥

॥ शब्द २४ ॥

यहि जियने का करु न गुमान ॥टेक॥
उतहि जन्म पाय नर देही,
भजन बिना को नहिं पछितान ।
दौलत धाम देखि कै भूल्यो,
बिसरि गयो वह पाछिल ज्ञान ॥१॥
ना थिर रहे नहीं थिर रहिहै,
जाइहि अंत करि सबै पयान ।
सैन समेत रावन गे छिन महँ,
तिनहूं के कछु रह्यो न निसान ॥२॥

अन्त काल सब कछु चलि जाइहिं, ।
चलि जैहे ससि-गन अरु भान ।
जगजीवन सब कछु चलि जाइहि,
रहिहै इक सत नाम निदान ॥३॥

॥ शब्द २५ ॥

मनुवाँ समुझि करहु तेवान* ।
जब तुम आयहु साईं पठवा, अब कस भयो हैवान ।१।
तब कोउ संग साथ नहिं कोऊ, जग आयहु निरबान।
अब हित लागि चाखि बिषया फल, फिरत
अहहु बौरान ॥२॥
भरमत फिरत नहीं थिर बैठत, बिसरि गयो अस्थान।
नाहीं सुद्धि पाछिली आवत, ता तें भयो गुमान॥३॥
हो सचेत अब जागि उलटि कै, निर्गुन करु पहिचान।
जगजीवन जुग जुग हहु संगी, सतगुरु चरन प्रमान।४।

॥ शब्द २६ ॥

सत्त नाम बिना मन कैसे पार तरिहौ ॥टेक॥
महा कठिन भर्म जार सूझै नहिं वार पार,
कहौ काह करिहौ ।
जुक्ति करहु चरन सरन लागि पागि,
नहिं तौ फाँसि परिहौ ॥१॥

*फ़िक्र ।

जे जे जग आये कोऊ नाहिं बाचे,
धीरज कौन धरिहै ।
जोगी जती सिद्ध साध,
कोऊ नाहिं रहिहै ॥ २ ॥
मिलि गये अमर भये ते जग्त आस,
चित्त ते सब दहिहै ।
जगजीवन दास गुरू पास,
जुगन जुग संग रहिहै ॥ ३ ॥

॥ शब्द २७ ॥

अरे मन समुझि बूझहु ज्ञान ।
भजहु अंतर मगन ह्वै कै, होउ नहिं हैवान ॥१॥
नाहिं वार औ पार है, करि जात नाहिं बयान ।
रच्यो रचना जानि कै, अस अहैं कृपानिधान ॥२॥
यहि भाँति ते सुख पाइहै, नाहिं होइ है नुकसान ।
देखु नैन पसारि कै, कोउ नाहिं अहै अजान ॥३॥
रहु दीन लीनं चरन ते, तजि देहु गर्ब गुमान ।
दिन चारि का जग है बसेरा, अन्त खाक समान ॥४॥
मरहु जीवत जियहु कछु दिन, मौत अहै निदान ।
जगजीवन ते अमर भे, गुरु चरन मन लिपटान ॥५॥

॥ शब्द २८ ॥

सुनु सखि तुम ते कहौं समुझाई ॥ टेक ॥
करु न गुमान बहुरि पछितैहै,
काहे क परसि भुलाई ।
तब तैं आइसि कौन कौल करि,
अब कस सुधि बिसराई ॥ १ ॥
जागि लागि लय नात नाह ते,
देहु त्यागि दुचिताई ।
एहु घर दिन दुइ चार का नैहर,
परिहौ पर घर जाई ॥ २ ॥
हँसि कहि बात घात तुम जनिहहु,
रहि मन महँ पछिताई ।
जगजीवन सत पिउ अंतर मिलु,
काहे क जीव डेराई ॥ ३ ॥

॥ शब्द २९ ॥

अरे मन रहहु चरन ते लागि ।
इत उत सकल देहु तुम त्यागि ॥१॥
दुइ कर जोरि कै लीजै माँगि ।
सोवत उठेव मोह ते जागि ॥२॥
नैन निरखि छबि रहि रस पागि ।
कर्म भर्म सब जैहैं भागि ॥३॥

जगजीवन अस रहि अनुराग।
जानु आपने तब हीं भाग ॥४॥

॥ शब्द ३० ॥

अरे मन जपहु मंत्र बिचारि।
नाहिं कोइ थिर अहै यहि जग, जिवन है दिन चारि॥१
आवत है जग जात आहै, देखु नैन पसारि।
जीव जंतु पसु पंछी तत्त, तैसई नर नारि ॥२॥
उठत बैठत रमत ठाढ़े, सोवत जगत सँभारि।
डोरि ऐसी रहहु लाये, जीति लेहु सँवारि ॥३॥
त्यागि मैं तैं हठ बिबादं, रहौ नय चालि हारि।
जगजीवन यहि जुक्ति तेनी,* चलहु आपुहि तारि॥४॥

॥ शब्द ३१ ॥

जो पै नाम रहै जप लाय।
तेहि के भागत कुल्ल बलाय॥१॥
तेहि का बौरा कहै सब लाय।
वहि का अंत न पावै कोय ॥२॥
बिन बोले जौ रहा न जाय।
तौ मन नाहिं अंतर ठहराय ॥३॥
रस रसना बिरले जन पाय।
अपने अंतर रहै छिपाय ॥४॥

*से।

पंडित काहे क पढ़ै पुरान ।
दुइ अच्छर आहै परमान ॥५॥
राति दिवस लहि करै पुकार ।
सत मत मंत्र न करै बिचार ॥६॥
जेहि मत अंतर मिल्यो है आई ।
कथा पुरान पढ़ब बिसराई ॥७॥
रटनि रसनि जेहि नाम की आई ।
तेहि का कछु जग नाहिं सधाई ॥८॥
नहीं तपस्या तिरथ अन्हाई ।
तेहि के दरस पाप कटि जाई ॥९॥
राम संत ते अंतर नाहीं ।
संत ते कबहूं न्यारे नाहीं ॥१०॥
जगजीवन कहै प्रगट पुकारी ।
अपने मन महँ लेहु बिचारी ॥११॥

॥ शब्द ३२ ॥

साधो जब ते यह तन थाको ॥टेक॥
सुत जन्मत सुख आस राखिकै, फिर नहिं कोउ काहू को ।
ऐंठि चलहि डरपहि नहिं मन ते, बचन सो मुंह से भाखो १
छूटी कानि लोक की मन ते, नारि नीच तन ताको ।
हँसै हँसावै जानि आपको, नहिं बिबेक को आँको २

नीच प्रसंग रंग ते रातहि, भ्रमत फिरत है डाको* ।
जो देख्यो सो कहत हैं परगट, नहीं गुप्त मैं राखो॥३

॥ शब्द ३३ ॥

हम समान नहिं कोऊ भाई ।
ऐसी जग की रीति देखिये, कहैं तो कहा न जाई॥१
ऐसी मति संसार की आहै, बातन की अधिकाई ।
सपनेहु रामहिं जानहिं नाहीं, झगरा नितहि बढ़ाई॥२
नित उठि करहिं दुष्टई सब कै, जिय महँ नाहिं डेराई।
करि बहु पाप कमाई नितहीं, सो पड़े नरक महँ जाई॥३
कहैं कि हम समान को आहै, थोरे धन इतराई।
गुन त्यागिन औगुन हित लागे, डारिन सबै नसाई॥४
दौलत दाम धाम सुख भूले, वह सुधि गै बिसराई।
पर्यो काम जब अंत न पायो, सब तजि चल पछिताई॥५
समुझि बूझि हक† राह चलहु रे, कहत अहैं गोहराई।
जगजीवन सब झूठे आहैं, नाम भजहु चित लाई॥६

॥ शब्द ३४ ॥

अरे मन लटकि अटकि रहु लागी ।
तजु परपंच कुशब्द कुसंगति, ह्वै सचेत उठि जागी॥१
दुनिया अंध धंध परि भूली, कठिन मोह कै आगी ।
तेहि परि जरि गै खाक उड़ाइहि, जुक्ति ते रँग रहु त्यागी॥२

*कूदता हुआ । †सत्य ।

नर नारी पसु पंछी जे जग, सब छेदा है साँगी ।
बचा न कोई बचाये सोई, नाम सरन रहु भागी॥३
दुइ कर जोरि यहै है अवसर, दरस लेहु बर माँगी ।
जगजीवन दै सीस चरन तर, मस्त रहहु रस पागी॥४

॥ शब्द ३५ ॥

दुनियाँ धंध लागि अरुझानी ।
हित मित चित्त लोभाइ रहत है, पाछिल सुद्धि हेरानी॥१
आयो जहँ से घर सो भूला, यहु घर रूधिर क पानी।
ताही उद्र साज कियो करता, ताही म आनि समानी॥२
डोरी पोढ़ि लगाइ निरगुन ते, अगिन म भे अस्थानी।
तेहि बल गलै जरै तन नाहीं, रहि दस मास सुखानी॥३॥
बाहर भयो गइ सुबुद्धि वह, भे अहंकार गुमानी ।
तीनिउ पन गे नाम बिहूने, अंत बूड़ि बिनु पानी॥४॥
कैसेहु नहीं मुग्ध नर चेतत, कहै सब्द यह बानी।
जगीजवन बचिहै पै सोई, चित्त चरन ठहरानी॥५॥

॥ शब्द ३६ ॥

बौरे समुझि देखु मन माहीं ।
माया देखि कै भूल फूल नहिं, तोर नहीं कछु आहीं॥१
दिना चारि का अहै पेखना, कोउ काहू का नाहीं।
सुधि बिसराय चेत नहिं कीन्ह्यो, अंत काल पछिताहीं॥२

देह धरे नर नाम न जान्यो, वृथा जियहि जग माहीं
जगजीवन भजु राम निर्भय ह्वै, रहिये चरनन माहीं ।३।

॥ शब्द ३७ ॥

साधो देखहु अपने मनहिं बिचारी ॥ टेक ॥
दिना चारि का यह है खाका,
सो तकि नहिं भूलहु संसारी ।
परि कै सुखद भरम नहिं भटकहु,
ह्वै सचेत रहु डोरि सँभारी ॥ १ ॥
नाम बिहून नीच सब हीं ते,
नीच ते नीच बहुत अधिकारी ।
जैसे खांड़ मीठ सब हीं कहँ,
अनहित लागत खारी ॥ २ ॥
करि बिबेक सों ज्ञान आपने,
जुक्ति बास करि सब ते न्यारी ।
जगजीवन अमृत रस दरसन,
पीवत रहहु सो नैन निहारी ॥ ३ ॥

॥ शब्द ३८ ॥

रटहु रसना नाम अच्छर फूलु भूलु न भाई ।
एक दिन दुख होइ है फिर रहैगा पछिलाई ॥१॥
कस न जीवत सुमिर मन महँ त्यागि दे गफिलाई ।
तजहु जग परपंच निन्दा करहु ना कुटिलाई ॥ २॥

यहि पाप ते जम दूत कसि हैं रहौगे खिसियाई ।
रहे नहिं कछु हाथ एकौ बाँधि लैकर जाई ॥३॥
लोग सबै कुटुंब सुत हित नारि भगनी भाई ।
पिता प्रीति लगाय रोइहै रहैगा अरुगाई* ॥ ४ ॥
भाई बर्ग सँग उहै। त्यागहि देहै सब बिसराई ।
दौलत धन धाम काम काज नहिं आई ॥ ५ ॥
छत्र पति औ नर पती सब झूंठि है प्रभुताई ।
जगजिवन दास नाम साँचा ताहि रहु लौ लाई॥६॥

॥ शब्द ३९ ॥

जनम पाइ जग जान्यो नाहीं ।
भाग बड़े ते पाइ देहँ नर,
सुधि गै भूलि पर्‌यो भव माहीं ॥ १ ॥
देखत खात पियत गाफिल मन,
सुख आनंद बहुत हरषाहीं ।
डोलत बोलत चलत अपथ पथ,
भरे मद अंध चेत कछु नाहीं ॥ २ ॥
मैं तैं मारि सँभारि न आवे,
अघ क्रम हित करि बहुत कमाहीं ।
तेहि पर गई सुद्धि बुधि सब कर,
पग थाके जब फिरि पछिताहीं ॥ ३ ॥

*अलगाय ।

साधो साधि सुरति दृढ़ करिये,

रहि रसि बसि छबि अंतर माहीं।

जगजिवन दास जगत ते न्यारे,

गुरु के चरन बिसरि नहिं जाहीं॥ ४॥

॥ शब्द ४० ॥

अरे मन बौरे समुझि बिचारु।

को तैं अहसि कहाँ ते आयसि, अब हूं डोरि संभारु॥१

बहसि न इत उत हूँ थिर रहि कै, सुकिरत नाम पुकारु।

नहिं कोइ अचलसबैचलिजाइहि, कछु नाहिं अहैकरारु॥२

काया कनक देह नर पायो, करि ले कछुक सँवारु।

समौ यही फिरि और न पैहौ, भजि कै अपुहि तारु॥३

लाये प्रीति रीति ऐसी रहु, सूरति छबि न बिसारु।

जगजीवन सतगुरु के चरनन, जानि सर्बसौ वारु॥४॥

॥ शब्द ४१ ॥

बौरे काहे का करत गुमान।

तोरे नाहिं कछु समुझि देखु मन,

चेतहु होउ न हैवान॥ १॥

दौलत धाम काम नहिं आइहि,

जब तजि है तन प्रान।

सुत पितु नारि बंधु औ माता,

तजि हैं एउ निदान॥ २॥

कस नहिं सब तजि भजु वहि नामहिं,
ये है सत्त प्रमान ।
जगजिवन दास जग से ह्वै न्यारा,
अंतर धरि रहु ध्यान ॥ ३ ॥

॥ शब्द ४२ ॥

साधो मन मन रहहु बिचार ।
निरखत रहहु परखि छबि देखत,
दृढ़ करि सुरति सँवार ॥१॥
सीतल ह्वै रहु धरु सँभारि पग,
तमा* तुजुक† तैं मार ।
पाँच बचाइ चलाइ लाइ रहु,
आपन चहसि सँभार ॥२॥
मैं तैं ई तौ अहं मद गलती‡,
एइ सब करत बिगार ।
तेहिं गरुवाई बोझ ते दाबे,
नाहीं होत सवार ॥३॥
कुमति प्रसंग पचीस एक सब,
जानि सर्बसौ वार ।
जगजीवन सब लै न्यारे रहु,
चरन औ रूप निहार ॥४॥

*लालच । †शान । ‡फंद, जाल ।

॥ शब्द ४३ ॥

ए मन त्यागि देहु गुमान ।
वहाँ ते करि कौल आयहु, नाहिं समुझत ज्ञान ॥१॥
छिया बिंदु का पहिरि जामा, हितं भयो हैवान ।
सुद्धि सोइ बिसारि दीन्हेव, कर्म आइ समान ॥२॥
भूलु नहिं तकि देखु सुख परि, अचल नहिं अस्थान ।
जाइगा चल रहहि ना कोइ, बाल बूढ़ जवान ॥३॥
सिद्ध साधं जती जोगी, करहिं एऊ पयान ।
अमर ते मरि जाइंगे चलि जाहिंगे ससि भान ॥४॥
जाइगा चल रहहि ना कछु गहहु पद निर्बान ।
जगजीवन मति निर्मलं धरु, रहहु अंतरध्यान ॥५॥

॥ शब्द ४४ ॥

मनुवाँ सत्त नाम ले गाई ।
दुनिया चली जात पल छिन छिन,
कोऊ न थिर ठहराई ॥१॥
नहिं करार दिन घरी बरस का,
केहु का जानि न जाई ।
मैं तैं करि अभिमान गुमानहिं,
सुख परि गे बौराई ॥२॥

कोउ काहु क नहिं मातु पिता हितु,
नारि बन्धु कुटुंबाई।
ये सब अपने काम स्वार्थ के,
अंत रहैं अरुगाई ॥३॥
ऐसे सूल काँठ ते छेड़े,
नहिं कोइ लेत बचाई।
जगजीवन सब बृथा जानिकै,
रहे चरन सिर नाई ॥४॥

॥ शब्द ४५ ॥

कलि जागत जे राम की कानि।
नहिं डरपत आहै मन माहीं भरम पड़े हैरानि ॥१॥
देत हैं दुख जानि दुखियहिं दरद नहिं मन आनि।
होयगी दरबार फजिहत मारि बूझहिं छानि ॥२॥
मारि मुगरिन मूड़ फोरहिं मानिहै न हैवान।
जन्म कर्म नसाइ जैहै होइ है सब हानि ॥३॥
डारि देहैं नरक महँ जहँ अग्नि है अधिकानि।
त्रास दुख अधिकार है कोउ नहिं उबारहि आनि ॥
पछिताइ है मन समुझि करि है बड़ी दुख की खानि।
देखि ज्ञान ते परख है तस कहत अहों बखानि ॥५॥
दीन लीनं नाम गहि रहु भर्म तैं नहिं मानि।
जगजीवन बिस्वास बसि गुरु चरन रहु लिपटानि ॥६॥

॥ शब्द ४६ ॥

साधो कठिन रीति कल माहीं ।
परपंचहिं माँ निसु दिन बीतत,
नामहिं सुमिरै नाहीं ॥ १ ॥
तब को हता गात नहिं काहू,
रह्यो उद्र जब माहीं ।
सूरति लाइ सत्त माँ राखिन,
जरे अगिन महँ नाहीं ॥ २ ॥
सो बिस्वास छाँड़ि सब दीन्हो,
पापै कर्म कमाहीं ।
सपनेहु समुझि बूझि नहिं आवै,
परि भव मोह बिलाहीं ॥ ३ ॥
जन्म देह उत्तम नर पायो,
सुधि बिहून कहँ जाहीं ।
गयो अकारथ नाम न जाना,
नहिं काहू महँ आहीं ॥ ४ ॥
साध का सब्द मानि जो लेहैं,
दाग न लागहि ताहीं ।
जगजीवन अंते अंतर नहिं,
भवसागर तरि जाहीं ॥ ५ ॥

॥ शब्द ४७ ॥

साधो कहत अहौं गोहराई ।
दोष देइ अपने करमन का,
डारत अहै नसाई ॥ १ ॥
बेपरतीत भयो मनहीं महँ,
दुबिधा रह्यो समाई ।
बिसरि गयो जिन पाले उद्र महँ,
अगिन ते लियो बचाई ॥ २ ॥
अब तब सों आपुहि सब ब्याकुल,
बूझि न मन महँ आई ।
बंधे अहहिं अंध ह्वै डोलहिं,
निकटहिं दूरि बताई ॥३॥
सत मत गहै रहै कौनिहु बिधि,
बकु मीनहिं टक लाई ।
जगजीवन यह जुक्ति भक्त भे,
जोति में रह्यो समाई ॥४॥

॥ शब्द ४८ ॥

साधो सुनु कल का ब्योहारा ।
अपने अपने आगी पानी,
जरत है सब संसारा ॥१॥

नाहीं सुधि अपने तन की है,
और क करहिं बिचारा।
ज्ञानिन काहँ कहैं अज्ञानी,
आपु बुद्धि अधिकारा ॥२॥
हैं बल छीन ते बली कहावैं,
हम तें नहिं अधिका रा।
अहैं अदत्त कहावैं दाता,
बूड़ि मुए मँझ धारा ॥३॥
कुमति प्रसंग सुमति नहिं आवै,
गहैं न नाम अधारा।
जगजीवन अंतर महँ सुमिरैं,
उतरैं भवजल पारा ॥४॥

॥ शब्द ४९ ॥

कोउ काहुइ दोष न देई।
जो करतब्य अहै आपुनि माँ, सो तैसहि फल लेई ॥१॥
जो दुख देय दुक्ख सो पावे, सुख दे सुख तेहि होई।
हाजिर राम अहैं सबहिन महँ, गर्ब न भूलै कोई ॥२॥
रावन ऐसे छत्री ह्वै गे, तेहि सम भयो न कोई।
इन जब बैर कीन्ह भक्तन तें, डार्यो छिन महँ खोई।३।

लंका कनक सो खेह* उड़ानी, जैसे मैल गधाई† ।
पुत्र लाख सवा लख नातो, तिन के रहा न कोई ॥४॥
नर केतानि कवनि गिनती महँ, कहत सब्द सत सोई ।
जगजीवन अंतर महँ सुमिरहु, सूरति बिलग न होई ॥५॥

॥ शब्द ५० ॥

मन तन खाक करि कै जान ।
नीच तें ह्वै नीच तेहि तें, नीच आपुहि मान ॥१॥
त्यागु मैं तैं दीन ह्वै रहु, तजहु गर्ब गुमान ।
देतु हौं उपदेस याहै, निरखु सो निरबान ॥२॥
कर्म धागा लाय बाँधा, हिंदु मूसलमान ।
खैंचि लीन्ह्यो तोरि धागा, बिरल कोइ बिलगान ॥३॥
खाक है सब खाक होइहि, समुझि आपन ज्ञान ।
सब्द सत कहि प्रगट भाषैं, रहहि नाम निदान ॥४॥
काल को डर नाहिं तिन्ह काँ, चौथ‡ रहि चौगान ।
जगजीवन दास सतगुरु के, चरन रहि लिपटान ॥५॥

॥ शब्द ५१ ॥

भाई रे कहा न मानै कोई ।
जिहिं समुझाय कै राह बतावों,
मन परतीत न होई ॥ १ ॥

*ख़ाक । †सोने की लंका की ख़ाक इस तरह उड़ी जैसे मिट्टी या कूड़ा करकट गधे पर ढो कर ले जाने से उड़ता है । ‡चौथे लोक में ।

कपट रीति कै करहिं बंदगी,
सुमति न व्यापै सोई।
भये नर होन कुमारग परि कै,
डारिन सर्बस खोई ॥ २ ॥
गे भरुहाय* तनिक सुख पाये,
मैं तैं रहे समोई।
फिरि पछिताने कष्ट भये पर,
रहे मनहिं मन रोई ॥ ३ ॥
देखि परत नैनन से वैसे,
कठिन जीव है वोई।
जगजीवन अंतर महँ सुमिरै,
जस होई तस होई ॥ ४ ॥

॥ शब्द ५२ ॥

आपु क चीन्हहु रे भाई,
बिन चीन्हे नहिं सुख पाई।
जिन जिन काहू आपु क चीन्हा,
उठि तहँ कहँ पहुंचे जाई ॥१॥
वह घर बिसरा जहँ ते आयहु,
परपंचहिं हिताई।†
जामा मैल पहिरि मद माते,
मैं तैं पर बौराई ॥२॥

*उबल पड़े। † अच्छा लगता है।

कछू बिचार मनहिं नहिं आयो,
जहँ तहँ अरुझै जाई ।
झक्का झोरी ऍंचा तानी,
जहँ तहँ गये बिलाई ॥३॥
ऐसी कुगति अहै दुनिया की,
नाम सरन बिन रहे पछिताई ।
सतगुरु मते मंत्र जेहि दीन्ह्यो,
अम्मर भे चरनन सिर नाई ॥४॥
जगजीवन जुग जुग[†] जुग[‡] बंधा,
निरखत है निरमल निरथाई[§] ॥५॥

॥ शब्द ५३ ॥

साधो करै बिबाद नहिं कोई ।
अपने मते मंत्र महँ लागहु, भजत रहहु मन सोई ॥१॥
कस्यप कंस रावना कौरो, तिन के रहा न कोई ।
और कै कौन केतनि बपुरा है, कन प्रमान है सोई॥२॥
ज्ञानी पंडित जोगी भोगी, सिद्ध साध जो होई ।
सब निर्बाह नाम तें आहै, गर्ब किहे गा खोई ॥३॥
अंतर भजै मारि कै मैं तैं, चरनन चित्त समोई ।
जगजीवन भजु और आस तजि, जस
होई तस होई ॥४॥

[†] जुगान जुग । [‡] जोड़ा [§] अथाह ।

॥ शब्द ५४ ॥

बौरे नाम रटु मन लाय ।
खैंचि घट में आनिये कहुं नाहिं देत बहाय ॥१॥
कुसँग संगति कुटिल बौरे संग बैठु न धाय ।
ताहि पारस बेधि है तब होइ है गफिलाय ॥ २ ॥
तजहु गर्ब गुमान मैं तैं हिये रहु दिनताय* ।
त्यागि दे बकवाद बकना गहे रहु सितलाय† ॥३॥
देत हैं उपदेस परगट कह्यो संतन गाय ।
जगजीवन बिस्वास करि कै रहु चरन लिपटाय॥४॥

॥ शब्द ५५ ॥

यहि जग महँ बंदे गरीब ह्वै रहना ।
साँईं तें चित लाउ रे बंदे ।
तजि दे गर्ब गुमाना ॥ १ ॥
कनक कोट लंकापति रावन,
सोऊ खाक समाना ।
पाँच पचीस एक नहिं आवत,
ता तें फिरत भुलाना ॥ २ ॥
सुमति मती जे छिमा साधु हैं,
तिन हरि काँ पहिचाना ।
जगजीवन जीवत ते प्रानी,
जिन हरि चरनन ध्याना ॥ ३ ॥

*दीनता । †शीतलता ।

॥ शब्द ५६ ॥

संतो गहहु सुरति सँभारि ।

वहि समय जो किहिन है उन, सो सुधि
दिह्यो बिसारि ॥१॥

इहाँ तौ कोउ नाहिं थिर है, रहैगा दिन चारि ।
खाइ लेहै काल सब कहँ, जैसे मूस मजारि* ॥२॥

भाइ भगनी मातु पितु, परिवार हितु सुत नारि ।
अंत कोउ ना काम अइहै, कोउ न लेहि उबारि॥३॥

जानि बृथा मन नाम सुमिरौ, कहत सब्द पुकारि ।
जगजीवन गुरु चरन गहि रहु, सोई लेहि उबारि ॥४॥

॥ शब्द ५७ ॥

साधो सत्त नाम जपु प्यारा ॥ टेक ॥

सत्त नाम अंतर धुनि लागो, बास किहे संसारा ।
ऐसे गुप्त चुप्प ह्वै सुमिरहु, बिरले लखै निहारा ।१।

तजहु बिबाद कुसंगति सबकै, कठिन अहै यह धारा ।
सत्त नाम कै बेड़ा बाँधहु, उतरन काँ भव पारा ॥२॥

जन्म पदारथ पाइ जक्त महँ, आपुन मरहु सँभारा ।
जगजीवन यह सत्त नाम है, पापी केतिक तारा॥३॥

॥ शब्द ५८ ॥

मन तुम भजहु नामहि नाम ।

तारि लीन्ह्यो बहुत पतितन उत्तमं अस नाम ॥१॥

---

*बिल्ली ।

गह्यो जिन परतीत करिकै भये तिन के काम।
मिटे दुख संताप तिन के भयो सुख आराम ॥२॥
देखि सुख परि भूल नाहीं दौलत औ धन धाम।
अहै यह सब झूंठ आसा नाहिं अवहि काम ॥३॥
चढ़हु ऊंचे नीच ह्वै कै गगन है भल ग्राम।
जगजिवन दास निहारि मूरति चरन करु बिस्राम॥४॥

॥ शब्द ५९ ॥

अरे मन करहु नाम तें प्रीति।
सीतल सूसील मारग चलहु ऐसी रीति ॥१॥
त्यागि दे बकवाद निंदा आचलनि* आनीति†।
पाइ काया कनक की यह नाम बिनु ज्यों भीति॥२॥
आइ यह मृतु लोक में पछितानि करि आनीति†।
मारि कालं खाइ लीन्ह्यो समुझि समय बितीति ।३।
जुक्ति यहि जग बास करु रहु जक्त बेपरतीति।
जगजीवन बिस्वास करि गुरु चरन रहु सत सीति ॥४॥

॥ शब्द ६० ॥

बैठि रहहु मन चरनन पास।
काहे क भरमत फिरहु उदास ॥ १ ॥
राखहु दुइ कर सीस लगाइ।
सोवत जागत बिसरि न जाइ ॥ २ ॥
निरखहु निर्मल जोति निहारि।
नहिं उनकी सम कोउ अनुहारि‡॥ ३ ॥

*कुचलन। †अनीत। ‡सूरत।

रवि ससि रूप डारि तैं वारि।
रहु सत मति गहि डोरि सँभारि ॥ ४ ॥
ब्रह्मा रहे बेद धुनि लाइ।
संकर अंग में भस्म लगाइ ॥५॥
बिस्नु जाइ मन तहाँ समानि।
सो अब कहि नहिं जात बखानि ॥ ६ ॥
जग महँ काया है उद्यान*।
जो आये सो सबै भुलान ॥ ७ ॥
रहनि राम गहि नाम कि आस।
उदित साध ते भये प्रकास ॥ ८ ॥
जगजीवन करु गगन मँडान।
निरखहु सतगुरु सो निरबान ॥ ९ ॥

॥ शब्द ६१ ॥

डोरि पोढ़ि लागि रहै अंतर के माहीं ॥
निरखि परखि लै लगाय लखै कोउ नाहीं।
गगन सहर लै दुकान बैठहु थिर ताहीं ॥१॥
सेस ब्रह्मा बिस्नु संकर जोति निरमल वाहीं।
भानु बिन बिहान है तहँ ससि गन नाहीं ॥ २ ॥
पवन पानी तें बिहून कनि मनि बरसाहीं।
जग जीवन प्रकास सतगुरु सीस चरन रहहीं।३।

*सैर की जगह।

॥ शब्द ६२ ॥

साधो कहौं तो कहा न जाई ।

अनुचित चरित देखि दुनिया के, मन महँ रहौं चुपाई१

जहवाँ चर्चा होत नाम कै, काहू नाहिं सोहाई ।

परपंची कछु औरहि भाषैं, बहुत करहिं कुटिलाई ॥२॥

सुख के फल ते खाइ न पाइन, बिष रस बहुत हिताई ।

किहिन बिगार है जन्म जन्म का, परे नर्क महँ जाई ३

खाय अघाय फूलि कै बैठे, गर्ब करहिं अधिकाई ।

सुमति पराय* परचित ह्वै बैठे, कुमति प्रगट में आई४

मैं तैं गर्ब गुमान त्यागि कै, नय चालहु दिनताई ।

जगजीवन डर नाहिं काल का, लेहै नाम बचाई ॥५॥

॥ शब्द ६३ ॥

अरे मन करहु सत्त बिचार ।

समुझि बूझि कै जानि आपन, बृथा है संसार ॥१॥

नीर बुंद तें साज कीन्ह्यो, एतो है बिस्तार ।

नगर उत्तम बनो आहै, सोइ न वारा पार ॥२॥

तहाँ के परधान पाँचो, करहिं बहु अपकार ।

संग ताहि पचीस नारी†, किहेहु नहिं ब्योहार ॥३॥

मिलि चलहु बस करहु तीसौ‡, संग लै कै सिधार ।

जगजिवन दास गुफा गगन महँ, निरखि छबिहि नियार ॥४॥

---

*भाग गई । †प्रकृति । ‡पाँच तत्व और पचीस प्रकृति ।

॥ शब्द ६४ ॥

मन बिनु समुझे नाहीं होय ।

महा अपरबल अहै माया, भूलि रहे सब कोय॥१॥

सुख आनँद में पर्यो गाफिल, डारि सर्बस खोय ।

अंत काल पछिताय रहे हैं, चले कर मलि रोय ॥२॥

नाहिं काहु क अहै कोऊ, कहै आपन सोय।

पुछिहै कछु कीन्ह करतब, बहुत फजिहत होय ॥३॥

डोरि पोढ़ि लगाय रहि जग, नाहिं पूछै कोय।

जगजिवन दास चरन गहि मन, अचल अम्मर होय॥४॥

॥ शब्द ६५ ॥

मन रे प्रभु सों चित्त लगाव ।

छाँड़ि दे जंजाल जक्त को,
गुरु मारग माँ आव ॥१॥

गुरु के बचन हृदय धरु मूरख,
ज्ञान ध्यान मन लाव।

अष्ट कमल दल भीतर राजा,
पाँच तत्त को राव ॥२॥

त्रिकुटी मध्य दृष्टि करु नैनन,
ताड़ी तहाँ लगाव ।

मणि समान दीपक करु मनसा,
जोति में जोति मिलाव ॥ ३ ॥

मन औ पवन होत जब इकतर*,
नाहीं बीच बराव।
जगजीवन के प्रभु सिर नायक,
आनँद मंगल गाव ॥ ४ ॥

॥ शब्द ६६ ॥

सत्त नाम सुमिरहु मन माहीं ॥टेक॥
यह तौ बजार है पाप पुन्न को।
नेकी बदी दुइ सौदा बिकाहीं ॥ १ ॥
केहु नेकी केहु बदी बनिज करि।
सो बिसाहि अपने घर माहीं ॥ २ ॥
जगजिवनदास जे नाम बनिज किया।
अमर भये ते मरहीं नाहीं ॥ ३ ॥

॥ शब्द ६७ ॥

ए मन काहे क पर्यो भुलाइ।
काहे डार्यो सुधि बिसराइ ॥ १ ॥
जब तुम आयहु करि इकरार।
तब तुम नाहीं कीन्ह बिचार ॥ २ ॥
छिया बुंद माँ रह्यो समाइ।
तब हूं नाहीं कछू चेताइ ॥ ३ ॥
जामा पहिरि भयो मस्तान।
रह दस मास न किह्यो तेवान† ॥ ४ ॥

*एक रस। †फ़िक्र।

जख्यो नहीं अगिनी महँ अंग ।
बाहर होत भयो चित भंग ॥ ५ ॥
गोद लाय फिरि दूध पियाई ।
जुवा में जुवती बहुत हिताई ॥ ६ ॥
कामी करम गयो सब भूले ।
मुक्के खात रहहु गे भूले ॥ ७ ॥
वृद्ध भयो तब सुद्धि सँभारि ।
तब नहिं सुमिरन जात सँवारि ॥ ८ ॥
कफ खाँसी औ सीत सताइ ।
सँवरि सँवरि* तब रहि पछिताइ ॥ ९ ॥
उलटि लगाय रह्यो दृढ़ डोरी ।
कहों सिखाय रह्यो मन मोरी ॥ १० ॥
जगजीवन सत मत गहि डोरी ।
ससि चकोर ज्यों रहि टक जोरी ॥ ११ ॥

॥ शब्द ६८ ॥

साधो भजहु नाम मन लाइ ।
बहुरि नहीं अस औसर पाइ ॥ १ ॥
अब के चूका चूका सोइ ।
बहुरे नाहिं सँवारहि कोइ ॥ २ ॥

*सुमिर।

माया मोह तकि सबै भुलाना ।
अंत काल सोई पछिताना ॥ ३ ॥
राजा रंक छत्र-पति सोई ।
बिनु वह नाम गये ते रोई ॥ ४ ॥
बुरा न मानहु कहहुं पुकारी ।
देखु आपने मनहिं बिचारी ॥ ५ ॥
यहि ते उत्तम अरु कछु नाहीं ।
धन वै दास अहैं जग माहीं ॥ ६ ॥
जगजीवन कहि प्रगट पुकारी ।
जिन सुमिरा तिन लिया कुल तारी॥७॥

॥ शब्द ६९ ॥

जग की कही जात नहिं भाई ।
नैनन देखि परखि करि लीन्ह्यौ, तऊ न रह्यो चुपाई॥१
आहै साँच झूठ कहि भाषहिं ,झूठेह साँच गोहराई ।
ताहि पाप संताप परैंगे, भर्म परे ते जाई ॥२॥
निंदा करत हैं जानि बूझि कै, जहाँ तहाँ कुटिलाई।
जानत अहैं बनाउ ताहि का, देइहि ताहि सजाई।३।
मैं तौ सरन हौं ताहि चरन की, सूरति नहिं बिसराई ।
जगजीवन है ताहि भरोसे, कहै सो तैसे जाई ॥४

॥ शब्द ७०॥

प्रात नाम सतगुरु का गावै ।
अंतै मनुवाँ नाहिं बहावै ॥ १ ॥

मनुवाँ बहै भजन नहिं होय ।
जाइहि भजन बरत सब खोय ॥ २ ॥
दृढ़ ह्वै अंतर जपिये जापा ।
जेहि तें जाहिं कर्म कटि पापा ॥ ३ ॥
अजपा जाप जपै जो कोई ।
परगट कहौं भक्त सो होई ॥ ४ ॥
साधू भये सोई जग माहीं ।
जैसे पदुम कमल जल माहीं ॥ ५ ॥
जग तें न्यारे भये निरासा ।
जगजीवन तेहि चरन क दासा ॥ ६ ॥

॥ शब्द ७१ ॥

करहु बंदगी बंदे सोई ।
जेहि तें अंत भला कछु होई ॥ १ ॥
तजहु बिबाद न निंदा करहू ।
दीन होय मन अपने रहहू ॥२॥
मत सो सत मैं देउँ बताई ।
भजहु नाम यहि जुक्ति तें जाई ॥ ३ ॥
त्यागि देहु मन गरब गुमान ।
तौ भल मानहिं कृपानिधान॥४॥

साध कहत औ बेद पुरान ।
सत्त सब्द याहै परमान ॥ ५ ॥
दुइ अच्छर गहहू तत सार ।
याहै सत मत कीन बिचार ॥ ६ ॥
जगजीवन चरनन लिपटान ।
निरखहु छबि निरगुन निरबान ॥ ७ ॥

॥ शब्द ७२ ॥

मन मदमाते फिरहिं बेहाल ।
अंत भयो धरि खायो काल ॥ १ ॥
तत्त ज्ञान मन कीन बिचार ।
सुकृत नाम भजु होय उबार ॥ २ ॥
यह उपदेस देत हौं सोई ।
देह धरे कछु दुक्ख न होई ॥ ३ ॥
बेद ग्रंथ ज्ञान लियो छानी ।
चेत सचेत ह्वै लीजै जानी ॥ ४ ॥
जगजीवन कहै परगट ज्ञान ।
उलटि पवन गहि धरि रहु ध्यान ॥ ५ ॥

॥ शब्द ७३ ॥

जिन मन गह्यो नामहिं जानि ।
त्यागि दुबिधा रहे दृढ़ ह्वै, और नाहिं उर आनि ॥ १ ॥
हर्ष सोक नाहिं आहै, नाहिं लाभ न हानि ।
नाहिं छूटत रहत जोरे, साध भे निर्बानि ॥ २ ॥

अहैं बिरले जगत माँ यहि, कवन मैं केतानि ।
जगजीवन निर्बान भा मन, पदुम पात ज्यों पानि॥३॥

॥ शब्द ७४ ॥

साधो दुइ अच्छर तत सार ।
सोई रटत रहौ घट भीतर,
और न करहु बिचार ॥ १ ॥
जिभ्या जपु नहिं कर माला नहिं,
सहज रमहु संसार ।
कहहु न प्रगट भेद काहू तें,
होइहि कहे बिगार ॥ २ ॥
सुच औ असुच न मानहु एकौ,
सहज अचार बिचार ।
ऐसी रहनि गहनि करि रहिये,
मिलन न लावहु बार ॥ ३ ॥
कहौं पुकार बिचार लेहु मन,
और न मत अधिकार ।
जगजीवन बिस्वास करै सुनि,
उतरि जाय भव पार ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७५ ॥

मन तुम रहहु चरनन लागि ।
काहू की नहिं करहु आसा, देहु सरबस त्यागि।१।
रह्यो सोवत बहुत दिन लहि, सुखद बहु हित लागि।
गुरू जब उपदेस दीन्हो, चौंकि उठि तब जागि २

जुगन जुग सँग नाहिं छूटै, लेहु यह बर माँगि ।
निरखि सूरति रहहु लागे, भींज रँग रस पागि ।३।
निरगुनं निरबान निरमल, डोरि सत मन लागि ।
जगजीवन यहि जुक्ति तें, तब जानु आपन भागि ।४।

॥ शब्द ८६ ॥

नाम सुमिर मन बावरे,
कहा फिरत भुलाना हो ॥ टेक ॥
मट्टी का बना पूतना*,
पानी सँग साना हो ।
इक दिन हंसा चलि बसै,
घर बार बिराना हो ॥ १ ॥
निसि अँधियारी कोठरी,
दूजे दिया न बाती हो ।
बाँह पकरि जम लै चलै,
कोउ संग न साथी हो ॥ २ ॥
गज रथ घोड़ा पालको,
अरु सकल समाजा ही ।
इक दिन तजि चल जायँगे,
रानी औ राजा हो ॥ ३ ॥
सेमर पर बैठा सुवना,
लाल फर देख भुलाना हो ।

*पुतला ।

मारत टोंट भुआ उधिराना,
फिरि पाछे पछिताना हो ॥ ४ ॥
गूलर कै तू भुनगा,
तू का आय समाना हो ।
जगजीवन दास बिचारि कहत,
सब को वहँ जाना हो ॥ ५ ॥

गुरु और शब्द महिमा

॥ शब्द १ ॥

अब जग हमहिं सिखवत आनि ।
करत हैं चतुराइ बहु बिध, अहैं पाप की खानि ॥१॥
कहूं सिखि सुनि लिहिनि बातैं, कहत अहैं बखानि ।
आप का कछु चेत नाहीं, भजन की है हानि ॥ २ ॥
करत नहिं अंदेस भूले, अहहिं ते अभिमानि ।
अन्तहूं पछिताइ हैं, फिर डूबिहैं बिन पानि ॥ ३ ॥
भजहु नाम गुनाह मेटहि, सरन आपनि आनि ।
जगजिवनदास बचाउ इहि, गुरुसब्दकहि परमानि ॥४॥

॥ शब्द २ ॥

जे जन नाम भजि बलवान ।
ताहि केवल कोइ नाहीं, कौन मारै मान ॥ १ ॥

रहत निरखत पलक छिन छिन, नाम बहु निर्बान ।
चाखि पीवै जिवै जुग जुग, काल देखि डेरान ॥२॥
कहत कथा प्रगास करि कै, जुगन जुग का ज्ञान ।
उतरि गा सो पार कामन, जानि मानि प्रमान ॥३॥
ताहि कीरति कवन गावै, कहत बेद पुरान ।
जगजीवन बिस्वास करि, गुरुचरन तें लिपटान ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

यहि बन बनत नाहिं बनाये ।
नाहिं है निर्बान कबहूं,
नाम बिनु बहु गाये ॥१॥
पाँच एइ परपंच डारहिं,
रात दिन भरमाये ।
कवन हटकै कहै के नहिं,
लेत अहहिं नसाये ॥ २ ॥
पास लिहे पचीस कतियाँ,
खात अहहिं धराये ।
जुक्ति डारी लाइ कै,
तौ रमहु इन्हहिं फँदाये ॥ ३ ॥
चढ़िकै सिखरहिं* जिकिर† लावहु,
सुरति मूरति लाये ।

*चोटी । †सुमिरन ।

जगजीवन निर्बान भे,
ते दरस गुरु के पाये ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४ ॥

साधो अस समौ बहुरि न होई ॥ टेक ॥
लेहु बिचारि सँभारि डोरि गहि,
यहि तें मंत्र न कोई।
भजहु जानि परतीत आनि मन,
सुफल सिद्ध सब होई ॥ १ ॥
जिन नहिं जाना सो पछिताये,
रहे मनहिं मन रोई।
काह भयो नर की काया धरि,
बृथा जन्म गा खोई ॥ २ ॥
जागे भागि पागि रस माते,
पल छिन नाहिं बिछोई।
जगजीवन भवसागर तरिगे,
मूरति रहे समोई ॥ ३ ॥

॥ शब्द ५ ॥

मन जग जन्मि कै भजि लेहु।
चूकि ना यह पाय औसर,
फिरि दोष ना केहु देहु ॥ १ ॥

धाम दौलत बहुत दुनियाँ,
किहिनि जानि सनेहु ।
गयो निज पछिताय कै,
सब झूठ सुत हितु गेहु ॥ २ ॥
आइ जे जे जगत महँ,
यहि भयो ते ते खेहु ।
नाम बिनु कछु काम का नहिँ,
ज्यौं गल्यो कागद मेंहु* ॥ ३ ॥
करहु मन परतीत अपने,
चित्त चरनन देहु ।
जगजिवन दुख सुख दूर होइहि,
अमर जुग जुग होहु ॥ ४ ॥

॥ शब्द ६ ॥

यहि जग नाम भजे तरि गये ।
आप जग महँ देह धरि कै, भक्त ते ते भये ॥१॥
जौन लागी रही पुर्बुज, तौनि अंतर गये ।
ताहि रस ते प्रगट भाखौ, जबहिं मस्त भये ॥२॥
रहि सँभारे डोरि लाये, दूरि दुबिधा किये ।
निरखत रहे निहारि निर्मल, सीस चरनन दिये॥३॥
गावत हैं बेद ग्रंथहु, नाम महिमा किये ।
जगजीवन बिस्वास गहे, ते अमर जुग जुग भये ॥४॥

*बरसात ।

॥ शब्द ७ ॥

मनुवाँ जोग करै नहिं जाना।
चौक चौतरा बैठि रहै का,
अन्तै करत पयाना ॥ १ ॥
धावत आवत थिर न रहतु है,
दृढ़ नाहिं करत अड़ाना।
तीनि तें आस निरास होत नहिं,
तातें फिरत भुलाना ॥ २ ॥
गुरु गुनि मंत्र लेहु बैठि सिखि,
अचल रहहु ठहराना।
लावहु सीस चरन में देखि कै,
झलकत छबि बिनु भाना* ॥ ३ ॥
पास बास रस पाइ मस्त ह्वै
सतगुरु के मन माना।
जगजीवन अम्मर ह्वै जोगी,
परगट कियो बखाना ॥ ४ ॥

॥ शब्द ८ ॥

रहु मन नाम तें लौ लाय।
नाम तें जे नाहिं राते, गये ते पछिताय ॥ १ ॥
नाहिं दौलत धाम भूलै, प्रभुइ दीन्ह बनाय।
जबहिं साइं खैंचि लेहै, कहाँ कहँ दहु जाय ॥२॥

*सूरज।

गर्ब तजहु गुमान मैं तैं, चलहु कै दिनताय।
चहहु कछु दिन भला आपन, देत अहैं लखाय।३।
अहै परगट नाहिं गुप्तं, बूझि जैसी आय।
जगजीवन बिस्वास करि, गुरु चरन रहु लिपटाय॥४॥

॥ शब्द ९ ॥

साधो कठिन है उदयान ॥ टेक ॥

नहीं है कछु अंत यहि का, आइ सबै भुलान।
पियो यह रस बिसरि गावत, नाहिं करहि तेवान* ।१।
मरत नहिं मैं केहू बिधि तें, करत है नुकसान।
नहिं बिचारै परे जारै, बिसरि गा औसान ॥२॥
इहाँ के नहिं उहाँ के भे, बीच बीच बिलान।
समौ बीते काम का नहिं समुझि कै पछितान ।३।
समुझि डोरी नाम की गहि, गगन कीन्ह पयान।
जगजिवन गुरु के पास पहुंचे, निरखि तकि निर्बान।४।

॥ शब्द १० ॥

प्रभु जी आपनो मोहिं जानि।
औगुनं अनेक मेटि कै, चरन सरनहिं आनि ॥१॥
भ्रमत मन यहु नाहिं थिर है, होत भजन कै हानि।
मोरि बपुरे केरि कह बसि, नाहिं मानत कानि॥२॥
चहत आहौं करौं सुमिरन, अवर अवरै ठानि।
संत पर जेहिं कियो किरपा, दियो सत मत छानि।३।

---

*फ़िक्र।

पाइ रस सो मस्त ह्वै गे, निर्मल भे निर्बानि ।
जगजीवन गुरु मंत्र दीन्ह्यौ, चरन रहे लिपटानि ।४।

॥ शब्द ११ ॥

अजब यहि नगर केर सबाँर ।

अहै काया सहर जा को, नाहिं वारा पार ॥१॥
दरवाज नौ दस बंद आहैं, साजि किये करतार ।
तहँ लोक तीनिउँ चौथ जगमग, सूक्रतं बाजार ।२।
तहँ झरत मन-मनि सस्त ह्वै, लै पाइ नित्र अहार ।
संतोष होइ पै तृप्ति नाहीं, मिलि होय नाहिं निनार ।३
ब्रह्म बिस्नु महेस सेसं, एक चित निरधार ।
निर्बान निर्मल जोति चमकै, निर्गुनं निरंकार ॥४॥
तहँ दिप्त वारौं भानु ससि की, बिदित है अबिकार ।
तहँ सुद्धि नाहीं बुद्धि नाहीं, सब्द की टकसार ।५।
अस जानि पाइ छिपाइ कोइ कोइ, बिरल है संसार ।
जगजिवन गुरु के चरन गहि रहु, आगे सुन्नंकार ।६।

॥ शब्द १२ ॥

सुनु सुनु सखि री, चरन कमल तें लागि रहु री ॥टेक॥
नीचे तें चढ़ि ऊँचे पाउ ।
मंदिल गगन मगन ह्वै गाउ ॥ १ ॥

दृढ़ करि डोरि पोढ़ि करि लाव।
इत उत कतहूं नाहीं धाव ॥ २ ॥
सत समरथ पिय जीव मिलाव।
नैन दरस रस आनि पिलाव ॥ ३ ॥
माती रहहु सबै बिसराव।
आदि अंत तें बहु सुख पाव ॥ ५ ॥
सन्मुख है पाछे नहिं आव।
जुग जुग बाँधहु एहै दाँव ॥ ५ ॥
जगजीवन सखि बना बनाव।
अब मैं काहु क नाहिं डेराँव ॥६॥

॥ शब्द १३ ॥

बौरे समुझि देखहु ज्ञान।
महा अपरबल अहै माया, अंत काहु न जान ॥१॥
पवन औ जल किये धरती, किये गन ससि भान।
लगे सब टकसार अपनी, खँभ बिनु असमान ।२।
देखु नैन पसारि अचरज, प्रगट नाहिं छिपान।
जहाँ जसि है तहाँ तसि है, तहाँ तसि धर ध्यान ।३।
सब्द ज्ञान गरंथ बेदं, करहिं सबै बयान।
जिन किये छिन महँ बुन्द तेनी*, ऐसे कृपानिधान।४।
दुइ अंक अजपा जपहु अंतर, तजहु सबै तेवान।
जगजीवन बिस्वास चरनं, करहिं वै औसान ।।५।।

* से।

॥ शब्द १४ ॥

चित्त नित्त रहै लागि पलक नाहिं छूटै ॥टेक॥
तागा ज्यौं उगिलि मकरी पुष्ट नाहिं टूटै ।
ऐसी यह जुक्ति पाइ ध्यान नाहिं मीटै ॥ १ ॥
नैनन तें उलटि निरखि सत समाय लीटै ।
संग गुरु प्रसंग ताहि कबहुं नाहिं फूटै ॥ २ ॥
पाँच औ पचीस पाइ लाइ जुक्ति कूटै ।
जगजिवनदास दरस मोती हंस चोंच लूटै ॥ ३ ॥

॥ शब्द १५ ॥

अरे मन गुरु चरन नहिँ त्यागु ।
हर्ष सोक बिसार, दृढ़ सत नामहीं अनुरागु ॥१॥
सूत सेज न मोह माया, चौंकि चेतनि जागु ।
छाँड़ि दे सब जग्त आसा, उलटि तेहि तें लागु॥२॥
गगन जगमग वारि रवि ससि, निरखि रस लै पागु।
सीस दै कर जोरि कै तहँ, भक्ति ही बर माँगु ॥३॥
अमर मरु नहिं आउ नहिं जा, रैनि बासर लागु।
जगजिवनदासं पास ह्वै रहु, सर्ब जागह भागु ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

सब जग मैं मैं करि के भुलाना ।
आनि परे बसि यहि माया महँ,
सुधि नहिं पाछिल आना ॥ १ ॥

अरुझे धंध अंध मद-माते, बिसरि गयो यह ज्ञाना।
निसु दिन परपंचहिं माँ बीतत, छिन पल
राम न जाना ॥ २ ॥
फूले धाम देखि धन दौलत, संत सब्द नहिं माना।
लीन्ह्यौ खैंचि कै भान जोति ज्यौं, मिटि गा
गर्ब गुमाना ॥ ३ ॥
कस न बिचारि सँभारि गहै मन, जानै सकल बिराना
जगजीवन यहि जुक्ति जग्त रहि, तेहिं कां
नहिं नकसाना ॥ ४ ॥

॥ शब्द १७ ॥

करिये निरबान ध्यान चरनन लपटाई ॥टेक॥
इत उत देखि नैनन सोँ चित्त ना बहाई।
गगन बैठे मगन रहिये मंत्र द्यों सिखाई ॥ १ ॥
तीर्थ तहवाँ बासु मूरति छबि जल अन्हाई।
नेग कर्म भर्म छूटि छिनहिं निर्मल है जाई ॥ २ ॥
बिना नीर पिंड उदित उजियर तहँ दीपक बिनु छाई।
अनूप रूप सुन्दरं ससि भानु जाहिं छिपाई ॥३॥
अस कर हम न साखि सो गुरु सत ना बिसराई।
जगजिवनदास संत गुप्तं प्रगटहिं गोहराई ॥ ४ ॥

॥ शब्द १८ ॥

अरे मन चरन तें रहु लागि।
जोरि दुइ कर सीस दैकै, भक्ति बर ले माँगि ॥ १॥

और आसा झूंठि आहै, गर्म जैसे आगि।
परहिंगे सो जरहिंगे, पै देहु सर्ब तियागि ॥ २ ॥
समौ फिरि एहु पाइहै नहिं, सोउ नहिं गहि जागि।
चेतु पाछिल सुद्धि करिकै, दरस रस रहु पागि ॥ ३ ॥
कठिन माया है अपरबल, संग सब के लागि।
सूल तें कोइ बचे बिरले, गगन बैठे भागि ॥ ४ ॥
भर्म नहिं तहँ भयो निर्भय, सत्त रत बैरागि।
जगजीवन निर्बान भे, गुरु दया जागे भागि ॥५॥

॥ शब्द १९ ॥

जब सुन सब्द मानै कोय ॥ टेक ॥

लाभ दिन दिन सुखित होवै, हानि कबहुँ न होय।
देखि करि तेहिं मुक्ति नाहीं, नर्क परिहै सोय ॥१॥
सब्द भाखै करै साँचा, सत्त सत्त समोय।
पहुंच गे वे गगन घर माँ, काल खाय न कोय ॥३
तहँ बैठि है निर्बान सतगुर, चरन गहि रहि सोय
जगजिवन ते अमर जुग जुग, आवा गवन न होय।४

॥ शब्द २० ॥

मन मैं मारि आगम जान।

तोरु तैं यह बज्र धागा, होइहै नकसान ॥ १ ॥
गर्ब और गुमान छाँड़हु, तजहु और तेवान।
नाहिं थिर सब खाक होइहि, चलत जैसे भान ॥२॥

पाँच और पचीस लैकै, साँच भीतर आन ।
लाव धागा रहौ लागा, गगन कर मंडान ॥ ३ ॥
तहाँ सतगुरु बैठु तेहि ढिंग, निरखि करु पहिचान ।
जगजिवन चरनन सीस दै रहु, अनत करु न पयान ।४।

॥ शब्द २१ ॥

अरे मन रहहु रटना लाइ ॥ टेक ॥
नाहिं छूटै प्रीति कबहूं, छाँड़ि दे गफिलाइ ।
जग्त माया जार बंधा, अंध सूझि न आइ ॥१॥
ह्वै सचेत अचेत हो नहिं, लेहु आपु बचाइ ।
चढ़हु गढ़ जहँ गगन गुरु हैं, बैठु थिर ह्वै जाइ॥२॥
है मवासं पास चरनन, काल का डर नाहिं ।
जगजिवनदास निहार मूरति, तकहु इक-टक लाइ३

॥ शब्द २२ ॥

मन इह नाम बिसरि न जाय ॥टेक ॥
मूल मंत्रं इहै आहै, दियो ज्ञान बताइ ।
नाम समता नहीं है कछु, अंत काहु न पाइ ॥१॥
नाम बल ससि भानु रथ, चढ़ि अधर गगन उड़ाइ ।
नाम को बल पाइ हनुमँत, लंक जाय्यो जाइ ॥२॥
सेस ब्रह्मा बिस्नु संकर, रहे ताड़ी लाइ ।
जगजीवन बिस्वास करि, गुरु चरन रहु लिपटाइ३

॥ शब्द २३ ॥

मन तुम करहु गगन मँडान ।
त्यागि दे सब जग्त आसा, निरख से। निर्बान॥१
सिद्ध साध औ कहत जोगी, भला है अस्थान।
मारि आसन बैठु दृढ़ ह्वै, अनत करु न पयान ॥२
बैठि रहिये पास सतगुर, देखि सिखिये ज्ञान ।
रहहु ऐसे लागि जुग जुग, मानिये परमान ।।३।।
देखि नैनन चाखि अमृत, रहिय ह्वै मस्तान ।
जगजीवन सतगुरू चरनन, सीस करु कुरबान ॥४॥

॥ शब्द २४ ॥

गुरु बलिहारियाँ मैं जाउँ ।। टेक ।।
डोरि लागी पोढ़ि, अब मैं जपहुं तुम्हरा नाउँ ।
नहीं इत उत जात मनुवाँ, गगन बासा गाउँ ।।१।।
महा निर्मल रूप छबि सत, निरखि नैन अन्हाउँ ।
नहीं दुख सुख भर्म ब्यापै, तप्त नीचे आउँ ।।२।।
मारि आसन बैठि थिर ह्वै, काहु नाहिं डेराउँ ।
जगजिवन निर्बान भे, सत सदा संगी आउँ । ३।।

॥ शब्द २५ ॥

मे ार दिल भयो मतवारा ।
मैं तौ प्रभु के चरनन लाग्यो, बाउर कहै संसारा ।।१॥
अधर बैठि अमृत रस पीवौं, नाम कै करत पुकारा ।
जगजीवन सतगुर को भेंटे, उतरे भव जल पारा॥२॥

॥ शब्द २६ ॥

साधो सुमिरन भजन करो।
मन महँ दुबिधा आनहु नाहीं, सहजहिं ध्यान धरो ॥१
धीरज धरि संसय नहिं राखहु, नाम भरोसे रहो।
जगजीवन सतगुरु को भेंटो, भवजल पार तरो ॥२॥

॥ शब्द २७ ॥

देखो री जोगिया रहत कहाँ।
तीनि लोक महँ माया बसत है,
चौथे लोक रहत है तहाँ ॥ १ ॥
अरध सिंहासन बनो अहै री,
जोगी बैठि रहत है तहाँ।
जगजीवन संतन महँ खोजो,
कर बिचार अपने मन महाँ ॥ २ ॥

॥ शब्द २८ ॥

यहु मन गगन मंदिल राखु।
सब्द की चढ़ देखु सीढ़ी, प्रेम रस तहँ चाखु ॥१॥
रहहु दृढ़ करि मारि आसन, मंत्र अजपा भाखु।
मते गुरुमुख होहु तहवाँ, जग्त आस न राखु ॥२॥
पाँच बसि कसि बैठि रहिकै, मानु कबहुं न माखु।
ईस अहहि पचीस इन कै, सदा मन हित वाखु ॥३॥
देहु सब बिसराइ करिकै, एही धंधे लागु।
जगजिवनदास निरखि करिकै, नयन दर्सन माँगु ॥४

॥ शब्द २९ ॥

नामहिं बड़े भाग तें पायो।

नेग जन्म लहि भर्मत बीता,

सूझि बूझि नहिं आयो ॥१॥

अब की सँवारु इहै करै का,

जो बिगार करि आयो।

किरपा करि निरबाह करन कहँ,

अवसर भल इह पायो ॥ २ ॥

हूक चूक होत मन मोरे,

जब तब रहि बिसरायो।

अब निःसंक नाहिं डेर लागत,

जब तें मंत्र सिखायो ॥ ३ ॥

अजपा जपि चढ़ि गयो गगन कहँ,

सतगुर दरस दिखायो।

जगजीवन बिस्वास बास भे,

चरनन सीस लगायो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३० ॥

मैं देख्यों निरखि निहारि सुरति पर वारी ॥टेक॥

भा बिस्वास पास बासा करि,

दुनिया सकल बिसारी।

चमकत दृष्टि बरनि नहिं आवै,

बिनु दीपक उजियारी ॥ १ ॥

नीर पिंड बिनु रूप बिराजत,
रबि ससि की छबि वारी।
अस निर्गुन निर्बान अमूरति,
सिव बिरंच लाये ताड़ी ॥ २ ॥
सब्द कहत अस प्रगट पुकारे,
बिरले कोउ जन लेहिं बिचारी।
जगजीवन के सतगुरु समरथ,
सीस ताहि के चरनन वारी॥ ३ ॥

॥ शब्द ३१ ॥

चरनन में लागी रहिहौं री ॥ टेक ॥
और रूप सब तिरथ बतावै,
जल नाहिं पैठ नहैहौं री ॥
रहिहौं बैठि नयन तें निरखत,
अनत न कतहूं जैहौं री ॥ १ ॥
तुमहीं तें मन लाइ रहिहौं,
और नहीं मन अनिहौं री।
जगजीवन के सतगुरु समरथ,
निर्मल नाम गहि रहिहौं री॥ २ ॥

॥ शब्द ३२ ॥

सुरति बसी मन नाम फिरत मतवारी॥ टेक ॥
चित तौ लाग्यो अपने पिय सों,
डग मग पाँव न जात सँभारी।

अंतर देखि चुपाइ रहिउँ मैं,
सूरति तुम्हरी रहिउँ निहारी ॥ १ ॥
सूरति पर मूरति वह साँची,
सो मैं रहि हैाँ नाहिं बिसारी ।
जगजीवन सतगुरु कै मूरति,
सो मैं रहिउँ सँभारी ॥ २ ॥

॥ शब्द ३३ ॥

थनत न कतहूं अनत न जाय ।
देखहु चरन सरन ठहराय ॥ १ ॥
नीचे तकत ऊँचे काँ जाय ।
गगन मंडल माँ तब ठहराय ॥ २ ॥
बिन कर चरन पकरि कस जाय ।
सिर नहिं माथ रहै लपटाय ॥ ३ ॥
स्रवन बिहूना सुनि धुनि आय ।
नैन बिहून दरस तकि पाय ॥ ४ ॥
जगजीवन अस मत जेहिं आय ।
मिलि सत मत तब सिद्ध कहाय ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३४ ॥

साधो कहै तो कहा न जाय ।
आपन घर मत कोइ न बूझै,
हमहिं कहै समुझाय ॥ १ ॥

पंडित जोगी दंडी तपसी,
बहु बिबाद करैं धाय ।
नाहिन नाम की ओर गही तिन्ह,
तिरथ बर्त लौ लाय ॥ २ ॥
नाहिन काहू जीत कहाँ लहि,
कहँ लहि कहै समुझाय ।
करै जाइ तस जेहिं जस भावै,
भुग्तै तैसे आय ॥ ३ ॥
बिरला कोई भजन करतु है,
चाल चलै दिनताय ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति,
चरन रहे लपटाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३५ ॥

महिमा प्रभु मो सों बरनि न जाय ॥ टेक ॥
अनहद बानी मूरति बोलै, सुनहु संत चित लाय ।
अनहद ताल पखावज बाजै, तहाँ सुरति चलि जाय ॥१॥
अवर न रूप कहाँ लहि बरनौं, सब छबि रहे समाय ।
जगजीवन साँई कहँ लहि बरनौं, रहे चरनचितलाय २

॥ शब्द ३६ ॥

थीरत ब्रत की तजि दे आसा ।
सत्त नाम की रटना करि कै,
गगन मँडल चढ़ि देखु तमासा ॥ १ ॥

ताहि मँदिल का अंत नहीं कछु,
रबी बिहून किरिन परगासा ।
तहाँ निरास बास करि रहिये,
काहे क भरमत फिरै उदासा ॥ २ ॥
देउँ लखाय छिपावहुं नाहीं,
जस मैं देखेउँ अपने पासा ।
ऐसा कोऊ सब्द सुनि समुझै,
कटि अघ कर्म होइ तब दासा ॥ ३ ॥
नैन चाखि दरसन रस पीवै,
ताहि नहीं है जम की त्रासा ।
जगजिवन दास भरम तेहि नाहीं,
गुरु के चरन करै सुक्ख बिलासा ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३७ ॥

चलु चढ़ौं अटरिया धाई री ।
महल म टहल करै नहिं पाई,
करिये कौन उपाई री ॥ १ ॥
यहँ तौ बैरी बहुत हमारे,
तिन तें कछु न बिसाई री ।
पाँच पचीस निस दिन संतावहिं,
राखा इन अरुझाई री ॥ २ ॥
साँईं तौ निकट बैठि सुख बिलसहि,
जोतिहि जोति मिलाई री ।

जगजीवन दास अपनाय लेहिं वै,
नाहीं जीव डेराई री ॥ ३ ॥

॥ शब्द ३८ ॥

नाम बिनु केहि काम का कह जोवनं संसार॥टेक॥
आपनो जग कहत आहै कठिन माया जार॥ १ ॥
लाग धागा गरे बाँधे नाहिं छूटनहार ॥ २ ॥
दास बास बिस्वास जगतं निरखि रूप निहार॥३॥
जगजीवन कोइ अहैं बिरले उतरि होवैं पार ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३९ ॥

नाम रटि रटत तृकुटी गगन चढ़ि आयऊँ ॥टेक॥
मैं तैं पचीस पाँच डोरि एक लायऊँ ।
मैं तौ रँग संग भयो सीस ताहि नायऊँ ॥ १ ॥
सतगुरु से पाय भेद जगत नाहिं आयऊँ ।
मिटेव अँधकार, ज्यों भानु भे प्रकास, निरखि
दृष्टि आयऊँ ॥ २ ॥
जुगति किये रहै ऐसी प्रगट सो बतायऊँ ।
जगजिवन दास अम्मर भे जुग जुग जस गायऊँ ॥३॥

॥ शब्द ४० ॥

भक्त जक्त त्यागि जागि लागि चरन रहु रे ॥टेक॥
जग प्रसंग ध्यान भंग जानि छानि तजु रे ।
रहु इकंत तंत* लागि जानि नाम गहु रे ॥ १ ॥

*तत्व ।

पाँच औ पचीस डोरि पोढ़ि बाँधि रहु रे ।
साधि चित्त नित्त भाव चरनन गुरु परु रे ॥२॥
रहि निहारि निरखि रूप अनत नाहिं टरु रे ।
जुक्ति जोग भक्ति का उपदेस ऐसे करु रे ॥ ३ ॥
पाय खा अघाय अमी जुग जुग नहिं मरु रे ।
जगजिवन दास आस राखु नाहिं फाँस परु रे॥४॥

कर्म भर्म निषेध और उपदेश सतगुरु व शब्द भक्ति का ।

॥ शब्द १ ॥

हे मन थकहु तो तकहु निसान ।
बैठहु मंडफ लाय धुनि धूनी, अनत करु न पयान१
पाँच पचीस लगाय धागा, बाँधि रहु ठहरान ।
नैन दरसन नीर पीवै, चाखि भे मस्तान ॥ २ ॥
नाहिं दुख सुख पवन पानी, नाहिं ससि नहिं भान ।
नाहिं ब्रह्मा सिवं सक्ती, निर्गुनं निरबान ॥ ३ ॥
दियो दुइ कर सीस चरनन, नाहिं भावै आन ।
जगजीवन ते भये गुर मुख, अमर जोग दृढ़ान ।४।

॥ शब्द २ ॥

कर न सुमिरिनी लेहु, अंतर धुनि लावहु रे ।
मैं तैं माला डारि देहु, तुम दीन लीन है गावहु रे ॥१॥

जो मनुवाँ करि खाक रहहु, वहि काहेक लगावहु रे* ।
चंदन चरन टेक रहु निर्भय, काहेक भौजल आवहु रे २
एहु उपदेस कहि तुमहिं सुनावहुं, मन
अँदेस बिसरावहु रे ।
जगजीवन दास निहारि निरख कै, मुरति म
सुरत मिलावहु रे ॥ ३ ॥

॥ शब्द ३ ॥

साँईं मोहिं सब कहत अनारी ।
हम कहँ कहत अजान अहैं येइ, चतुर सबै संसारी १
अहै अभेद भेद नहिं जानत, सिखि पढ़ि कहत पुकारी।
देखि करत सो आवत नाहीं, डारिन भजन बिगारी २
कहा कहौं मन समुझि रहत हौं, देख्यौं दृष्टि पसारी।
समुझाये कोइ मानत नाहीं, कपट बहुत अधिकारी३
बिरले कोइ जन करत बंदगी, मैं तैं डारत मारी ।
जगजीवन गुरु चरन सीस दै, निरखत रूप निहारी४

॥ शब्द ४ ॥

संतन कह्यौ रमज† से बानी ।
तत्त सार बताय दीन्ह्यो, काहू भेद न जानी ॥१॥
बहुतक अंधे बंधे माया, आहहिं गर्ब गुमानी ।
समुझाये जे समुझत नाहीं, होइहि तिन की हानी२

*जब मन को खाक कर डाला तो भभूत लगाने का क्या काम है ।

†भेद ।

साधन को गति कहि नहिं आवै, केहि
मुख कहौं बखानी ।
जगजीवन चरनन तें लागे, निरखि जोति निर्बानी ॥३॥

॥ शब्द ५ ॥

दुनियाँ हमहिं सिखावत ज्ञान ।
आपु तौ भवजाल भूले, हमहिं कहै हैवान ॥ १ ॥
गुनन तें मन गूंथि करि कै, करत प्रगट बखान ।
नाहिं बूझत सूझ नाहीं, लागि नहिं हिय बान ॥२॥
धाइ धाइ सिखाइ औरै, दोऊ भरम भुलान ।
करत अहिं अस देखि नैनन, प्रगट भाखौं ज्ञान॥३॥
बहुत फूलि कै भूलि परि हहिं, होइ है नुकसान ।
जगजीवन जानत अहै सब, नाहिं कछू छिपान॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

साधो नाम भजन जिन ठाना ।
केतो कोइ समुझाय सिखावत,
मनहिं न आवत आना ॥ १ ॥
तीरथ ब्रत और दान तपस्या,
नाहीं एको माना ।
सब बिसराइ मनहिं नहिं आवत,
ध्यान धरै निर्बाना ॥ २ ॥
निरखत निर्मल जोति सदा वै,
तज दिये पानि* पखाना† ।

---

*पानी । †पत्थर ।

तस आचार बिचार हैं उनके,
काहू गति नहिं जाना ॥ ३ ॥
सतगुरु पासहिं बास किहे हहिं,
नाहीं और तेवाना* ।
जगजीवन गुरु चरनन लागे,
आपुहिं करैं निभाना† ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो बिन किरपा भक्ति न होय ।
रात दिन जो करै बंदगी, कबूल परै नहिं सोय॥१॥
जग्य दान उदान‡ बास करै, कंदमूरि भखि सोय ।
बरत रहै असनान तीरथ, भक्ति तबहुं न होय ॥२॥
पढ़ै चारौ बेद बिद्या, ज्ञान कबिता होय ।
मौन ह्वै कै लाय तारी, भक्ति तबहुं न होय ॥ ३ ॥
काया कासी जाय कल्पै, डारि सर्बस खोय ।
द्वारिका भुज लेय छापा, भक्ति तबहुं न होय ॥४॥
मुड़ाइ मूड़ औ पहिरि माला, भ्रमत फिरै सब कोय ।
घीच§ तूरै करि तपस्या, भक्ति तबहुं न होय ॥५॥
पंच अग्नि तन दहि झूल झूला, पवन भच्छै सोय ।
बाँह तूरै रहहि ठाढ़े, भक्ति तबहुं न होय ॥ ६ ॥
लाइ अंग बिभूति जोगी, नारि रत नहिं होय ।
तजै माया मुलुक सर्बस, भक्ति तबहुं न होय ॥ ७ ॥

---

* फ़िक्र । † निबाह । ‡ पाँच मुख्य पवन जिन से शरीर की स्थिति है यह हैं–प्रान, अपान, व्यान, उदान, समान । §प्रानायाम में चिबुक लगाना ।

कृपा भै दिनताइ आई, सुमन मन भा सोय ।
जगजिवन डोरी लाय पोढ़ी, रह्यो चरन समोय॥८॥

॥ शब्द ८ ॥

साधौ नाम चाखि बौराना ॥ टेक ॥
लागे रहैं चरन तें निसि दिन, भावै और न आना ।
तजो अचार बिचार जगत को, सब तें रहि बिलगाना १
उन कै गति कोउ जानत नाहीं, को करि सकै बखाना ।
मरि कै अमर भये हैं सोई, भये हैं सिद्ध निमाना॥२॥
हेत आस नहिं राखैं काहू, गुरु निरखहिं निरबाना ।
जगजीवन वै साँई मिलिगे, परगट करहुं बखाना॥३॥

॥ शब्द ९ ॥

साधौ देखहु अंतर माहीं ।
भाँवरि भवन दिहे रहि रहिये,
अवर अहै कछु नाहीं ॥ १ ॥
बड़ बिस्तार अहै काया का,
अंत खोज कछु नाहीं ।
जिन खोजा पाया काया महँ,
बहुतेक भर्म भुलाहीं ॥ २ ॥
पाँच पचीस डोरि बसि करिये,
चक्षु गुरु आहै ताहीं ।

जगजीवन निर्वानी मूरति,
मिलिगे सूरत माहीं ॥ ३ ॥

॥ शब्द १० ॥

बहुतक देखी देखा करहीं ।
जोग जुक्ति कछु आवै नाहीं,
अंत भर्म महँ परहीं ॥ १ ॥
गे भरुहाइ* अस्तुति जेइ कीन्हा,
मनहिं समुझि ना परई ।
रहनी गहनी आवै नाहीं,
सब्द कहे तें लरई ॥ २ ॥
नहीं बिबेक कहै कछु औरै,
और ज्ञान कथि करई ।
सूझि बूझि कछु आवै नाहीं,
भजन न एकौ सरई ॥ ३ ॥
कहा हमार जो मानै कोई,
सिद्धि सत्त चित धरई ।
जगजीवन जो कहा न मानै,
भार† जाय सो परई ॥ ४ ॥

॥ शब्द ११ ॥

साधौ भक्ति सहजहिं ध्यान ।
मनहिं व्यापत साँचु नाहीं, कहा प्रात अन्हान ॥१॥

---

*उबल पड़े । †भाड़ ।

कहा कंठो कंठ बाँधे, सेल्हि मुद्रा कान ।
कहा माला लै सुमिरनी, हिये नहिं पहिचान ॥ २ ॥
कहा तिलक लिलार दीन्हे, गूदरी निरबान ।
कहा भस्महिं अँग लाये, नाम नाहीं जान ॥ ३ ॥
कहा ब्रत तप दूध पीवे, त्यागि गृह बिलगान ।
कँदमूरहिं खाहिं जंगल, नाहिं जो बहु ज्ञान ॥४॥
ठाढ़ बैठे घींच तूरहिं, तकत हैं असमान ।
बृथा सब परतीत बिनु है, भ्रम भूले हैवान ॥ ५ ॥
खोज काया करहु थिर मन, त्यागि कपट सयान ।
भजहु अंतर नाम वाहै, राम सत्त प्रमान ॥ ६ ॥
लाउ रसना नाहिं बिसरै, प्रगट करु न बखान ।
जगजीवन बिस्वास निरमल, होहु जैसे भान ॥७॥

॥ शब्द १२ ॥

बौरे मन को नहिं भरमाव ।
तीन लोक के करता साँईं, ताहि सौं ध्यान लगाव॥१
तीरथ कोटि साज जिन कीन्हेउ, सो संतन हिये आव।
चढ़ि कै गगन देखु सूरति को, ताहि काँ सीस नवाव॥२॥
सूरति सत्त प्रेम रस पानी, ताहि में चित अन्हवाव ।
अमर होहु भवसागर उतरहु, नाहिं आवहु नहिं जाव३
सतगुरु सत्त कहा यहि बानी, अलख नाम
धुनि लाव ।
जगजीवन साहब की छबि में, आपनि सुरति समाव४

॥ शब्द १३ ॥

मन गृह ग्राम यह अस्थान ।
सात दीप नव खंड पृथ्वी, सिर उर तेहि माँ जान ॥१॥
तीनि लोक बिस्तार है तेहिं, रमत गन ससि भान ।
चौथ इहै बनाय दीन्ह्यौ, संत राखत ध्यान ॥ २ ॥
दरवाज नौ दस प्रगट आहैं, काहु तें न छिपान ।
रमत तेहि के ब्रह्म भीतर, नहीं कहुं बिलगान ॥३॥
काया भीतर खेल खेलहु, अनत करु न पयान ।
बाहर तौ सब देखिबे को, घट अहै सो प्रमान॥४॥
कहत हौं उपदेस छोंडु अँदेस रहु ठहरान ।
जगजीवन निर्बान सतगुरु, चरन रहु लिपटान ॥५॥

॥ शब्द १४ ॥

मन तुम रहहु चरन सरनाई ।
यहि काया का अंत खोज नहिं, काहू भेद न पाई॥१॥
तीनि लोक काया रचि दीन्ह्यौ, चौथा दीन्ह बनाई ।
तीरथ कोटि अहैं याही मैं, संतन दीन्ह बताई ॥२॥
अजपा जाप जपत रहु निसु दिन, प्रगट न देहु जनाई।
इहि तें मंत्र नहीं है एकौ, भर्म न परहु भुलाई ॥३॥
सेस महेस बिस्नु औ ब्रह्मा, रहे हैं ध्यान लगाई ।
निर्गुन निरंकार वह मूरति, तेहि माँ रहौ समाई ॥४
रहु ठहराय गगन करु बासा, निरखि देखु निरथाई ।
जगजीवन सतगुरु की सूरति, रबि ससि
छबि छिपि जाई ॥५॥

॥ शब्द १५ ॥

साधौ भेष बाँधि गफिलाने ।
रहै अभेष भेद तब छूटहि, सहज रीति मन जाने॥१॥
जब तें माला कंठी पहिरी, गर्ब भयो इतराने ।
साखी सब्द बहुत सिखि लीन्हेउ, बाद
बिबादहिं ठाने ॥ २ ॥
परखहिं नाहिं फिरहिं परखावत, आपन मंत्र बखाने।
भजहिं नाहिं बसि परे मोह के, अन्त काल पछिताने३
बहुतक देखे कपट रीति महँ, दाम के काम सयाने ।
अहैं असिद्ध मति करैं सिद्ध का, एहि परि
पाप बिलाने॥४॥
दीन लीन होइ सहजहिं सुमिरै, सुमति सील रहे माने।
जगजीवन तब भक्त कहावै, ते एहि
कलि ठहराने ॥ ५ ॥

॥ शब्द १६ ॥

कोउ बिन भजन तरिहै नाहिं ।
करै जाय अचार केतौ, प्रात नित्त अन्हाहिं ॥ १ ॥
दान पुन्यं करि तपस्या, बर्त बहुत रहाहिं ।
त्यागि बस्ती बैठि बन महँ, कंदमूरहिं खाहिं ॥२॥
पाठ करि पढ़ि बहुत बिद्या, रैन दिनहिं बकाहिं ।
गाय बहुत बजाइ बाजा, मनहिं समुझत नाहिं॥३॥
करहिं स्वाँसा बंद कष्टित, भाँड़ की गति आहिं ।
साधि पवन चढ़ाय गगनहिं, कमल उलटै नाहिं॥४॥

साध नहिं केहु कीन ऐसे, सिखे बहुत कहाहिं ।
प्रीति रस मन नाहिं उपजत, परे ते भव माहिं ॥५॥
जस सँजोग बियोग तैसे, तत अच्छर दुइ आहिं ।
रटत अंतर भेंट गुरु तें, मंत्र अजपा माहिं ॥ ६ ॥
कहौं प्रगट पुकारि जेहि के, प्रीति अंतर आहिं ।
जगजिवन दासँ रीति अस, तब चरन महँ
मिलि जाहिं ॥ ७ ॥

॥ शब्द १७ ॥

चरन सरन रहौं, कहूं अंतै नाहिं जाऊँ॥ टेक ॥
रही पास किहे बास, त्यागि सर्ब और आस,
भजत रहौं नाऊँ ॥ २ ॥
तीनि त्यागि चौथ तत्त, पाँह बैठि निरभय ह्वै,
तकौं ना उराऊँ* ॥ ३ ॥
मारि आसन रहौं बैठि, नैनन टक लाय डोरि,
निरमल सत नीर पाइ, नित्त सो अन्हाऊँ॥४॥
जुग जुग जग बैठि संग, मगन रसं तेहि रंग,
जगजिवन दास सतगुरु सो, चेला ताहि क आऊँ† ५

॥ शब्द १८ ॥

सब खाकहि मिलिहै रे भाई ।
किया चहहु कर लेहु बंदगी, मन तें छाँड़हु गाफिलाई१
भूलै फूलै देखि न दौलत, काहु क संग न जाई ।
पैदा भये निपैद भये ते, केहु की खबर न केहू पाई ॥२॥

*दूसरी ओर । †हूं ।

कहँ धौं गये कहाँ धौं वह घर, कहाँ जाइ धौं
रहे समाई।
छत्री जोधा जोगी दानौ*, काल लीन्ह सब खाई॥३
बचा नहीं कोउ ना कोइ बचिहै, सब्द कहत गोहराई।
जगजिवन दास नाम गहि उबरे, सतगुर
चरनन सरनाई॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

बहु पद जोरि जोरि करि गावहिं।
साधन कहा सो काटि कपटि† कै,
अपन कहा गोहरावहिं॥ १॥
निंदा करहिं बिबाद जहाँ तहँ,
बक्ता बड़े कहावहिं।
आपु अंध कुछ चेतत नाहीं,
औरन अर्थ बतावहिं॥ २॥
जो कोउ नाम का भजन करत है,
तेहि काँ कहि भरमावहिं।
माला मुद्रा भेष किये बहु,
जग परमोधि‡ पुजावहिं॥ ३॥
जहँ ते आये सो सुधि नाहीं,
झगरे जन्म गँवावहिं।
जगजीवन ते निन्दक बादी,
बास नर्क महँ पावहिं॥ ४॥

*राक्षस। †काट छाँट कर। ‡राजी कर के।

॥ शब्द २० ॥

अंतर जो कोउ नाम धुनि लावै ।
अजपा रसना सदा लागि रहै, नाहीं भेद बतावै ॥१॥
इत उत आस निरास होय जब, मन अस्थिर लै पावै ।
रहै ठहराय सिखर ह्वै सीतल, निरखि रूप
तब आवै ॥ २ ॥
देखत अहै सुनत है सरवन, काहेक कहि गोहरावै ।
भयो मस्त रस पाय अमृतै, काहेक घंट बजावै ॥३॥
तब बैराग भयो अनुरागी, काल निकट नहिं आवै ।
जगजीवन सतगुरु की किरपा, नहिं आवै नहिं जावै ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

अब तौ ज्ञान कथै को भाई ।
सब्द कहत सो मानत नाहीं, केतौ कहि समुझाई ॥१
भेष जगत सब भूले मैं तैं, सुमति न हिये समाई ।
बहु जलधर बरषहिं पखान पर, सोखत नाहीं जाई* ॥२
देखि परत सब हिये सबहिन का, सुरति नाहिं ठहराई
जहाँ तहाँ भरमत बीतत है, नाहीं भजन ढृढ़ाई ॥३॥

*जैसे बादल कितनाहीं मेंह बरसाते हैं पर पत्थर के भीतर नहीं धसता इसी तरह जगत भेष को जितना चाहे उपदेश करो पर हृदय में असर नहीं करता ।

बहु अभिमान गुमान गर्ब तें, करहिं बाद अधिकाई ।
सो करतूति भुगुति है काया, परै नर्क में जाई ॥४॥
कोइ कोइ जन मन को थिर राखैं, अंतर
रटनि लगाई ।
जगजीवन ते भक्त कहाये, सतगुरु लीन्ह सिखाई ॥५॥

॥ शब्द २२ ॥

और कछु मंत्र नाम सम नाहिं ।
चलै न जिभ्या मुख नहिं बोलै, रटत रहै मन माहिं १
कोउ कासी कोउ जात द्वारकै, हित कर तीरथ न्हाहिं ।
कोउ ब्रत दान अचार करै बहु, कोऊ तपस्याहिं जाहिं २
तूरत बाहैं घींच गगन मुख*, उलटी धूम घुटाहिं† ।
पीवत दूध दूब फल बन के, कंद मूरि खनि‡ खाहिं ३
कोउ रहैं ठाढ़े कोउ रहैं बैठै, कोउ होइ जोगी
जोग कराहिं ।
कोउ जागैं निसिदिन नहिं सोवैं, कोउ दम साध रहाहिं ४
जज्ञ राग रस निर्त रंग कबि, ज्ञानी ज्ञान कथाहिं ।
पंडित कथा पुरान बखानहिं, पढ़तै जन्म§ सिराहिं ५
माला मुद्रा भस्म लगावहिं, चंदन तिलक कराहिं ।
सालिग्राम औ पीतर पुतरी, पूजि पूजि हरषाहिं ॥६॥

---

*ऊर्द्धबाहु अ समान की तरफ़ बाँह को उठा कर सुखा डालते हैं । †उलटे टँग कर धुआँ पीते हैं । ‡खोद कर । §बिताते हैं ।

एह सब करै सरै न भजन बिन, मन थिर होवै नाहिं।
परहिं आय भौजाल फेरि फिरि, समुझि
समुझि पछिताहिं ॥ ७ ॥
सहज सुभाव रहै कौनिउ बिधि, अंतर बिसरै नाहिं।
जस जोगी तस अहैं सँजोगी, भक्त सोई जग माहिं।८
सदा बिस्वास नाम की आसा, तज बिबाद बक ताहिं।
जगजीवन सतगुर के चरनन, अंतर अंतर नाहिं ॥९॥

॥ शब्द २३ ॥

सब जग देखि देखि कै भूला।
साधन कै गति पावत नाहीं, पड़े भर्म के सूला।१।
करत साध सो करत देखि कै, मन आपन नहिं तौला।
दिन दुइ चारि दिखाइन सब कहँ, झूलहिं
झूल हिंडोला ॥ २ ॥
लागत नाहिं राम तें भागत, तजि कै नाम अमोला।
ह्वै गे अस्त उदय है नाहीं, ज्यौं पानी क बबूला ३
परपंची परपंच करहिं जे, परा ते भव प्रतिकूला।
जगजीवन एहि देखि तमासा, सतगुर छबि
गहि मूला ॥ ४ ॥

॥ शब्द २४ ॥

सब जग दीन्ह धंधे लाय ॥टेक॥
जहाँ तहाँ लगाय धागा, सुद्धि गई भुलाय।
जारिडारि संसार माया, लीन्ह सबहिं बिरुझाय*१

*ऐसा उलझना कि फिर न छूटै।

बिना दाया नाहिं छूटै, करै कोटि उपाय ।
पाँच और पचीस मिलि कै, अपथ गैल चलाय ॥२॥
चुभे पाँवन कर्म काँटा, दरद भे अधिकाय ।
गये गल पचि नाम बिनु बहि, ज्यौं बुल्ला
बुंद बिलाय ॥३॥
करि कृपा मन खैंचि लीन्ह्यौ, राखि लइ सरनाय ।
जगजीवन सोइ भयो निर्भय, काल तें न डेराय ॥४॥

॥ शब्द २५ ॥

भे जे नाम भजि मस्तान ।
सदा लागी रहत तारी नाहिं सूझत आन ॥१॥
दीनता गहि सीस वारे तजे गर्ब गुमान ।
अबल कोउ कहै नहिं तेहिं महा है बलवान ॥२॥
काल तिन तें करत बिनती रहत सदा हैरान ।
कहत सब्द पुकारि कै सुनि मानि ले परमान ॥३॥
रहत नीचे तकत ठाढ़े जहँ सतगुर निर्बान ।
जगजीवन गहि चरन मन तें, भये ताहि समान ॥४॥

॥ शब्द २६ ॥

कर मुकाम जहँ निर्गुन नाम ।
ए मन बैठि रहौ तेहिं के ढिग,
तबहीं सुख पैहौ बिस्राम ॥ १ ॥

उत्तम मध्यम तहँवाँ कछु नाहिं,
नाहिं छाँह नहिं आहै घाम ।
पानि पवन उहँ भूख प्यास नहिं,
नाहीं दुख नहिं अहै अराम ॥ २ ॥
झलमल निर्मल निरख देखु तहँ,
उत्तम बना गगन भल ग्राम ।
जगजीवन डर नाहिं काल का,
सतगुर चरन तें राखहु काम ॥ ३ ॥

॥ शब्द २७ ॥

मन महँ समुझि भजहु रे भाई ।
बिना नाम नाहीं सुख पैहौ, छाँड़ि देहु गफिलाई १
बादसाह तख्त चढ़ि भूला, सूबा करत सुबाई ।
राजा राज-काज महँ भूला, कबहुं न बंदगी आई २
साहूकार दाम तकि भूला, दाया जिन्ह बिसराई ।
साँई खैंचि लीन्ह सब माया, जहँ तहँ गयो बिलाई ३
जोगी जोग जुक्ति महँ भूला, पँडित करि पँडिताई ।
भोगी भोग पाप महँ भूला, सुधि बुधि गै बिसराई ४
तपसी करत तपस्या भूला, मनुवाँ कसा न जाई ।
पाँच साँचु माँ आवत नाहीं, मिले बबूरिहिं* जाई ५
षट-दरसन दुनियाँ सब भरमत, जहँ तहँ तीरथ न्हाई ।
घटत न कर्म रहत अघ लादे, मन का मैल न जाई ६

*बबूल यानी काँटे में ।

बिना नाम कोइ पार न पाइहि,कहे देत गोहराई।
जगजीवन सतगुर के चरनन, कबहुं न मन बिसराई७

।। शब्द २८ ।।

अरे मन अंतै कतहुं न धाव ।
रहै अंतर प्रीत लागी, जग्त सब बिसराव ॥ १ ॥
तीन चौथ बनाय दीन्ह्यौ, नाहिं जान्यौ भाव ।
पाय औसर चूकु नाहीं, इहै आहै दाव ॥ २ ॥
तीर्थ ब्रत और दान पुन्यं, एह न मन में लाव ।
एइ सब अहैं गुलाम भक्त के, सीस नाहीं नाव ।३।
त्यागु सर्बस आस मन तें, गगन गाँव बसाव ।
जगजिवनदास निहारि मूरति, नयन दरसन पाव४

।। शब्द २९ ।।

जो कोइ यहि बिधि तीरथ न्हाय ॥टेक॥
मन का मैल लेइ मिसाय*,तब तिरबेनी घाट अन्हाय१
माया मोह दान दै डारि, काम क्रोध मद देइ लुटाय२
काहे क कासी गंगहिं जाय,नाम तें मैलहिं डारछुड़ाय३
जगजीवन दास कहै गोहराय, बिन सतगुरु
कोउ पार न जाय ॥४॥

।। शब्द ३० ।।

ऐसी डोरि लगावहु पोढ़ि ।
टूटै डोरि लेहु फिरि जोरि ॥ १ ॥

* उबटन लगा कर साफ़ करना ।

जब लगि मुख तें कहिये बात ।
तब लगि नाम बिसरि मन जात ॥ २ ॥
जग प्रपंच संगति नहिं करिये ।
हिये नाम की रटना धरिये ॥ ३ ॥
चित माँ चित जो राखै लाय ।
ता पर काल कि कछु न बसाय ॥ ४ ॥
जगजीवन के चरन अधार ।
सतगुरु संत उतारहिं पार ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३१ ॥

बिन वहि नाम तरै कोउ नाहीं ।
देखहु समुझि बूझि मन माहीं ॥ १ ॥
तीरथ ब्रत बहु भाँति कराय ।
जो पै अन्तर देखि न पाय ॥ २ ॥
जल तन धोय मैलि गा धोय ।
मन यहु नाम तें निर्मल होय ॥ ३ ॥
भूले करि षट कर्म अचार ।
याही तें भूला संसार ॥ ४ ॥
सहज डोरि जो राखै लाय ।
अंतर भजि तब भक्त कहाय ॥ ५ ॥
झूठ साँच बहुत नहिं बोलै ।
रहि जग अपने मारग डोलै ॥ ६ ॥

रहै छिपित नहिं देइ जनाय ।
तब भजि अंतर भक्त कहाय ॥ ७ ॥
गर्ब गुमान त्यागि चलै चालू ।
दुख तेहिं देइ न कबहूं कालू ॥ ८ ॥
जगजीवन निर्मल निर्बान ।
सतगुरु चरन रहै धरि ध्यान ॥ ९ ॥

॥ शब्द ३२ ॥

मनुवाँ रहहु जिकिरि लगाय ।
और आस न राखु एकौ, देहु सब बिसराय ॥ १ ॥
कथा ग्रंथ पुकारि भाषैं, देत संत सिखाय ।
नाहिं एहि तें कछू उत्तम, त्यागि दे भ्रमताय ॥ २ ॥
तीन त्यागहु चलौ चौथे, सहर अजब बनाय ।
राति नाहिं तहँ दिवस नाहीं, अजब दिप्त सुहाय ॥३॥
बैठि गुरु सत तख्त पर, तहँ रहो सीस नवाय ।
जगजीवन तहँ निरखि निर्मल, बरनि नाहीं जाय॥४॥

॥ शब्द ३३ ॥

सत्त नाम तत्त निर्मल, सुमिरहु मन लाइ ।
करै जाय अनेग कोइ कछु, अवर नहिं समताइ॥१॥
दान पुन्यं जज्ञ ब्रत तप, तिरथ कोटि अन्हाइ ।
पार नहिं वहि नाम बिनु, सत सब्द भाषत गाइ॥२॥
पढ़ै कोउ पुरान पाठं, ज्ञान कथि कबिताइ ।
किरति परगट कहन कहिये, नाहिं यह भगताइ॥३॥

जानि छानि जिन नाम रसना अनत ना चित जाइ।
जगजिवन दास ते भक्त भे गुरु चरन रहे लिपटाइ॥४॥

॥ शब्द ३४ ॥

ये मन जोगी बैठि मढ़ी जपु राम।
करता की गति काहु न पाई।
नौ खिरकी दस दियो बनाई ॥ १ ॥
तीरथ ब्रत कहँ कतहुं न धाव।
नेम अचार बिचार बहाव ॥ २ ॥
पचीस जोगिनी चेला पाँच।
तिन पर रहै आपनी आँच ॥ ३ ॥
जगन्नाथ तैं अपनै जानु।
काया कासी और न आनु ॥ ४ ॥
प्राग प्रान तिरबेनी बास।
और न दूजी राखहु आस ॥ ५ ॥
अजबै मढ़ी बनी चौगान।
दृढ़ आसन निरखहु निर्बान ॥ ६ ॥
अमी नीर ले नैन तें पाइ।
कर्म भर्म अघ सब मिटि जाइ ॥ ७ ॥
जगजीवन यह मति अनुरागु।
आदि अंत गुरु चरनन लागु ॥ ८ ॥

रहै छिपित नहिं देइ जनाय ।
तब भजि अंतर भक्त कहाय ॥ ७ ॥
गर्ब गुमान त्यागि चलै चालू ।
दुख तेहिं देइ न कबहूं कालू ॥ ८ ॥
जगजीवन निर्मल निर्बान ।
सतगुरु चरन रहै धरि ध्यान ॥ ९ ॥

॥ शब्द ३२ ॥

मनुवाँ रहहु जिकिरि लगाय ।
और आस न राखु एकौ, देहु सब बिसराय ॥ १ ॥
कथा ग्रंथ पुकारि भाषैं, देत संत सिखाय ।
नाहिं एहि तें कछू उत्तम, त्यागि दे भ्रमताय ॥ २ ॥
तीन त्यागहु चलौ चौथे, सहर अजब बनाय ।
राति नहिं तहँ दिवस नाहीं, अजब दिप्त सुहाय ॥३॥
बैठि गुरु सत तख्त पर, तहँ रहो सीस नवाय ।
जगजीवन तहँ निरखि निर्मल, बरनि नाहीं जाय॥४॥

॥ शब्द ३३ ॥

सत्त नामं तत्त निर्मल, सुमिरहु मन लाइ ।
करै जाय अनेग कोइ कछु, अवर नहिं समताइ ॥१॥
दान पुन्यं जज्ञ ब्रत तप, तिरथ कोटि अन्हाइ ।
पार नहिं वहि नाम बिनु, सत सब्द भाषत गाइ ॥२॥
पढ़ै कोउ पुरान पाठं, ज्ञान कथि कबिताइ ।
किरति परगट कहन कहिये, नाहिं यह भगताइ ॥३॥

जानि छानि जिन नाम रसना अनत ना चित जाइ।
जगजिवन दास ते भक्त मे गुरु चरन रहे लिपटाइ॥४॥

॥ शब्द ३४ ॥

ये मन जोगी बैठि मढ़ी जपु राम।
करता की गति काहु न पाई।
नौ खिरकी दस दियो बनाई ॥ १ ॥
तीरथ ब्रत कहँ कतहुं न धाव।
नेम अचार बिचार बहाव ॥ २ ॥
पचीस जोगिनी चेला पाँच।
तिन पर रहै आपनी आँच ॥ ३ ॥
जगन्नाथ तैं अपनै जानु।
काया कासी और न आनु ॥ ४ ॥
प्राग प्रान तिरबेनी बास।
और न दूजी राखहु आस ॥ ५ ॥
अजबै मढ़ी बनी चौगान।
दृढ़ आसन निरखहु निर्बान ॥ ६ ॥
अमी नीर ले नैन तें पाइ।
कर्म भर्म अघ सब मिटि जाइ ॥ ७ ॥
जगजीवन यह मति अनुरागु।
आदि अंत गुरु चरनन लागु ॥ ८ ॥

॥ शब्द ३५ ॥

सुमिरहु मन राम नाम चित लाइ ।
बिन वहि नाम नाहिं कोउ तरिहै, कहत अहौं गोहराइ १
जज्ञ दान ब्रत तीर्थ तपस्या, जग्त भर्म सब आइ* ।
बाहर ढूंढ़े नाहिं कछु मिलिहै, रहु अंतर ठहराइ ॥२॥
धावहु ना कहुं आवहु थिर ह्वै, बाहर फिकिर बहाइ ।
कर परतीत रीत संतन की, मिलिहैं तबहीं साँइँ॥३॥
कहे सुने नाहिं भटकासि कबहूं, जग्त बदी अधिकाइ ।
सिखिपढ़ि सुनिकै बातैं बहुती, भजन मनहिं बिसराइ४
रहु जानत मन नाहिं जनावहु, रहहु अभेष छिपाइ।
जगजीवन सतगुरु काँ निरखहु, चरन
रहहु लिपटाइ ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३६ ॥

सतगुरु तुम मोहिं सिखायो ।
सो सिखि मैं सोई गायो ॥ १ ॥
अब मोहिं आपन करि लीन्हा ।
मैं सीस चरन तर दीन्हा ॥ २ ॥
मैं आदि अंत का आऊँ† ।
अब सुमिरत आहूं नाऊँ ॥ ३ ॥
एहि कठिन नदी है धारा ।
तुम अब कि उतारहु पारा ॥ ४ ॥

*है । †हूं ।

जगजीवन दास तुम्हारा ।
मैं सीस चरन पर वारा ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३७ ॥

साधाै का कहि सब्द सुनावै ।
सब्द है साँच माँच* कहि भाषै,
काहु के मन नहिं आवै ॥ १ ॥
जग सब अंध कुमारग डोलहि,
चेत हेत नहिं लावै ।
हिय कठोर पाषान अहै बहु,
नाहीं सब्द समावै ॥ २ ॥
भेख अलेख† बहुत है दुनियाँ,
करि कै स्वाँग दिखावै ।
आसा झूंठ लाय सब बाँधा,
नाहिं निरंतर गावै ॥ ३ ॥
कोई तीरथ बरत तपस्या,
जहाँ तहाँ कहँ धावै ।
जल पषान की आहै पूजा,
भ्रमि भ्रमि जन्म गँवावै ॥ ४ ॥
अजपा जपत रहै बिन जिभ्या,
कबहुं नाहिं बिसरावै ।
जगजीवन पहुंचा चौथे पद,
गुरु कहँ सीस नवावै ॥ ५ ॥

*सच मुच । †बेहिसाब ।

॥ शब्द ३८ ॥

नाम मंत्र सम नाहीं कोय ।
प्रगट पुकारि कहत हौं सोय ॥ १ ॥
अंतर डोरी राखहु लाय ।
सोवत जागत बिसरि न जाय ॥ २ ॥
बोलहु नाहिं बहुत बतलाहु ।
अंतर भजि ले याहै लाहु* ॥ ३ ॥
जो पै कोटिउ तिरथ अन्हाय ।
मन का मैल तबहुं नहिं जाय ॥ ४ ॥
करै तपस्या तन काँ जारी ।
नाम बिना गै सबै बिगारी ॥ ५ ॥
दूध पियहि तस मूरिहि खाय ।
भावै घर माँ खाय अघाय ॥ ६ ॥
जगजीवन बिस्वास बस राम ।
तेहि कौ सुफल सिद्ध भा काम ॥ ७ ॥

॥ शब्द ३९ ॥

राम क भजन करहु मन माहीं
जीवन जन्म सुफल जग माहीं ॥ १ ॥
भूलहु नाम न तब सुख पाय ।
राम मंत्र सुमिरहु मन लाय ॥ २ ॥
बिनु सुमिरन गति मुक्ति न होय ।
सब्द सत्य कहि भाखत सोय ॥ ३ ॥

*लाभ ।

सुमिरत ब्रह्मा सुमिरत सेस ।
सुमिरत गौरी और गनेस ॥ ४ ॥
सुमिरत बिस्नु जोति मन जानी ।
निर्गुन निर्मल सो पहिचानी ॥ ५ ॥
जगजीवन सतगुरु को ध्यान ।
निसु दिन रहौं चरन लिपटान ॥ ६ ॥

॥ शब्द ४० ॥

सत मत कहत अहौं सुनाइ ।
तत्त सार बिचार कीन्ह्यो नाम रटना लाइ॥ १ ॥
बेद ग्रंथन छानि लीन्ह्यो भर्म नाहिं भुलाइ ।
बैठि दृढ़ ह्वै जुक्ति माहीं आस सब बिसराइ ॥ २ ॥
नाम की गति कहौं कहँ लौं सेस संभू गाइ ।
करत बरनन ब्रह्म मन महँ बेद परगट गाइ ॥ ३ ॥
तीनि त्यागै साध जन कोइ चौथ का घर पाइ ।
जगजीवन गुरु चरन गहि कै बैठु थिर ह्वै जाइ ॥४॥

॥ शब्द ४१ ॥

मन महँ जाइ फकीरी करना ।
रहै एकंत तंत तें लागा, राग निर्त नाहिं सुनना॥१॥
कथा चारचा पढ़ै सुनै नहिं, नाहिं बहुत बक बोलना।
ना थिर रहै जहाँ तहँ धावै, यह मन अहै हिंडोलना २
मैं तैं गर्ब गुमान बिबादहिं, सबै दूर यह करना ।
सीतल दीन रहै मरि अंतर, गहै नाम की सरना॥३॥

जल पषान की करै आस नहिं, आहै सकल भरमना।
जगजीवन दास निहारि निरखि कै, गहि रहु
गुरु की सरना ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४२ ॥

साधो सुमिरहु नाम रसाला।
बकबादी बेबादी* निंदक।
तेहि का मुंह करु काला॥१॥
साखी सब्द जोरि कै लीन्ह।
जहाँ तहाँ लै झगरा कीन्ह ॥ २ ॥
भजहीं नाहिं बकहिं अधिकार।
बाझि रहे माया के जार ॥ ३ ॥
सूकर स्वान बुद्धि तेहिं आइ† ।
नहिं उद्धार नर्क परै जाइ ॥ ४ ॥
करहीं बहुत गरब अभिमान।
ता तें बिसरि गयो वह ज्ञान ॥ ५ ॥
भेष अलेख अंत कछु नाहीं।
तिन तो गर्ब करैं मन माहीं ॥ ६ ॥
करि दिनताय नवै सिर नाइ।
तबहिं सुमति कछु उपजै आइ ॥ ७ ॥
जगजीवन दास देत उपदेस।
नाम भजहु तब मिटै अँदेस ॥ ८ ॥

*बिबादी। †है।

॥ शब्द ४३ ॥

अंतर सुमिरहु नामहीं बिसरावहु नाहीं ।
मूल मंत्र ईहै अहै बसि रहु तेहिं माहीं ॥ १ ॥
देखहु दृष्टि पसारि कै कोऊ थिर नाहीं ।
नीरहिं तें पैदा भये फिर खाक मिलाहीं ॥ २ ॥
कर्म फाँस सब जग पर्‌यौ कोउ छूटत नाहीं ।
छूटे कोउ कोउ दास जन जुक्ती जिन माहीं ॥ ३ ॥
डोरी पीढ़ि लगाइ कै सतगुरुहिं मिलाहीं ।
जगजीवन अस निरखि कै चरनन लिपटाहीं ॥४॥

॥ शब्द ४४ ॥

ए मन नामहिं सुमिरत रहौ ।
परगट भेद न काहू कहौ ॥ १ ॥
परगट कहे नाहिं भल होइ ।
सुमिरन मन तें जाइहि खोइ ॥ २ ॥
परपंची निंदक तें दूरी ।
तब सुभ भजन होइ भरपूरी ॥ ३ ॥
बकबादी बीबादी त्यागू ।
सत्त सुकृत नामहिं में लागू ॥ ४ ॥
यहि तें सुख नाहीं अधिकारा ।
कहै पुरान औ ज्ञान बिचारा ॥ ५ ॥
सबहिन कहा पिया सो जिया ।
जिन केहु भक्ति माँगि कै लिया ॥ ६ ॥

सतगुरु के चरनन लिपटाना ।
साधू सोई भे निरबाना ॥ ७ ॥
जगजीवन करि प्रगट बखान ।
गुरु के चरन तजि भजहु न आन ॥ ८ ॥

॥ शब्द ४५ ॥

इत उत आसा देहु त्यागि ।
सत्त सुकृत तें रहहु लागि ॥ १ ॥
मन तुम नाम रटहु रट लाइ ।
रहु सचेत नहिं बिसरि जाइ ॥ २ ॥
काया भीतर तीरथ कोटि ।
जानि परत नहिं मन की खोटि ॥ ३ ॥
ठाढ़े बैठे पग चलाइ ।
तस पौढ़े* चित अनत न जाइ ॥ ४ ॥
रात दिवस धुनि छूटै नाहिं ।
ऐसे जपत रहहु मन माहिं ॥ ५ ॥
गगन पवन गहि करहु पयान ।
तहवाँ बैठि रहहु निरबान ॥ ६ ॥
गुरु के चरन गहहु लिपटाइ ।
निरखहु सूरति सीस उठाइ ॥ ७ ॥
या है ब्यापि रहे सब माहिं ।
देखत न्यारा कतहूं नाहिं ॥ ८ ॥
जगजीवन कहि मथि पुरान ।
यहि तें सत मत और न आन ॥ ९ ॥

*लेटे ।

फ़िहरिस्त पुस्तकों की जो छप गई हैं

❖ ❖ ❖

तुलसी साहब (हाथरस वाले) की बानी और जीवन-चरित्र ... ... २)

कबीर साहब की शब्दावली और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ... ।≡)

कबीर साहब की शब्दावली, भाग २ ... ... ॥=)

कबीर साहब की अखरावती ... ... -)

पलटू साहब की शब्दावली (कुंडलिया इत्यादि) और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ... ॥)

पलटू साहब की शब्दावली, भाग २ ... ... ।-)॥

चरनदास जी की बानी और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ... ॥)॥

चरनदास जी की बानी, भाग २ ... ... ।≡)॥

रैदास जी की बानी और जीवन-चरित्र ... ।-)॥

जगजीवन साहब की बानी और जीवन-चरित्र, भाग १ ... ... ॥-)

सहजो बाई की बानी और जीवन-चरित्र ... ।)

दरिया साहब (मारवाड़ वाले) की बानी और जीवन-चरित्र, दूसरा एडिशन, कितनेही अधिक पदों और साखियों के साथ ... ... ।)॥

अहिल्याबाई का जीवन-चरित्र भी अंगरेज़ी पद्य में छपा है (यह रमनीय पुस्तक एक मेम ने लिखी है संत बानी पुस्तक-माला की नहीं है) ... =)

मूल्य में डाक महसूल व वाल्यू पेअबल कमिशन शामिल नहीं है।

मनेजर, बेलवेडियर प्रेस

जगजीवन साहेब की शब्दावली

[दूसरा भाग]

जिस में

उन महात्मा के अति उत्तम शब्द—३० बिरह और प्रेम अंग के, ६३ उपदेश के, २४ भेद के, १७ साध महिमा और असाध की रहनी के, ८ आरती के, ६ मंगल के, ३ सावन व हिंडोला के, ७ बसंत के, २९ होली के, और १८० मिश्रित अंग के छपे हैं, और शिष्यों के नाम ५ शिक्षा-पत्र और कुछ साखियाँ भी दी हुई हैं।

इलाहाबाद

बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स में प्रकाशित हुई।

सन् १९११

सफ़हा १४२] [दाम ।।-)

निवेदन

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जक्त-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी व उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। अब तक जितनी बानियाँ हम ने छापी हैं उन में से बिशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और कोई २ जो छपी थीं तो ऐसे छिन्न भिन्न, बेजोड़ या अशुद्ध रूप में कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हम ने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ ऐसे हस्त-लिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकर शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये हैं और यह कार्रवाई बराबर जारी है। भर सक तो पूरे ग्रंथ मँगा कर छापे जाते हैं और फुटकर शब्दों की हालत में सर्ब साधारन के उपकारक पद चुन लिये जाते हैं। कोई पुस्तक बिना कई लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी जाती, ऐसा नहीं होता कि औरों के छापे हुए ग्रंथों की भाँति बेसमझे और बेजाँचे छाप दी जाय। लिपि के शोधने में प्रायः उन्हीं ग्रंथकार महात्मा के पंथ के जानकार अनुयायी से सहायता ली जाती है और शब्दों के चुनने में यह भी ध्यान रक्खा जाता है कि वह सर्ब साधारन की रुचि के अनुसार और ऐसे मनोहर और हृदय-बेधक हों जिन से आँख हटाने का जी न चाहे और अंतःकरन शुद्ध हो।

कई बरस से यह पुस्तक-माला छप रही है और जो जो कसरें जान पड़ती हैं वह आगे के लिये दूर की जाती हैं। कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत नोट में दे दिये जाते हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा जाता है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के संक्षेप बृत्तांत और कौतुक फुट-नोट में लिख दिये जाते हैं।

सूचीपत्र शब्दों का

अ

आ

उ

ए

ऐ

औ

क

ख

ग

च

ज

द

न

प

य

*यह शब्द भूल से पृष्ठ ८८ पर फिर छप गया है।

*यह शब्द भूल से पृष्ठ २६ पर फिर छप गया है।

जगजीवन साहब की बानी

दूसरा भाग

बिरह और प्रेम का अंग।

॥ शब्द १ ॥

पैयाँ पकरि मैं लेउँ मनाय ॥टेक॥
कहौं कि तुम्ह हीं कहँ मैं जानौं, अब तुम्हरी सरनहिं आय १
जोरी प्रीत न तोरी कबहूँ, यह छबि सुरति बिसरि नहिं जाय२
निरखत रहौं निहारत निसु दिन, नैन दरस रस पियौं अघाय३
जगजीवन के समरथ तुमहीं, तजि सतसंग अनत नहिं जाय४

॥ शब्द २ ॥

उनहीं सौं कहियो मोरी जाय ॥टेक॥
ए सखि पैयाँ परि मैं बिनवौं, काहे हमैं डारिन बिसराय ॥१॥
मैं का करौं मोर बस नाहीं, दीन्ह्यो अहै मोहिं भटकाय ॥२॥
ए सखि साँइँ मोहिं मिलावहु, देखि दरस मोर नैन जुड़ाय।३
जगजीवन मन मगन होउँ मैं, (रहौं) चरन कमल लपटाय।४

॥ शब्द ३ ॥

पिय तैं भेंट करावहु री, मैं जाउँ बलिहारी ॥टेक॥
पैयाँ परि मैं बिनवौं तुम्ह तैं, मैं तौ अहौं अनारी।
पाँचु साँचु की गैल न आवहिं, इन्ह सब काम बिगारी॥१॥

चलहिँ पचीस कुमारग निसु दिन, नाहीं जात सँभारी ।
मैं तैं मान गुमान न छोड़हिँ, करि उपाय मैं हारी ॥२॥
तीनि त्यागि लै चलु चौथे कहँ, तब देखौं अनुहारी* ।
जगजीवन सखि हिलि मिलि करि कै, सीस चरन पर वारी ॥३॥

॥ शब्द ४ ॥

झमकि चढ़ि जाउँ अटरिया री ॥टेक॥
ए सखि पूँछौं साँई केहिँ अनुहरिया* री ॥१॥
सो मैं चहौं रहौं तेहिँ संगहिँ, निरखि जाउँ बलिहरिया री ।२।
निरखत रहौं पलक नहिँ लाऔं, सूतौं सत्त सेजरिया† री ३
रहौं तेहिँ सँग रँग रस माती, डारौं सकल बिसरिया री ४
जगजीवन सखि पायन परि कै, माँगि लेउँ तिन सनिया‡ री ५

॥ शब्द ५ ॥

अरी मोरे नैन भये बैरागी ॥टेक॥
भसम चढ़ाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, सबै अभूषन त्यागी ।
तलफि तलफि मैं तन मन जार्‌यौं, उनहिँ दरद नहिँ लागी १
निसु बासर मोहिँ नींद हरी है, रहत एक टक लागी ।
प्रीत सौं नैनन नीर बहतु है, पीपी पीवन जागी ॥२॥
सेज आय समुझाय बुझावहु, लेउँ दरस छबि माँगी ।
जगजीवन सखि तृप्त भये हैं, चरन कमल रस पागी ॥३॥

॥ शब्द ६ ॥

पैयाँ परि मैं हारिउँ हो, तुम्ह दरद न आनी ॥१॥
निगुनी अहौं बुद्धि की हीनी, गति तुम्हरी नहिँ जानी ॥२॥
लागी रहत सुरति मन मोरे, भरमत फिरौं भुलानी ॥३॥

---

*रूप । †पलँग । ‡स्नेह ।

जब छूटत तब मन मोर टूटत, समुझि समुझि पछितानी ४
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जेहि हिय सुरति समानी ॥५॥
जो जानै सोई पै जानै, को करि सकै बखानी ॥६॥
जगजीवन कर जोरि कहत है, देहु दरस बरदानी ॥७॥

॥ शब्द ७ ॥

मैं निगुनो बन भूलि परिउँ, गुन एकौ नाहीं रे ॥टेक॥
मैं सोवत सखि चौंकि परिउँ, पिय पिय रट लागी रे।
भेंट बिना तन मन तलफै, मैं करम अभागी रे ॥१॥
जस जल बिना मीन तलफत है, अस मैं तलफि सुखानी रे।
अस मोरे सुधि सूरति आवत, लागत धूप पुहुप कुम्हिलानी रे २
भा तन खाक नहीं किछु भावै, है जोगिनि बौरानी रे।
समुझावै को केहि का केहि बिधि, जेहिं लागी सोइ जानी रे ३
मुनि जन जती भूले यहि बन महँ, पियैं बिषय कै पानी रे।
सो अँदेस होत मन मोरे, कब धौं मिलिहौ आनी रे ॥४॥
मैं तैं पाँच पचीस डोरि लै, चढ़ि ठहरानी रे।
जगजीवन निर्गुन निर्मल तकि, भयुँ मस्तानी रे ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

मैं तन मन तुम्ह पर वारा ॥टेक॥
निस दिन लागि चरन की छहियाँ, सूनी सेज निहारा ॥१॥
तुम्हरे दरस काँ भइ बैरागिन, माँगौं सरन करारा ॥२॥
डोरी पोढ़ि बिलग ना कबहूँ, निरखि कै रूप निहारा ॥३॥
जगजीवन के सतगुरु साँईं, तुमहीं पार उतारा ॥४॥

॥ शब्द ९ ॥

जोगिनि भइउँ अँग भसम चढ़ाय ।
कब मोरा जियरा जुड़इहौ आय ॥१॥
अस मन ललकै मिलौं मैं धाय ।
घर आँगन मोहिं कछु न सुहाय ॥२॥
अस मैं ब्याकुल भइउँ अधिकाय ।
जैसे नीर बिन मीन सुखाय ॥३॥
आपन केहि तें कहौं सुनाय ।
जो समुझौं तौ समुझि न आय ॥४॥
सँभरि सँभरि दुख आवै रोय ।
कस पावों कहँ दरसन होय ॥५॥
तन मन सुखित भयो मोर आय ।
जब इन नैनन दरसन पाय ॥६॥
जगजीवन चरनन लपटाय ।
रहै संग अब छूटि न जाय ॥७॥

॥ शब्द १० ॥

जोगिया भँगिया खवाइल, बौरानी फिरौं दिवानी ॥ टेक ॥
ऐसे जोगिया कि बलि बलि जैहौं, जिन्ह मोहिं दरस दिखाइल ॥१
नहिं कर तें नहिं मुखहिं पियावै, नैनन सुरति मिलाइल ॥२॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जिन्ह के भाग तिन्ह पाइल ॥३॥
जगजिवनदास निरखि छबि देखै, जोगिया मुरति मन भाइल ॥४

॥ शब्द ११ ॥

साँईं समरथ कृपा तुम्हारी ।
बालमीक अजामिल गनिका, लिह्यो छिनहिं माँ तारी ॥१॥

मैं बपुरा अजान का जानौं, का करि सकौं बिचारी ।
बहा जात अपंथ के मारग, तुम जानेहुं हितकारी ॥२॥
नेग जनम जग धस्यो आनि कै, कबहुँ न सुद्धि सँभारी ।
अब डरपौं भौजाल देखि कै, लीजै अब की तारी ॥३॥
बरनत सेस सहस मुख ब्रह्मा, संकर लाये तारी ।
माया बिदित ब्यापि रहि सब महँ, निर्मल जोति तुम्हारी ॥४॥
अपरम्पार पार को पावै, कहि कथि सब कोउ हारी ।
जहँ जस बास पास करि जानी, तहँ तेइ सुरति सुधारी ॥५॥
अनगन पतित तारि एक छिन मेँ, गनि नहिं जात पुकारी ।
जगजिवनदास निरखि छबि देख्यो, सीस चरन पर वारी ॥६॥

॥ शब्द १२ ॥

अब की बार तारु मोरे प्यारे । बिनती करि कै कहौं पुकारे १॥
नहिं बसि अहै केतो कहि हारे । तुम्हरे अब सब बनहि सँवारे २
तुम्हरे हाथ अहै अब सोई । और दूसरो नाहीं कोई ॥ ३ ॥
जो तुम चहत करत सो होई । जल थल महँ रहि जोति समोई ॥ ४ ॥
काहुक देत हौ मंत्र सिखाई । सो भजि अंतर भक्ति दृढ़ाई ५
कहौं तो कछू कहा नहिँ जाई । तुम जानत तुम देत जनाई ६
जगत भगत केते तुम तारा । मैं अजान केतान बिचारा ७
चरन सीस मैं नाहीं टारौं । निर्मल सुरत निर्बान निहारौं ८
जगजीवन कां अब बिस्वास । राखहु सतगुरु अपने पास ॥९॥

॥ शब्द १३ ॥

हरि छबिहिं दिखाय, मोर मन हरि लियो ॥ टेक ॥
सुमिरन भजन करत निसुबासर, सोई जुग जुग जियो ॥१॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, नयन दरस रस पियो ॥२॥
ज्ञान ध्यान जानत तुमहीं कहँ, जन आपन करि लियो ॥३॥
जगजीवन स्वामी दास तुम्हारा, सीस चरन महँ दियो ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

साहेब समरत्थ प्रीति तुम्ह तँ लागी ॥ टेक ॥
नेग जनम करम फंद पस्यो नाहिं जागी ॥१॥
अपथ पंथ तत्त जानि भूलेहुँ अभागी ॥२॥
तेहिं पस्यो सुधि बुद्धि हस्यो कौनि जुगत त्यागी ॥३॥
जगजिवनदास करै बिनती चरन सरन लागी ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

अब मोरि मान ले इतनी ॥टेक॥
तुम बिनु ब्याकुल भरमत डोलत, अब तो आनि बनी ॥१॥
मैं तो दास तुम्हार कहावत, साहेब तुमहिं धनी ॥२॥
तुम तौ सत्तगुरू हौ हमरे, अल्लह अलख गनी ॥३॥
जगजीवन चरनन महँ लागो, नैन सौं सुरति तनी ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

ए सखि अब मैं काह करौं ।
भूलि परिउँ मैं आइ कै नगरी, केहि बिधि धीर धरौं ॥१॥
अंत नहीं यहि नगर क पावौं, केतो बिचार करौं ।
चहत जो अहौं मिलौं मैं पिय कहँ, भ्रम की गैल परौं ॥२॥

हित मोरे पाँच होत अनहितई, बहुतक खैंच करौं ।
के तो प्रबोधि के बोध करौं मैं, ई कहै धरौं धरौं ॥३॥
तीस पचीस सहेली मिलि सँग, ई गहै कैसे बरौं ।
पाँय पकरि कै बिनती करौं मैं, लै चलु गगन परौं ॥४॥
निरत निरखि छबि मोहिं कहो अब, गहिं रहु नाहिं टरौं।
जगजीवन सत दरस करौं सखि, काहे क भटक फिरौं ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

तुम तैं बिनय सुनावौं, मोहिं तैं भैंट करावहु ।
सूरति उन कै कौनो बिधि कै, सो कहि मोहि बतावहु ॥१॥
दरसन बिन ब्याकुल मैं डोलौं, नैना मोर जुड़ावहु ।
सूरति तुम तजि देहु सयानप*, सहजहिं प्रीति लगावहु ॥२॥
चलहु गगन चढ़ि संग हमारे, तब वह दरसन पावहु ।
बैठ अहैं पिउ वहि चौमहले, तहँ सत सेज बिछावहु ॥३॥
रहो सँग सूति एकही मिलिकै, कबहूँ नाहिं दुख पावहु ।
जगजीवन सखि निरखि रूप छबि, सूरत सुरत मिलावहु ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

यहि नगरी महँ परिउँ भुलाई ।
का तकसीर भई धौं मोहिं तैं, डारे मोर पिय सुधि बिसराई १
अब तो चेत भयो मोहिं सजनी, ढुँढ़त फिरहुँ मैं गइउँ हिराई।
भसम लाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, अब उन बिनु मोहिं कछु
न सुहाई ॥२॥
पाँच पचीस कि कानि मोहिं है, तातैं रहौं मैं लाज लजाई ।
सुरति सयानप अहै यहै मत, सब इक बसि करि मिलि रहु जाई३

*सयानपन, चालाकी ।

निरति रूप निरखि कै आवहु, हम तुम तहाँ रहहिं ठहराई ।
जगजीवन सखि गगन मँदिर महँ, सत की सेज सूति सुख पाई ४

॥ शब्द १९ ॥

तुम सों नैना लागे मोरे ॥टेक॥
मैं बौरी दरसन बिनु डोलौं, अब पायौं बैठी रहौं नियरे ।
तुम बिनु दुखित सुखित मैं नाहीं, कहत हौं पैयाँ पकरि के टेरे १
दासी जनम जनम की तुम्हरी, भूलिउँ आवत जावत फेरे ।
जगजीवन को सुरति तुम्हारी, लागी रहै सदा मन मेरे ॥२॥

॥ शब्द २० ॥

साँईं तुम सौं लागो मन मोर ॥१॥
मैं तौ भ्रमत फिरौं निसुबासर, चितवौ तनिक कृपा करि कोर॥२
नहिं बिसरावहु नाहिं तुम बिसरहु, अब चित राखहु चरनन ठौर३
गुन औगुन मन आनहु नाहीं, मैं तौ आदि अंत को तोर ४
जगजीवन बिनती करि माँगै, देहु भक्ति बर जानि कै थोर५

॥ शब्द २१ ॥

तुम तें का कहि बिनय सुनावौं ।
बारंबारहि मोहिं नचायो, केहि बिधि ध्यान लगावौं ॥१॥
महा अपरबल माया आहै, अंत खोज नहिं पावौं ।
तेहि सुख परि सुधि भूलिगै मोरी, जानि बूझि बिसरावौं २
मोहिं पर पाँच पियादे गालिब, इन्ह तें कल नहिं पावौं ।
जो मैं चहौं कि रहौं हजूरहिं, इन्ह तें रहै न पावौं ॥३॥
झगरहिं नितहिं पचीस जोगिनी, केहि बिधि राह लगावौं ।
आपनि आपनि करैं तरंगैं, मैं कछु करै न पावौं ॥४॥
कुमति बहु नहु सुमति देहु सुभ, सूरति छबिहिं मिलावौं ।
जगजीवन पर करु किरपा अब, कबहुँ नहीं बिसरावौं ॥५॥

॥ शब्द २२ ॥

मेरो अब मन तुम तेँ लागा ॥टेक॥
सोवत रहिउँ अचेत सुद्धि नहिँ, गुरु सत मत तेँ जागा ।
आयो निर्गुन तेँ बिलगाइ कै, पहिर्‌यो नीर क पागा* ॥१॥
जोरि जोरि रचि करि कै लीन्ह्यो, जहँ तहँ लाग्यो धागा ।
भयो करम बस स्वाद बाद महँ, भरमत फिरौँ अभागा ॥२॥
होइ सचेत करि हेत कृपा भै, पहिरि निरभौ कै आँगा† ।
जगजीवन के साँईं समरथ, रहौँ रंग रस पागा‡ ॥३

॥ शब्द २३ ॥

अरी मैँ तो नाम के रँग छकी ॥टेक॥
जब तेँ चाख्यो बिमल प्रेम रस, तब तेँ कछु न सोहाई ।
रैनि दिना धुनि लागि रही, कोउ केती कहै समुझाई ॥१॥
नाम पियाला घोँटि कै, कछु और न मोहिँ चही ।
जब डोरी लागी नाम की, तब केहि कै कानि रही ॥२॥
जो यहि रँग मैँ मस्त रहत है, तेहि कै सुधि हरना ।
गगन मँदिल दृढ़ डोरि लगावहु, जाइ रहौ सरना ॥३॥
निर्भय ह्वै कै बैठि रहौ अब, माँगौ यह बर सोई ।
जगजीवन बिनती यह मोरी, फिरि आवन नहिँ होई ॥४॥

॥ शब्द २४ ॥

नइहरवाँ आय सुधि बिसरी, सुधि बिसरी मोरी सुरति हरी१
का नइहरवाँ फिरहु भुलानि, जैहौ ससुरवा परि है जानि २
काह कहौँ कहि नाहीँ जाइ, मोहिँ बपुरी की सुद्धि न आइ३
जोगिनि भइ अँग भसम चढ़ाइ, बिनु पिया भेँट रहा नहिँ जाइ४

---

*पगड़ी । †अँगरखा । ‡पगा हुआ ।

ए सखि सूरति देहु बताइ, देखि दरस मोर हियरा जुड़ाइ ॥५॥
जगजीवन कहै गुरु उपदेस, चरन कमल चित देहु नरेस ॥६॥

॥ शब्द २५ ॥

मोहिं करैं दुत्ता* लोग, महल में कौन चलै ॥टेक॥
छोड़ि दे बहियाँ मोरी, मोरि मति भइ भोरी† ॥१॥
कुमति मोरि यह माई, जिन्ह डास्यो सबै नसाई ।२॥
यह पाँचो मोरे भाई, इ तौ रोकत आहैं आई ॥३॥
करैं पचीस बहु रंगा, इन्ह मिलि मति मोरी भंगा ॥४॥
यह सब लेउँ लेवाई, तब चढ़ौं अटरिया धाई ॥५॥
इन्ह सब काँ समुझावौं, तब अपने पियहिं रिझावौं ॥६॥
सेज सूति सुख पावौं, तब नैनन सुरति मिलावौं ॥७॥
ए सखि ऐसि बिचारी, तौ होउँ मैं पिय की प्यारी ॥८॥
जगजीवन रस माती, तब जुग जुग सखि अहिवाती‡ ॥९॥

॥ शब्द २६ ॥

मैं तोहिं चीन्हा, अब तौ सीस चरन तर दीन्हा ॥टेक॥
तनिक झलक छबि दरस देखाय ।
  तब तें तन मन कछु न सोहाय ॥१॥
काह कहौं कहि नाहीं जाय ।
  अब मोहि काँ सुधि समुझि न आय ॥२॥
होइ जोगिन अँग भस्म चढ़ाय ।
  भँवर गुफा तुम रहेउ छिपाय ॥३॥
जगजीवन छबि बरनि न जाय ।
  नैनन मूरति रही समाय ॥४॥

---

*दुत्कार । †भूली हुई, बावली । ‡सोहागिन ।

॥ शब्द २७ ॥

रहिउँ मैं निरमल दृष्टि निहारी ॥टेक॥
ए सखि मोहिं तें कहिय न आवै, कस कस करहुँ पुकारी ॥१॥
रूप अनूप कहाँ लगि बरनौं, डारौं सब कछु वारी ॥२॥
रवि ससि गन तेहिं छबि सम नाहीं, जिन केहु गहा बिचारी३
जगजीवन गहि सतगुरु चरना, दीजै सबै बिसारी ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

प्रभु जी मैं तौ आहुँ तुम्हारा।
पूजा अरचा नाहीं जानौं, जानौं नाम पियारा ॥१॥
सो हित सदा होत नहिं अनहित, बास किहे संसारा।
कहत हौं दीन लीन रहौं तुम तें, तुम ब्रत राखनहारा ॥२॥
अंतरध्यानं गगन मगन ह्वै, निरखौं रूप तिहारा।
पुहुप गूँधि कै माला लैकै, सो पहिरावौं हारा ॥३॥
पान चून औ खैर सुपारी, गरी जायफल दोहरा।
कपूर इलायची मेरै* खवावौं, पूजा इहै हमारा ॥४॥
कटहर कोवा मेवा ल्यावौं, सोऊ पवावौं प्यारा।
कनक नीर कर तें मुख धोवौं, तकि के चरन प्रछारा† ॥५॥
सो चरनामृत नित्त पियो है, सुभ भा जनम हमारा।
जगजीवन कहँ दिहे रहहु यह, दाता होहु हमारा ॥६॥

॥ शब्द २९ ॥

सखी री करौं मैं कौन उपाई।
मैं तौ ब्याकुल निस दिन डोलौं, उनहिं दरद नहिं आई ॥१॥
काह जानि कै सुधि बिसराई, कछु गति जानि न जाई।
मैं तौ दासी कलपौं पिय बिनु, घर आँगन न सुहाई ॥२॥

---

*मिला कर। †धोया।

तलफि तलफि जल बिना मीन ज्यौं, अस दुख मोहिं अधिकाई।
निर्गुन नाह* बाँह गहि सेजिया, सूतहि हियरा जुड़ाई ॥३॥
बिन सँग सूते सुख नहिं कबहूँ, जैसे फूल कुम्हिलाई ।
ह्वै जोगिन मैं भस्म लगायौं, रहिउँ नयन टक लाई ॥४॥
पैयाँ परौं मैं निरति निरखि कै, मोहिं का देहु मिलाई ।
सुरति सुमति करि मिलहिं एक ह्वै, गगन मँदिल चलि जाई ॥५॥
रहिं यहि महल टहल महँ लागी, सत की सेज बिछाई ।
हम तुम उनके सूत रहहिं सँग, मिटै सबै दुचिताई ॥६॥
जगजीवन सिव ब्रह्मा बिस्नू, मन नहिं रहि ठहराई ।
रबि ससि कोरि कुरबान ताहि छबि, पीवो दरस अघाई ॥७॥

॥ शब्द ३० ॥

पिय को देहु मिलाय, सखी मैं पइयाँ लागौं ॥टेक॥
रैनि दिना मोहिं नींद न आवै, घर आँगन न सोहाय ।
मैं बौरी बपुरी ब्याकुल हौं, उन्हैं दरद ना आय ॥१॥
कौन गुनाह भयो धौं मोहिं तें, डारिन्ह सुधि बिसराय ।
बहुत दिनन तें बिछुरे मोहिं तें, कहँ धौं रहे छिपाय ॥२॥
तलफत मीन बिना जल के ज्यौं, अस मोर जिया अकुलाय।
भसम लगाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, अंत न उनका पाय ॥३॥
सूरति कानि छाँड़ि दइ इत उत, देहौं भेंट कराय ।
निरति निरखि जौन छबि आइहु, रूप सो देहुँ बताय ॥४॥
कौनी भाँति अहै केहिं मंदिल, भेंट करन तहँ जाय ।
सत सेजासन बैठि चौमहले, रबि ससि छबि छपि जाय ॥५॥
ब्रह्मा बिस्नु सिव का मन तहवाँ, दिष्टि सो कहा न जाय ।
जगजीवन सखि हिलिमिलि हम तुम, रहि चरनन लिपटाय ॥६॥

---

*पति ।

उपदेश का अंग ।

॥ शब्द १ ॥

मन रहु आसन मारि मढ़ी तें न डोलहु रे ।
राते माते रहहु प्रगट नहिं खोलहु रे ॥१॥
निरखत परखत रहहु बहुत नहिं बोलहु रे ।
रजनी किवाड़ दीन्ह सत कुंजी तें खोलहु रे ॥२॥
गुरु के चरन दै सीस आस सब त्यागहु रे ।
जहाँ जहाँ तुम रहहु इहै बर माँगहु रे ॥३॥
चौक बनी चौगान चकमकी बिराजै रे ।
रबि ससि छबि तेहिं वारि हंस तेहिं गाजै रे ॥४॥
ब्रह्मा बिस्नु सिव मन निर्गुन अस्थूला रे ।
तेहि हिलि मिलि परसंग फिरहु नहिं भूला रे ॥५॥
चमकत निर्मल रूप झलक बिनु हीरा रे ।
जगजीवन रहु मगन बैठु तेहिं तीरा रे ॥६॥

॥ शब्द २ ॥

साधो भक्ति नहीं औसान* ।
कहन सुनन को बहुत हैं, हिये ज्ञान नाहिं समान ॥१॥
सरत नहिं कछु करत औरै, पढ़त बेद पुरान ।
और को समुझाइ सिखवत, आपु फिरत भुलान ॥२॥
करत पूजा तिलक दैकै, प्रात करि अस्नान ।
भ्रमत है मन हाथ नाहीं, नाहिं थिर ठहरान ॥३॥

*आसान, सहज ।

तीर्थ ब्रत तप करहिँ बहु बिधि, होम जग जप दान ।
याहि माँ पचि रहत निसि दिन, धस्यो नाहीँ ध्यान ॥४॥
सीस केस बढ़ाइ रज* अँग लाइ, भे निर्बान ।
अंत तत्वं नाहिँ अजपा, भ्रमत फिरे निदान ॥५॥
पहिरि माला फूल इत उत, बाद जहँ तहँ ठानि ।
नर्क प्रापत भये तेहू, बृथा जनम सिरान ॥६॥
सहज जग रहि सुरति अंतर, भजन सो परमान ।
जगजीवन ते अमर प्रानी, तेहिँ समान न आन ॥७॥

॥ शब्द ३ ॥

साधो मंत्र सत मत ज्ञान ।
देखि जड़ बहुतेर अंधे, झूठ करहिँ बखान ॥१॥
जपहिँ नावैँ तपहिँ मैँ तैँ, किहे गर्ब गुमान ।
नाहिँ थिर मन चलत जहँ तहँ, अचल नहिँ ठहरान ॥२॥
करहिँ बातैँ बहुत बिधि तेँ, आपु अहहिँ हेवान ।
गयो अजपा भूलि भूले, गयो बिसरि तेवान† ॥३॥
डोरि दृढ़ करि लाउ पोढ़ी, सत्त नामहिँ जान ।
जगजीवन गुरु सत्त समरथ, निरखि तकि निरबान ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

मन गुरु चरन धरि रहु ध्यान ॥टेक॥
अमर अहै अडोल अचलं मानि ले परमान ॥१॥
लाइ संकर रहे तारी कहत बेद पुरान ॥२॥
तत्त सारं इहै आहै अवर नाहीँ जान ॥३॥
निराकारं निराधारं निर्गुनं निर्बान ॥४॥
जगजीवन तूँ निरखि सूरति चरन रहु लपटान ॥५॥

---

*भभूत । †सोच बिचार ।

॥ शब्द ५ ॥

ए मन निरखि ले ठहराइ ।
ऐसि सूरति अहै मूरति, अजब दिप्ति सोहाइ ॥१॥
रहा बैठा त्यागि ऐंठा, अनत नहिँ वहि जाइ ।
गहौ सतमत जानि ऐसे, नाहिँ संकर पाइ ॥२॥
संत मुनि जन रहत जागे, बेद भाषत गाइ ।
नाहिँ उत्तम और आहै, लखा जिन का आइ ॥३॥
देखि के जे मस्त भे हैँ, मिटी सब दुचिताइ ।
जगजिवन सतगुरु पास बैठे, कबहुँ नहिँ बिलगाइ ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

साधो देखो मनहिँ बिचारी ।
अपने भजन तंत सोँ रहिये, राखो डोरि सँभारी ॥१॥
भेद न कहिये गुप्तहिँ रहिये, कठिन अहै संसारी ।
सुमति सुमारग खोजहिँ नाहीँ, तैसे नर तस नारी ॥२॥
साध की निंदा करत न डरपत, कुटिलाई अधिकारी ।
ताहि पाप तेँ नर्क परहिँगे, भुगतहिँगे जुग चारी ॥३॥
करहिँ बिबाद सब्द नहिँ मानहिँ, मन फूलहिँ अधिकारी ।
बड़े भाग यहि जग माँ आये, डारिन्ह जन्म बिगारी ॥४॥
सत मत पाय केहू जन बिरले, सूरति राखै न्यारी ।
जगजीवन के सतगुरु समरथ, संकट मेटि उबारी ॥५॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो जग परखा मन जानी ।
संत काँ मिलत कपट मन राखत, बोलत अमृत बानी ॥१॥

कहत हैं और करत हैं औरै, कीन्हे बहुत सयानी ।
सुपने सुमति न कबहूँ आवै, नरक परैं ते प्रानी ॥२॥
बहु बकवाद झूठ कहि भाखैं, सरस* आपु कहँ जानी ।
अहै निरास कीच के कीरा, मरिगे कीच सुखानी ॥३॥
आवत देखि दृष्टि मोहिं ऐसे, ज्ञान कहत हौं ज्ञानी ।
बिरले संत तत† तें लागे, प्रीति नाम तें ठानी ॥४॥
रहहिं निरंतर अंतर सुमिरहिं, धन्य अहैं ते प्रानी ।
जगजीवन न्यारे सबहीं तें, सुरति चरन ठहरानी ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो अस्तुति जन जग लूटा ।
गुप्त रहै छिपि मगन मनहिं माँ, भजन कै होइ न टूटा ॥१॥
खैंचत सत सीढ़ी के नीचे, गुरु सनमुख तें हूठा ।
आय परे मन मोह सहर माँ, बाँधे भ्रम के खूँटा ॥२॥
पूजत जक्त भक्त कहि तिन काँ, ध्यान चरन तें छूटा ।
सुमति भे छीन नहीं लय लागत, कुमति ज्ञान धरि कूटा ॥४॥
होइ निर्बान निंदा तें साधू, अघ क्रम जरि भे भूटा ।
निंदक कर निरबाह नहीं है, जम दूतन धरि कूटा ॥४॥
करिकै जुक्ति जक्त करु बासा, ज्यौं मकु तागा ऊटा ।
जगजीवन रस चाखि नैन तें, ज्यौं मधु माखी घूटा ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

साधो मैं प्रभु तें लव लाई ।
जानौं नाहिं अजान अहौं मैं, उनहीं राह बताई ॥१॥

---

*बड़ा, उत्तम । †तत्व बस्तु ।

कोइ निंदा कोइ अस्तुति करई, कोई करै दिनताई ।
जो जैसी करि मन महँ जानै, तेहि तस प्रगटहि जाई ॥२॥
कोइ करै कूर पूर नहिं भाखै, रामहिं नाहिं डेराई ।
मैं तौ आहौं राम भरोसे, ताहा को प्रभुताई ॥३॥
होइहि सोई टरै काँ नाहीं, ब्रह्मा बचन सुनाई ।
साधन की जे निंदा करिहैं, परहिं नरक ते जाई ॥४॥
नैन देखि के सरवन सुनि कै, कहत अहौं गोहराई ।
जगजिवनदास सब्द कहि साँचा, छोड़ देहु गाफिलाई ।४।

॥ शब्द १० ॥

साधो केहि बिधि ध्यान लगावै ।
जो मन चहै कि रहौं छिपाना, छिपा रहे नहिं पावै ॥१॥
प्रगट भये दुनिया सब धावत, साँचा भाव न आवै ।
करि चतुराई बहु बिधि मन तें, उलटे कहि समुझावै ॥२॥
भेष जगत दृष्टी तें देखत, औरै रचि के गावै ।
चाहत नहीं लहन नहिं नामहिं, तृस्ना बहुत बढ़ावै ॥३॥
गहि मत मंत्र रहै अंतर महँ, नाहीं कहि गोहरावै ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, चरनन सीस नवावै ।५॥

॥ शब्द ११ ॥

अब मन मंत्र साँचा सोइ ।
भाग बड़ हैं ताहि के, जेहिं नाम अंतर होइ ॥१॥
प्रगट कहि के नाहिं भाषै, गुप्त राखै सोइ ।
जागि पागि के सिद्ध होवै, प्रगट तबहीं होइ ॥२॥
जिकर लाये सिखर चढ़िगे, गह्यो चरनन टोइ ।
नेग जनम के करम अघ जे, गये पल मैं धोइ ॥३॥

देखि सूरति निरखि गुरु कै, रह्यो ताहि समोइ ।
जगजीवन परकास निर्मल, नाहिँ न्यारा होइ ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

अपने देखि रहु मन जानि ।
तत्त सार दुइ अहैँ अच्छर, मन प्रतीति करि आनि ॥१॥
परगट कहौँ कहा नहिँ मानै, है बिबाद की खानि ।
सूकर स्वान बिबादक* निन्दक, जानहिँ लाभ न हानि ॥२॥
मारग असुभ चलहिँ निसि बासर, कबहुँ न आनहिँ कानि ।
सो देखा परगट अस नैनन, लियो अहै पहिचानि ॥३॥
अहौँ भरोसे सदा नाम के, लियो तत्तहिँ छानि ।
जगजिवन सतगुरु नैन निकटहिँ, चरन गहि लिपटान ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

साधो सुमिरो नाम रसाला ।
बकबादी बीबादी निन्दक, तेहिँ का मुँह करु काला ॥१॥
अन्तर डोरि पोढ़ि कै लावहु, सुमति का पहिरहु माला ।
सतगुरु चरन सीस लै लावहु, वै करि हैँ प्रतिपाला ॥२॥
दुनिया अजब धंध माँ लागी, देखहु प्रगट खियाला ।
नहिँ बिस्वास मनहिँ माँ आवत, पड़े भरम के जाला ॥३॥
मन तेँ न्यारे सदा बसत रहो, यहि संतन कै हाला ।
जगजीवन वह जोति है निर्मल, निरखि के होहु निहाला ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

ए मन मंत्र लीजै छानि ।
लेहु अजपा लाइ अंतर, और बिरथा जानि ॥१॥

---

*बिबादी, कटहुज्जती ।

धाव नाहीं कहूँ इत उत, अहै बिष कै खानि ।
ताहि नर बस होहुगे जब, होइ सत मत हानि ॥२॥
आइ केते जगत मैँ यहि, मरिगे खाक उड़ानि ।
बृथा सर्बस जानि कै, भजि लेहु करि पहिचानि ॥३॥
मारि मैँ तैँ दोन ह्वै कै, सुमति मन महँ आनि ।
जगजीवन बिस्वास गहिये, निरखि छबि निर्बानि ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो चढ़त चढ़त चढ़ि जाई ।
रसना रटना रहै लगाये, देइ सकल बिसराई ॥१॥
अजपा जपत रहै निसि बासर, कबहुँ छूटि नहिँ जाई ।
छकित भये रस पाय मस्त ह्वै, मन की तलफ बुझाई ॥२॥
निरखत रहै अलख तहँ मूरति, निर्मल दिष्टि तहँ छाई ।
दुइ कर चरन सीस रहै लाये, रूप तकै निरताई* ॥३॥
जो जानै जस मानै तैसै, कहै कवन गोहराई ।
जगजीवन सतगुरु किरपा तब, आवतही लौ लाई ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

मनुआँ बैठि रहहु चौगाना ।
इत उत देखि तमासा आवहु, कहूँ बिलँब नहिँ आना ॥१॥
लैकै पाँच करहु इक साँचे, लै पचीस सँग ताना ।
मैँ मरि तैँ काँ तारि डारि कै, तब ह्वैहौ निर्बाना ॥२॥
धुनि धूनी तहँ लाइ कै बैठहु, गुरु तैँ करि पहिचाना ।
निरखहु नैनन देखि मस्त ह्वै, का करि सकहु बखाना ॥३॥

*पास से ।

दियो दुआ* गुरु जियहु जुगन जुग, निर्भय भये निदाना।
जगजीवन सुख भयो अनँद मन, अचल भयो बलवाना ॥४॥

॥ शब्द १७ ॥

मनुआँ साँची प्रीति लगाव।
एकहिँ तँनी सदा राखु चित, दुबिधा नहिँ लै आव ॥१॥
दुनियाँ कै चार बिचार अहैँ जो, सकल सबै बिसराव।
राखहु चित्त मित्र वहि जानहु, ताही तेँ लै लाव ॥२॥
पाँच पचीस एक ठिन† आहैँ, जुगुति तेँ एइ समुझाव।
डोरि पोढ़ि जो लागहि चरनन, बनि है तबै बनाव ॥३॥
सतगुरु मूरति निरखि रहौ तहँ, सूरति सुरति मिलाव।
जगजिवनदास अमल‡ तेँ माते, सकल सो भरम बहाव ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

मन मैँ जेहिँ लागी जस भाई।
सो जानै तैसै अपने मन, का सोँ कहै गोहराई ॥ ॥
साँची प्रीति की रिति है ऐसी, राखत गुप्त छिपाई।
झूँठे कहुँ सिखि लेत अहहिँ पढ़ि, जहँ तहँ झगरा लाई ॥२॥
लागे रहत सदा रस पागे, तजे अहहिँ दुचिताई।
ते मस्ताने तिन्हहीँ जाने, तिन्हहिँ को देइ जनाई ॥३॥
राखत सीस चरन तेँ लागा, देखत सीस उठाई।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, सूरति रहे मिलाई ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

ज्ञान गुन कवन कहै रे भाई।
माया प्रबल अंत कछु नाहीँ, सब कोइ पर्‍यो भुलाई ॥१॥

---

*असीस। †जगह। ‡नशा।

संकर तारी लाइ रहे हैं, जोतिहिं जोति मिलाई ।
ब्रह्मा बिस्नु मन थकित भजन तें, तिनहूँ अंत न पाई ॥२॥
उहाँ रघुपति उहाँ कृस्न कहायो, नाच्यो नाच नचाई ।
यह सब करिकै देखि तमासा, फिरि वोहि जोति समाई ॥३॥
रह्यो अलिप्त लिप्त नहिं काहू, जिन जैसे मन लाई ।
जगजीवन बिस्वास जिन सुमिरा, तहँ तस दरस दिखाई ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

बौरे करै गुमान न कोई ।
जिन काहू गुमान मन कीन्हा, गयो छिनहिं माँ खोई ॥१॥
जनम पाइ जग यह नर देंही, मन जानै नहिं कोई ।
दियो बिसराइ नाम को मन तें, भला न जानहु कोई ॥२॥
निर्मल नाम जानि मन सुमिरै, अघ क्रम गे सब धोई ।
बड़े भाग करम तेहिं जागे, सतसँग चित्त समोई ॥३॥
भा निर्बाह बाँह गहि राख्यो, किरपा जा पर होई ।
जगजीवन न्यारे सबही तें, जानै अंत न कोई ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

जग बिनु नाम बिर्था जानु ।
करहु मन परतीति अपने, खैंचि सूरति आनु ॥१॥
धाम दौलत हरखु ना तकि, खाक करिकै मानु ।
यह तो है दिन चार का सुख, ओस तकि झरि भानु ॥२॥
देखि दृष्टि पसारि सब, चलि गये करिके पयानु ।
नाम रस जिन पिया तिन्ह कहँ, अमर संत बखानु ॥३॥
साथ गुरु के रहे जुग जुग, रूप तकि निर्बानु ।
जगजीवन बिस्वास करिकै, सत्तनामहिं मानु ॥४॥

॥ शब्द २२ ॥

रे मन रहौ प्रीति लगाय ।
झूठि आसा और है सब, देहु सो बिसराय ॥१॥
बुंद तें इक तीनि चौथो, लियो छिनहिं बनाय ।
नाम सो वह अहै ऐसो, रहहु ते रट लाय ॥२॥
दियो जोति पसारि कै सब, रहे इक ठहराय ।
साधि साधन तका जिन केहुँ, छकित भे रस पाय ॥३॥
अहै परगट छिपा नाहीं, देत हौं बतलाय ।
जगजिवन नित पास गुरु के, चरन रहि सिर नाय ॥४॥

॥ शब्द २३ ॥

बौरे नाम भजु मन जानि ।
सत्तनामहिं गहो अंतर, लियो आहै छानि ॥१॥
त्यागि दुबिधा करहु धीरज, मानु लाभ न हानि ।
सब्द सत्त पुकारि भाखत, लीजिये यहि मानि ॥२॥
लियो केते तारि छिन महँ, कहै कौन बखानि ।
दास कहँ जहँ पर्‌यो संकट, लियो तहँ सुधि आनि ॥३॥
कौन को करि सकै बरनन, मैं अहौं काह कितानि ।
जगजीवन काँ करहु दाया, निरखि छबि निर्बानि ॥४॥

॥ शब्द २४ ॥

प्रभुजी अब मैं कहौं सुनाई ।
देखि चरित्र सबै दुनियाँ के, अब कछु कहा न जाई ॥ १ ॥
करहिं बन्दगी सीस नाइकै, पाछे करि कुटिलाई ।
ताहि पाप संताप परहिंगे, परैं नरक माँ जाई ॥२ ॥

दौलत धाम देखि कै माते, चेत हेत नहिं आई ।
धाइ धाइ औरहिं समुझावैं, बिनु जल बूड़े जाई ॥३ ॥
करहिं पाप औ ज्ञान कथहिं बहु, आपन बिभौ बढ़ाई ।
ते नर अंत नर्क माँ गलिगे, कहत सब्द गोहराई ॥४॥
डिंभ बढ़ाइ कपट करि पूजा, झूठै ध्यान लगाई ।
दिना चारि जग सबहिं दिखाइनि, हारिनि जनम नसाई ॥५॥
साधु ते सीतल रहै दीन ह्वै, जनमि जगत सुख पाई ।
जगजीवन जो मन महँ जानै, तिन पर रहौ सहाई ॥६॥

॥ शब्द २५ ॥

साधो रसनि रटनि मन सोई ।
लागत लागत लागि गई जब, अंत न पावै कोई ॥१॥
कहत रकार माकरहिं माते, मिलि रहे ताहि समोई ।
मधुर मधुर ऊँचे को धायो, तहाँ अवर रस होई ॥२॥
दुइ कै एक रूप करि बैठे, जोति झलमली होई ।
तेहि काँ नाम भयो सतगुरु का, लीह्यो नीर निचोई ॥३॥
पाइ मंत्र गुरु सुखी भये तब, अमर भये हहिं वोई ।
जगजीवन दुइ कर तेँ चरन गहि, सीस नाइ रहे सोई ॥४॥

॥ शब्द २६ ॥

मन तुम का औरहिं समुझावहु ।
आपुहिं समुझहु आपुहिं बुझहु, आपुहिं घट माँ गावहु ॥१॥
ऊँचे जाहु निचे काँ आवहु, फिरि ऊँचे कहँ धावहु ।
जवनि रसनि* लागी तुमहीं काँ, तौनिउ रसनि मिटावहु ॥२॥

---

*स्वाद, चाट ।

देखहु मस्त रहहु ह्वै मनुआँ, चरनन सीस नवावहु ।
ऐसी जुगुति रहहु ह्वै लागे, कबहुँ न यहि जग आवहु ॥३॥
जुग जुग कबहुँ अंग नहिं छूटै, और सबै बिसरावहु ।
जगजीवन परकास बिदिति छबि, सदानंन्द सुख पावहु ॥४॥

॥ शब्द २७ ॥

साधो जस जाना तस जाना ।
जैसा जा को जानि परा है, सो तैसै मन माना ॥१॥
अपनी अपनी बानी बोलहिं, हमहिं सिखावहिं ज्ञाना ।
अपने मन कोइ समुझत नाहीं, आहहिं बड़े हेवाना ॥२॥
लागत नहिं जागे की बातैं, सोवत सबै निदाना ।
सोवत चौंकि कै जागि परे जे, आगम दीन्ह तेवाना* ॥३॥
चले पंथ चढ़ि गये गगन कहँ, थिर ह्वै रहे ठहराना ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, तकि सूरति निर्बाना ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

साधो जिन्ह जाना तिन्ह जाना ।
जेहिकाँ जैसे जानि परा है, तेहिं तैसे मन माना ॥१॥
माला मुद्रा तिलक बनाइ कै, पूजहिं काँस पषाना ।
जस बिस्वास बँध्यो है जिन्ह के, तेहि काँ तस परमाना ॥२॥
जो जस जानत तेहिं तस जानत, अस है कृपानिधाना ।
अपरम्पार अपार अहै गति, को करि सकै बखाना ॥३॥
व्यापि रह्यो जल थल महँ आपुहिं, कहँहु नहीं बिलगाना ।
जगजीवन न्यारा है सब तें, संतन महँ ठहराना ॥४॥

---

*सोच, फ़िकर ।

॥ शब्द २९ ॥

साधो परगट कहौं पुकारी ।
दुइ अच्छर ततसार अहै एइ. नाम की बलिहारी ॥१॥
लीन्ह्यो छानि जानि कै मन तें, दृढ़ कै डोरि सँभारी ।
लागि रहै निसु बासर मन तें, कबहूँ नाहिं बिसारी ॥२॥
बिन बिस्वास आस नहिं पूजै, भूला सब संसारी ।
देही पाइ कनक काया को, डारिनि जनम बिगारी ॥३॥
देत अहौं सुनाइ सिखाये, सत मत गहो बिचारी ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, निरखत अहै निहारी ॥४॥

॥ शब्द ३० ॥

साधो कहत अहौं गोहराइ ।
सत्त नाम रस अम्रित पीवहु, चरन तें लै लाइ ॥१॥
पिया नहिं सो जिया नाहीं, रहे मन पछिताइ ।
काल मारिके खाइ लीन्हो, केहु लीन्ह नाहिं बचाइ ॥२॥
ज्ञान बेद गिरंथ भाषत, दीन्ह प्रगट बताइ ।
भजै नहिं सो जानि मन महँ, भाड़ पड़े सो जाइ ॥३॥
भजत तजत अँदेस मन रति, नाम की सरनाइ ।
जगजिवनदास मिटाइ संकट, जनहिं लेहिं बचाइ ॥४॥

॥ शब्द ३१ ॥

साधो नाम तें रहु लौ लाय । प्रगट न काहू कहहु सुनाय ॥१॥
झूठै परगट कहत पुकारि । ता तें सुमिरन जात बिगारी ॥२॥
भजन बेलि जात कुम्हिलाय । कोनि जुक्ति कै भक्ति दृढ़ाय ॥३॥
सिखि पढ़ि जोरि कहै बहु ज्ञान । सो तौ नाहिं अहै परमान ॥४॥
प्रीति रीति रसना रहै गाय । सो तौ राम काँ बहुत हिताय ॥५॥

सो तो मोर कहावत दास । सदा बसत हौँ तिन के पास ॥६॥
मैँ मरि मन तेँ रहे हैँ हारि । दिप्र जोति तिन कै उजियारि ॥७॥
जगजिवनदास भक्त भे सोइ । तिनका आवागवन न होइ ॥८॥

॥ शब्द ३२ ॥

साधो रटत रटत रट लावा ।
दुइ अच्छर बिचारि कै लीन्ह्यो, सो अन्तर लै लावा ॥१॥
परगट कहे साँचु नहिँ मानत, सुनि काहू नहिँ भावा ।
काहू के परतीत नहीं है, केतो कहि समुझावा ॥२॥
करता नाम अहै अस खाविँद, जिन्ह सब रचि के बनावा ।
हम का जानि परत है सोई, तेहि काँ सीस नवावा ॥३॥
लियो चढ़ाइ गयो मंडफ काँ, गुरु तेँ भेँट करावा ।
मिटिगा जापु आपु माँ मिलिगा, एकहि एक कहावा ॥४॥
रहि निरधाइ दृष्टि तेँ देखा, झलकि दरस तब पावा ।
जगजीवन ते निर्भय ह्वैगे, अभय निसान बजावा ॥५॥

॥ शब्द ३३ ॥

साधो मैँ प्रभु तेँ लो लाई ।
जानौँ नहीं अजान अहौँ मैँ, उनहीं राह बताई ॥१॥
कोइ निंदा कोइ अस्तुति करई, कोई करै दिनताई ।
जो जैसी करि मन महँ जानै, तेहिँ तस प्रगटहि जाई ॥२॥
कोइ कहे कूर* पूर नहिँ भाषै, रामहिँ नाहिँ डेराई ।
मैँ तो अहौँ इक नाम भरोसे, ताही की प्रभुताई ॥३॥
होइ है सोई टरे का नाहीं, ब्रह्मा बचन सुनाई ।
साधुन की जे निंदा करि हैँ, परि हैँ नरक ते जाई ॥४॥

---

*कटु बचन ।

नैन देखि कै सरवन सुनि कै, कहत अहौं गोहराई ।
जगजीवन कहि साँच सब्द यह, छोड़ि देहु गफिलाई ॥२॥

॥ शब्द ३४ ॥

साधो नाम भजे सुभ होई ।
तजि हंकार गुमान दीन ह्वै, सीतल अंतर सोई ॥१॥
लै लगाय रहि सत्तनाम तें, संगति नाहिं बिछोई ।
किये गुमान भक्त जन तें जिन्ह, तेऊ गये बिगोई ॥२॥
समय पाइ जिन जाना नाहीं, मोह के भर्म फँसोई ।
अंत काल कष्टित जम कीन्हो, चले मनहिं मन रोई ॥३॥
रहौ जगत माँ लीन नाम तें, मैं तैं दुबिधा धोई ।
जगजीवन भौजाल छूटिगा, चरनन रहे समोई ॥४॥

॥ शब्द ३५ ॥

जो कोई घरहिं बैठा रहै ।
पाँच संगत करि पचीसौ, सब्द अनहद लहै ॥१॥
दीन सीतल लीन मारग, सहज ब्राहनि बहै ।
कुमति कर्म कठोर काठहिं, नाम पावक दहै ॥२॥
मारि मैं तैं लाय डोरी, पवन थाँभे रहै ।
चित्त कर तहँ सुमति साधू, सुरति माला गहै ॥३॥
राति दिन छिन नाहिं छूटै, भक्त सोई अहै ।
जगजीवन कोइ संत बिरला, सब्द की गति कहै ॥४॥

॥ शब्द ३६ ॥

सत्त नाम बिना कहौ, कैसे निस्तरिहौ ।
कठिन अहै माया जार, जा को नाहिं वार पार,
कहौ काह करिहौ ॥ १ ॥

हो सचेत चौंकि जागु, ताहि त्यागि भजन लागु,
अंत भरम परिहौ ।
डारहि जमदूत फाँसि, आइहि नहिं रोइ हाँसि,
कौन धीर धरिहौ ॥ २ ॥
लागहि नहिं कोइ गोहारि, लेइहि नहिं कोइ उबारि,
मनहिं रोइ रहिहौ ।
भगनी सुत नारि भाइ, मातु पितु सखा सहाइ,
तिनहिं कहा कहिहौ ॥ ३ ॥
आइहि नहिं डोलि बोलि, नैनन टक लाय रहिहौ ।
काहुक नहिं कोउ जगत, मनहिं अपने जानु गत,
जीवत मरि जाहु दीन अंतर माँ रहिहौ ॥४॥
सिद्ध साध जोगि जती, जाइहि मरि सब कोई,
रसना सतनाम गहि रहिहौ ।
जगजिवनदास रहौ बैठे, सतगुरु के पास चरन,
सीस धरि रहिहौ ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३१ ॥

मनहिं मारि गहहु नाम, देत हौं सिखाई ।
सोवत जागत ठाढ़ि बैठि, बिसरि नाहिं जाई ॥१॥
तजि दे गुमान गर्ब, मैं तैं गफिलाई ।
निंदा कुटिलइ बिबाद, दूरि दे बहाई ॥२॥
पाँच पचीस खैंचि ऐंचि रखिये अरुझाई ।
सीतल सुसील छिमा, करि रहु दिनताई ॥३॥
ऐसी जुक्ति भक्ति की, सो सब्द कहि बताई ।
जगजीवन गुरु चरनन, रहहु चित्त लाई ॥४॥

॥ शब्द ३८ ॥

अरे मन रहहु चरन तें लाग । इत उत सकल देहु तुम त्याग १
दुइ कर जोरि कै लीजै माँग । सोवत उठहु मोह तें जाग २।
नयन निरखि छबि रहु रस पाग । कर्म भर्म सब जैहहिं भाग ॥३
जगजीवन अस रहु अनुराग । जानु आपने तबहीं भाग ॥४॥

॥ शब्द ३९ ॥

सुमिरहु मन सत्तनाम सकल धंध त्यागी ॥टेक॥
काहे अचेत सूत बौरे, चौंकि जगु अभागी ।
ज्ञान ऐना देखि करि कै, उलटि रहहु लागी ॥१॥
छिया बुंद कै पहिरि जामा, भयो आय खाकी ।
जायगा घर पवन अपने, रहै ना कछु बाकी ॥२॥
आयो एहि जग कौल करि कै, लियो सत सुधि माँगी ।
भूलि गा वह सब्द पछिला, माति* मद रस पागी ॥३॥
दौरु मुरख चूकु ना तैं, दृढ़ मत अनुरागी ।
जगजिवन बिस्वास के बसि, होय तब बैरागी ॥४॥

॥ शब्द ४० ॥

साधो सब्द कहै सो करिये ।
अंतर नाम रहै रटि लागी, गुप्त जक्त माँ रहिये ॥१॥
तजहु कुसब्द बोलु सुभ बानी, अपने मारग चलिये ।
करि बिबेक अरु समुझि ज्ञान तैं, भरम भुलाइ न परिये ॥२॥
करम काँट† पर मारग आहै, खबरदार पग धरिये ।
जगजीवन चलु आपु बचाई, भवसागर तब तरिये ॥३॥

---

*मस्त । †काँटा ।

॥ शब्द ४१ ॥

साधो नाम जपहु मन जानि ।
जनम पाइ सुफल करि जावहु, दृढ़ प्रतीत जिय आनि ॥१॥
रहहु गुप्त गहे अंतर माँ, मानहु लाभ न हानि ।
अस दृढ़भक्ति करहु गहि चित महँ, कहत हौँ भेद बखानि ॥२॥
हर्ष सोक ते समुझे रहिये, ज्ञान तत्त लै छानि ।
इत उत कबहुँ चलै मन नाहीँ, रहि अंतर ठहरानि ॥३॥
ऐसी जुगत जगत माँ रहिये, सीतल सील पिछानि ।
जगजीवन अमृत पिउ अम्मर, जोतिहिँ रहहु समानि ॥४॥

॥ शब्द ४२ ॥

अब जग पर्यो धूमा धाम ।
चेत नाहीँ अहै गाफिल, भजत नाहीँ नाम ॥१॥
करत है कुटिलाइ निंदा, काम करम हराम ।
पछिताहुगे मन समुझु तकु तन, होइ दुक्ख बियाम ॥२॥
काटिहैँ जम दूत कुल्हरी, अइहै नहिँ कोइ काम ।
होइहि नास निरास होइहै, भूलिहै धन धाम ॥३॥
झूठ कहि बहु करहि बातैँ, खाइ फूलि अराम ।
तोरि पाँजर नरी* दाबहिँ, भूलिहै इतमाम† ॥४॥
देहु नहिँ दुख दया राखहु, गहहु मन महँ नाम ।
जगजीवन बिस्वास करि, सो पाइ सुख बिस्राम ॥५॥

॥ शब्द ४३ ॥

मन महँ नाम हीँ भजि लेहु ।
बहुरि फिरि पछिताहुगे बहु, दोस नाहीँ देहु ॥१॥

---

*नटई, गला । †इहतिमाम ।

करहु अंतर ज्ञान अपने, जियत सब तजि देहु ।
अंत भल कछु होय नाहीं, कागद गलि ज्यों मेहु* ॥२॥
भूलु नहिं जग देखि माया, छुटहिं सबै सनेहु ।
गहु बिचारि सँभारि के चित, झूँठि काया गेहु ॥३॥
देखु नैन उघारि जग सब, जात लेहू लेह ।
जगजिवनदास करार नहिं, गुरु चरन सीसहिं देहु ॥४॥

॥ शब्द ४४ ॥

साधो देखि करै नहिं कोई ।
देखी करै बूझि नहिं आवै, भरम भुलाने सोई ॥१॥
जे साधुन तें करै समिताई, परै नरक महँ सोई ।
विद्या बाद बिबाद करहि हठ, गयो सर्ब सो खोई ॥२॥
बहु बकबाद चित्त थिर नाहीं, कहि भाखहुँ मैं तोई ।
भजन बिहून मोह के बस परि, मुक्ति न कैसँहु होई ॥३॥
सो ऐसै सब देखि परतु हैं, भक्त है बिरला कोई ।
जगजीवन गुप्तहिं मन सुमिरहु, सूरति चरन समोई ॥४॥

॥ शब्द ४५ ॥

निर्भय ह्वै के नाचु, नाम धुन लाव रे ॥टेक॥
इतनी बिनती सुनि लेव मेरी, इत उत कतहुँ न धाव रे १
औसर बीति बहुरि पछितैहौ, याही बना बनाव रे ॥२॥
देखु बिचारि कोऊ थिर नाहीं, कोऊ रहै न पाव रे ॥३॥
दुइ अच्छर अंतर रटि रहहू, तत्त सो मंत्र सुनाव रे ॥४॥
जगजीवन बिस्वास आस गहु, चरनन सीस नवाव रे ॥५॥

---

*बरसात ।

॥ शब्द ४६ ॥

साधो भक्ति करै अस कोई ।
जगत रमै अस सहज रीति तें, हर्ष सोक नहिं होई ॥१॥
रमत रहै मन अंतर भीतर, जिभ्या बोलै न सोई ।
जो बोलै तौ डोलै वह मत, पुष्ट न कबहूँ होई ॥२॥
कैसे जपै मंत्र वह अजपा, दुबिधा तें गा खोई ।
जक्त बेद के भेदहिं अटके, रहे बिमुख ह्वै रोई ॥३॥
तीरथ ब्रत तप दानहिं भूले, अभिमानहिं बिष बोई ।
आसा बाँधिनि भये निरासा, पछिताने मन वोई ॥४॥
काया यह तौ अहै खाक की, किलबिष अहै समोई ।
न्रिमल होए कै नहिं उपाय कछु, केतो जल से धोई ॥५॥
लावत खाक खाक मन नाहीं*, भ्रमि भ्रमि ज्ञान बिगोई ।
मैं तैं पड़ा करम की फाँसी, नहीं जोग दृढ़ होई ॥६॥
कबिता पंडित सुरता ज्ञानी, मन महँ देख्यो टोई ।
सोभा चाहि के भूलि फूलिगे, वह सुधि गई बिछोई† ॥७॥
मन मथि मनि लै लाइया रस, लीन्ह्यो तत्त बिलोई ।
जगजीवन न्यारे निर्बानी, मस्त भे चरन समोई ॥८॥

॥ शब्द ४७ ॥

साधो कलि‡ जन§ बिरला कोई ।
भक्त सो जग रहि न्यारे सब तें, अँतर डोरि दृढ़ होई ॥१॥
कोऊ अन्न तजै पय पीवै, बरत रहै सब कोई ।
महिमा जानत आवत नाहीं, गये सर्ब सो खोई ॥२॥

---

*शरीर पर भस्म मल ली पर मन को भस्म नहीं किया । †जुदा, दूर । ‡कलियुग में । §भक्त ।

कोऊ धावत तीरथ न्हावै, मन नहिँ देख्यो टोई ।
स्थाने हइ मन मैल महा अघ, निर्मल कबहुँ न होई ॥३॥
छाँड़त लोन मोम दिल नाहीं, करत तपस्या सोई ।
कंद मूल खनि* खात जँगल माँ, ऐसहुँ भक्ति न होई ॥४॥
तन दाहत कर घींचहिँ तूरत† ठार‡ रहत है सोई ।
आसन मारि बिँबौरी§ होवै, तबहूँ भक्ति न होई ॥५॥
माला सेल्ही लिहे सुमिरनी, तिलक देहि रचि सोई ।
भस्म लाइ मौनी ह्वै बैठे, तबहूँ भक्ति न होई ॥६॥
जगत रहै सोवै नहिँ कबहूँ, गावै बजावै सोई ।
महा दीन ह्वै रहै जगत माँ, तबहूँ भक्ति न होई ॥७॥
पढ़ै पुरान गरंथ रात दिन, करै कबिताई सोई ।
ज्ञान कथै पद सब्द कहै बहु, तबहूँ भक्ति न होई ॥८॥
दीन्हेउ केहु चढ़ाइ गगन कहँ, आइ नीचे रहे रोई ।
थिर ह्वै वहाँ रहन नहिँ पावै, माया रहे समोई ॥९॥
सतगुरु पारस जेहिँ काँ बेधा, मन का मैल गा धोई ।
जगजीवन ते भक्त कहाये, सूरति बिलग न होई ॥१०॥

॥ शब्द ४८ ॥

तूँ गगन मँडल धुनि लाव रे ॥टेक॥
सुरति साधि के पवन चढ़ावहु, सकल सबै बिसराव रे ॥१॥
थिर ह्वै रहि ठहराय देखु छबि, नयन दरस रस पाव रे ॥२॥
सो तुम होहु मस्त लै मनुआँ, बहुरि न एहि जग आव रे ३
जगजिवनदास अमर डरपहु नाहिँ, गुरु के चरन चित लाव रे ४

*खोद कर । †ऊर्द्धबाहु का भेष धरना । ‡बर्फ़ में रहना या ठाढ़े यानी खड़े रहना । §जिस के बदन पर मिट्टी जम जाने से दीमकों ने बिबौट यानी बिल बना लिये हैं ।

॥ शब्द ४९ ॥

याहि बन गगन बजाव बँसुरिया ।
कौनहुँ नहिँ गुमान तकि भूलो, अंग अंग गलि जाइ पसुरिया १
इहाँ ते कोइ रहै नहिँ पाछेहि, चला जात है साँझ सबेरिया ।
धैकै पकरि बाँधि लैजाई, कोउ न राखि सकहि बरियरिया* ॥२॥
एहि का अंत खोज कछु नाहीं, आवत जात रहट की घरिया ।
कोउ फूटत कोउ छूँछ पानि नहिँ, कोनिउ जात अहै जल भरिया३
अब तू दौरि धाइ नहिँ भटकसि, ले सँवारि नहिँ होवे करिया ।
जगजीवन निर्मल छबि मूरति, निरखु देखु मन मस्त करैया ४

॥ शब्द ५० ॥

सुनु बिनु नाम नहिँ निस्तार ।
बेद ज्ञान गरंथ भाखै समुझु सो तत सार ॥१॥
भूलु नाहिँ सम्हारु आपुहिँ कठिन माया जार ।
डारि फाँसी बाँधि लैहै नाहिँ छूटनहार ॥२॥
जानि पाये जुगति ऐसी नाम अजपा धार ।
ताहि सँग तू रंग रस लै पहुँचु गुरु दरबार ॥३॥
गुरू का चौगान आसन निर्म्मल उँजियार ।
पहुँचि निरखु बिहून† नैना लागिहै तब पार ॥४॥
सीस दैकै रहा चरनन त्यागु सर्ब बिचार ।
जगजिवन दास भक्त होवे छूटि माया जार ॥५॥

॥ शब्द ५१ ॥

साधो भक्ति करै अस कोइ ।
अंतरै दुइ अछर सुमिरै, भक्त तबहीं होइ ॥१॥

---

*जबरदस्ती से । †बिना, बग़ैर ।

तजै बाद बिबाद सब तें, दुक्ख नहिं केउ देइ ।
रहै सहज सुभाव अपने, भक्ति मारग सोइ ॥२॥
करै नहिं कछु डिंभ कबहूँ, डारि मैं तैं खोइ ।
दीन लीनं सीतलं मन, गुप्त राखै सोइ ॥३॥
कहै नहिं कछु प्रगट भेदं, चित्त चरन समोइ ।
जगजिवन बहु बक्कबाद त्यागै, निर्मलं तब होइ ॥४॥

॥ शब्द ५२ ॥

अरे मन भजहु अजपा बानि ।
भूलु नहिं तकि जगत माया, सर्ब बिरथा जानि ॥१॥
भाग बड़ नर देँह पायो, समुझि नहिं मन आनि ।
अंत फिर पछिताइहाै, जब होइ तन की हानि ॥२॥
करहिं त्रास निरास होइहैा, दूध नीर ज्याें छानि ।
काम नहिं कोइ आइहै, फिर खैंचि लेहै तानि ॥३॥
काल करिहै हालि औरै, मानिहै नहिं कानि ।
खाँड जैसे मिलाइ तक्कर*, पाइ जाइहि सानि ॥४॥
जिवत लेहु सँवारि तन मन, वारि प्रीतिहिं ठानि ।
जगजीवन अब नाहिं डर, जैा चरन रहि लपटानि ॥५॥

॥ शब्द ५३ ॥

अरे मन अनत नाहीं धाव ।
गगन कोठे बैठि रहु तैं, सकल सब बिसराव ॥१॥
तखत नीचे बैठि रहि करि, माथ गुरु काँ नाव ।
ले सँभारि सँवारि आपुहिं, मिलहि नहिं फिर दाव ॥२॥

---

*मट्ठा ।

भूलि के तू फूलु नहिँ जग, झूठ सबै बनाव ।
अचल नहिँ चलि जायगा, सब मृतक काया गाँव ॥३॥
अमर होउ सत परस करि के, देत इहै सिखाव ।
जगजीवन के सत्तगुरु तुम, दास तुम्हरे आउँ ॥४॥

॥ शब्द ५४ ॥

सुनु सखि अब मैं कहौं समुझाई ।
बिनु पिय भेँट भटकि तुम फिरिहौ, इहै मंत्र मैं कहा सुनाई १
करहु बिचार सँवार चहौ जो, कहौं करहु सो तैसे जाई ।
यह उपदेस अँदेस मिटैहै, गहु दृढ़ मता छाडु दुचिताई ॥२॥
पाँचो साथ हितू तोरे बैरी, पल पल देत इहै भरमाई ।
नारि पचीस लिहे सँग डोलहिँ, इन तेँ नहिँ कछु तोर बसाई ३
एइ सब लाइ लेहु सँग अपने, गगन मँदिल चल पहुँचो जाई ।
सात भँवरि करि पिय तेँ भेँटो, सर्ब कलपना सो मिटि जाई ४
निरति निरखि करि यह मति तुम्ह मिलि, कबहुँ न छूटै
अचल सगाई ।
जगजीवन सखि होइ सोहागिन, सत की सेज सूति सुख पाई ५

॥ शब्द ५५ ॥

नैनन देखि कहा नहिँ जाई ।
भजहिँ न नाम काम करि जग के, कहहिँ बहुत अधिकाई १
बहु बकबाद बिबाद करहिँ हठ, केतौ कहौ समुझाई ।
निंदा करहिँ आपनी मानहिँ, परहिँ नरक महँ जाई ॥२॥
माला सेल्ही पहिरि सुमिरिनी, चंदन तिलक बनाई ।
सुमति सील तेँ न्यारे बासी, जगतहिँ ठगहिँ सिखाई ॥३॥

काया गुदरा पहिरे डोलहिँ, समुझि देखु मन भाई ।
जगजीवन जग सहजै रहिये, मन तेँ डोरि लगाई ॥४॥

॥ शब्द ५६ ॥

ए मन जोगी करहु बिचारा ।
कहँ तेँ आइसि अहसि कहाँ अब, कहाँ तोर घर द्वारा ॥१॥
को तैँ अहसि चीन्हु तैँ आपुहिँ, का हित भयो बिसारा ।
उलटि बिचारु बिसारु जगत सब, साँईं जहाँ तुम्हारा ॥२॥
आयो फूटि टूटि नीरहिँ मिलि, माया काँ बिस्तारा ।
तेहिँ रत भये गये अभिमानी, कबहुँ न कीन्ह सम्हारा ॥३॥
खबरदार हो खाक लाव सत, सुन्य होहु बिचारा ।
जगजीवन आसन दृढ़ करि कै, बैठु जहाँ उँजियारा ॥४॥

॥ शब्द ५७ ॥

कलि की रीति सुनहु रे भाई ।
माया यह सब है साँईं की, आपुनि सब केहु गाई ॥१॥
भूले फूले फिरत आय पर, केहु के हाथ न आई ।
जो है जहाँ तहाँ हीं है सो, अंत काल चाले पछिताई ॥२॥
जहाँ होय नाम कै चरचा, तहाँ आइ के और चलाई ।
लेखा जोखा करहिँ दाम का, पड़े अघोर नरक महँ जाई ॥३॥
बूड़हिँ आपु औरन कहँ बोरहिँ, करि झूठी बहुतक बकताई ।
जगजीवन मन न्यारे रहिये, सत्त नाम तेँ रहु धुनि लाई ॥४॥

॥ शब्द ५८ ॥

नाम बिनु नहिँ कोउ कै निस्तारा ॥टेक॥
जान परतु है ज्ञान तत्त तेँ, मैँ मन समुझि बिचारा ।
कहा भये जल प्रात अन्हाये, का भये किये अचारा ॥१॥

कहा भये माला पहिरे तें, का दिये तिलक लिलारा ।
कहा भये ब्रत अन्नहिं त्यागे, का किये दूध अहारा ॥२॥
कहा भये पँच अगिन के तापे, कहा लगाये छारा ।
कहा उर्धमुख धूमहिं घोंटे, कहा लोन किये न्यारा ॥३॥
कहा भये बैठे ढाढ़े तें, का मौनी किहे अमारा* ।
का पँडिताई का बकताई, का बहु ज्ञान पुकारा ॥४॥
गृहिनी† त्यागि कहा बन बासा, का भये तन मन मारा ।
प्रीति बिहून हीन है सब कछु, भूला सब संसारा ॥५॥
मंदिल‡ रहै कहूँ नहिं धावै, अजपा जपै अधारा ।
गगन मँडल मनि बरै देखि छबि, सोहै सब तें न्यारा ॥६॥
जेहि बिस्वास तहाँ लै लागी, तेहि तस काम सँवारा ।
जगजीवन गुरु चरन सीस धरि, छूटि भरम कै जारा ॥७॥

॥ शब्द ५९ ॥

साधो सहज भाव भजि रहिये ।
दुइ अच्छर अंतर महँ गहि रहि, भेद न काहु तें कहिये ॥१॥
जस बस्ती तैसै जंगल है, तस गृह एकहि फहिये§ ।
एहि उपाय तें पाय नाम कहँ, भक्त होन जब चहिये ॥२॥
भाग जागि तब जानु आपना, निसु दिन नहिँ बिसरैये ।
लागी रहै लगाये ऐसे, दरसन अंतर पैये ॥३॥
भैंट भई सतगुरु तें तबहीं, मगन मस्त ह्वै रहिये ।
जगजीवन करि आस नाम की, नैन निरखि छबि रहिये ॥४॥

---

*संख्या (जप की) । †स्त्री । ‡घर । §समझो ।

॥ शब्द ६० ॥

साधो मन नहिँ अंत बहाव।
जो मन बहै तो रहै कवन बिधि, गहै कवन बिधि नाँव ॥१॥
पानी* नेत्र बास है तहवाँ, तकि चलि इहै सुभाव।
धावत पल पल जो हितु लागत, तहँ करत बेलमाव† ॥२॥
काया गढ़ यह गगन कोठरी, तहाँ खैंचि बैठाव।
जो कहुँ जाय जाय नहिँ पावै, तहाँ ऐँचि लैआव ॥३॥
रहु थिर तहँ ठहराइ बैठिकै, सत्त सुकृत लै लाव।
जगजीवन निर्गुन निर्बानी, सीस चरन तर लाव ॥४॥

॥ शब्द ६१ ॥

आइ जग काहे मन बौराना ॥टेक॥
जौन कौल करि व्हाँ तैँ आयो, समुझि देखु वह ज्ञाना ॥१॥
तकि माया बस भूलि परेसि तैँ, सत्त नाम नहिँ जाना ॥२॥
जो उपजा सो बिनसि जायगा, होइ है अंत चलाना ॥३॥
सब चलि जाइ अचल नहिँ कोई, ससि गन मुनि जन भाना ॥४॥
जगजीवन सतगुरु समरथ के, चरन रहो लपटाना ॥५॥

॥ शब्द ६२ ॥

साधो बिनु सुमिरन तरिहैँ नाहीँ।
दान पुन्न के रहहिँ भरोसे, केतो तिरथ नहाहीँ ॥१॥
बृच्छ दान फल देत और कहँ, वै तो बलदे‡ नाहीँ।
दादुर देँह बर्ग नहिँ बलदै, बसे रहैँ जल माहीँ§ ॥२॥
कन्द मूल भछि पवन अहारी, पय पी तनहिँ दहाहीँ।
नहिँ निर्बाह अहै याहू तेँ, परहिँ अंत भव माहीँ ॥३॥

---

*प्रकाश। †ठहराव। ‡बदले। §मेँढक की जाति पानी मेँ रहने से नहीँ बदल जाती।

आसन मारि रहैं दृढ़ बैठे, अन्तर सूझै नाहीं ।
मन महँ फूलि भूलि गे डोरी, अंत काल पछिताहीं ॥४॥
होइ निसंक नाम कोरति गहु, रहु थिर अंतर माहीं ।
जगजीवन गुरु बास गगन महँ, सूरति राखहु ताहीं ॥५॥

॥ शब्द ६३ ॥

अरे मन अबहूँ नामहिं जान ।
आयेहु कौल करि भूलेहु सुख माँ, काहे भयहु हेवान ॥१॥
जामा साँईं सो पहिरायो, तेहि का कौन गुमान ।
केते गये पुराने चिराने, अनगन करूँ न बयान ॥२॥
टोपी सिखर बास करु तहवाँ, परसु सुरति निर्बान ।
छबि अनूप कछु बरनि न आवै, रबि ससि करौं कुर्बान ॥३॥
देखत रहहु दृष्टि नहिं टारहु, इहै सिखावौं ज्ञान ।
जगजीवन बिस्वास किहे रहु, और नहीं कछु आन ॥४॥

॥ भेद बानी ॥

॥ शब्द १ ॥

रँगि रँगि चँदन चढ़ावहु, साँईं के लिलार रे ॥टेक॥
मन तें पुहुप माल गूँधि कै, सो लै कै पहिरावहु रे ।
बिना नैन तें निरखु देखु छबि, बिन कर सीस नवावहु रे ॥१॥
दुइ कर जोरि कै बिनती करि कै, नाम कै मंगल गावहु रे ।
जगजीवन बिनती करि माँगै, कबहुँ नहीं बिसरावहु रे ॥२॥

॥ शब्द २ ॥

देखि कै अचरज कह्यौ न जाई ।
तीन लोक का जो बनाव है, सो नर देँह बनाई ॥१॥
नख सिख पग कर पेट पीठि करि, सब रचि एकै लाई ।
तेहि माँ लाइ पवन एक पंछी, सर्ब अंग कै राई* ॥२॥
पाँच पचीस ताहि अरुझायो, रच्यो स्वाद अधिकाई ।
अपनी अपनी धावन धावैं, लाग्यो करन कमाई ॥३॥
पर्यो कर्म बस बिसरि गयो सब, सुधि बुधि नाहिँ समाई ।
निसि बासर भरमत ही बीतत, चेत हेत नहिँ आई ॥४॥
वहि घर की सुधि बिसरि गई है, जेइ करि कौल पठाई ।
बंदा तेँ ह्वैगे फिरि गंदा, चले अंत पछिताई ॥५॥
भूला सबै देखि धन माया, केहु के हाथ न आई ।
झूठी आस प्यास पी माते, डारिन्हि सबै नसाई ॥६॥
अहै अचेत सचेत होत नहिँ, केतो कहै बुझाई ।
आइ जगत माँ बिंदु बुंद भा, बुंद मैँ गयो समाई ॥७॥
अबहूँ समुझि देखु मन बौरे, कहत सो अहौँ चेताई ।
जगजीवन कहँ प्रीति नाम से, सकल धंध बिसराई ॥८॥

॥ शब्द ३ ॥

प्रान एहुँ आइ चेत नहिँ कीन्हा ।
निर्गुन तेँ पयान करि आवा, नाहिँ आपु का चीन्हा ॥१॥
वहि मन मिलि कै करता ह्वैगा, अग्नि ज्वाल करि लीन्हा ।
तेहीँ ज्वाल तेँ बुंद निकास्यो, पिंड साज छिन कीन्हा ॥२॥

---

*राजा ।

रुचि भे बहुत त्यागि नहिँ जावै, मैं मैं करि भे लीना ।
परे कर्म बसि हेत गयो बहु, पाछिल सुधि तजि दीन्हा ।।३।।
सुद्धि सँभारि बिचारि लागि रहु, निर्मल नाम गहि लीन्हा ।
जगजीवन ते निर्गुन समाने, चरन कमल चित दीन्हा ।।४।।

॥ शब्द ४ ॥

साधो कवन कहै कथि ज्ञाना ।
उत्तम मध्यिम पान यहु नाहीं, नाहीं पवन प्रमाना ।।१।।
नहिँ सीतल नहिँ गरम अहै यह, नाहीं रुचि कछु आना ।
रचि रचि करि मिलिगा सब माँ है, है न्यारा निर्बाना ।।२।।
खात पियत डोलत सो आपुहिँ, कहै कि मैं नहिँ जाना ।
माया माति* नाच सो नाचै, मैं हौं पुरुष पुराना ।।३।।
ना मैं आयो गयो कहूँ नाहीं, सर्गुन नाहिँ बखाना ।
जगजिवनदास नाम तें लीना, चरन कमल लपटाना ।।४।।

॥ शब्द ५ ॥

साधो को धौं कहँ तें आवा ।
कहँ तें आय कहाँ को अरुझा, फिरि धौं कहाँ पठावा ।।१।।
सो अँदेस सोच मन मोरे, कछु गति जानि न पावा ।
नीरभ† पिता रुधिर माता करि, तेहि तें साजि बनावा ।।२।।
नस औ हाड़ चाम मास करि, नौ दस द्वार बनावा ।
दसौ बंद दरवाजा कीन्ह्यो, सबै जोरि गँठि लावा ।। ३ ।।
सादी‡ पाँच बसे तेहि नगरी, हित बिष रस मन भावा ।
मिलि कै ताहि पचीस संग है, सुमति सुभाव लुटावा ।।४।।

*आशक्त । †बीर्य । ‡सादी=स्वादी अर्थात रस लेने वाले ।

करि परपंच रैन दिन बितयो, मैं तैं जनम गँवावा ।
तीनिउ चौंपल साजि लीन्ह जिन, तिन काँ मन बिसरावा ५
माया प्रबल तिमिर नहिं सूझै, जेहि हित नाम बतावा ।
जगजीवन भव धार पार ह्वै, अभय अलख गुन गावा ॥६॥

॥ शब्द ६ ॥

मन गहु सरन सतगुरु आय ॥ टेक ॥
कोट काया गगन मंदिर, तहाँ थिर भा जाय ।
बैठि सब तैं ऐंठि कै, जग डारि दे बिसराय ॥ १ ॥
साथ के आनाथ भै वे, एक रहि खिसियाय ।
डोरि पाँच पचीस एकहिं, बाँधि कसि अरुझाय ॥ २ ॥
टरै नहिं टक लाय पीवै, अमी अधिक हिताय ।
तृप्त कबहूँ होत नाहीं, प्यास नाहिं बुताय ॥ ३ ॥
लागि पागि कै मस्त भै, सिर धुजा सत फहराय ।
जगजिवन जीवै मरै नाहीं, नाहिं आवै जाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो कौन को धौं आहि ।
कौन डोलत कौन बोलत कौन है सब माहिं ॥ १ ॥
कहाँ तैं बिस्तार कीन्ह्यो, कहाँ आय समाहि ।
समुझि अचरज होत आहै, कहाँ धौं फिरि जाहि ॥ २ ॥
बना काया कोट बास, मवास* कोट के माहिं ।
कोट टूटा कर्म फूटा, रह्यो फिर कछु नाहिं ॥ ३ ॥
गाँव ठाँव औ नाँव नाहीं, गैब गैबी माहिं ।
होय यहु मन जीव तेहि मिलि, एक दूसर नाहिं ॥ ४ ॥

---

*रक्षा, पनाह ।

लेहु अब पहिचानि औसर, बहुरि पैहहु नाहिँ ।
जगजिवनदास सँभार करिकै, चरन भजु मन माहिँ ॥ ५ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो इक बासन गढ़ै कुम्हार ।
तेहि कुम्हार का अंत न पावौ, कैसो सिरजनहार ॥ १ ॥
अग्नि उठाय निकासत पानी*, रचि रँगि रूप सँवार ।
तीनि चौथ दरवाज बनायो, नौ महँ नाहिँ किवार ॥ २ ॥
भीतर रंग बिरंग तिरंगौं, उठत अहहिँ धुधकार ।
पवन ब्रम्ह तहँ बाजहि आपुहिँ, आपु बजावनहार ॥ ३ ॥
आपु जनावत आपुहिँ जानत, आपुहिँ करत बिचार ।
अपुहिँ ज्ञान ध्यान तेँ लाग्यो, आपु बिबेक बिस्तार ॥ ४ ॥
छिन छिन गावत छिन छिन रोवत, छिन छिन सुरति सुधार ।
जगजीवन आपुहिँ सब खेलत, आपुहिँ सब तेँ न्यार ॥ ५ ॥

॥ शब्द ९ ॥

साधो साध अंतर ध्यान ।
दीन लीनं सीतलं ह्वै, तजहु गर्ब गुमान ॥ १ ॥
गंग ग्राम बजार लावहु, चित्त गाड़ु निसान ।
सत्त हाट निहारि निरखहु, लेहु करि पहिचान ॥ २ ॥
रैन दिन तहँ नाहिँ आहै, नाहिँ ससि गन भान ।
चमक झलमल रूप निर्मल, निर्गुनं निर्बान ॥ ३ ॥
सुद्धि बुद्धी नाहिँ आहै, कौन भाषै ज्ञान ।
जगजिवनदासं मस्त होवै, बिरल कोउ ठहरान ॥ ४ ॥

---

*बीर्य्य ।

॥ शब्द १० ॥

मन रे आप काँ तैं चीन्ह ।
आस कै घर कहाँ आहै, कहाँ बासा लीन्ह ॥ १ ॥
चेत करु अब हेत उन तैं, जिन रे यहु सब कीन्ह ।
डारि दीन्ह बहाइ तुम कहँ, दगा तुम तैं कीन्ह ॥ २ ॥
आइ पर घर पहिरि जामा, जग्त बासा लीन्ह ।
संग तेहिं बहुरंग तसकर*, बड़ा अजुगुति कीन्ह ॥ ३ ॥
ऐंचि खैंच लगाव धागा, तिलक दै सत चीन्ह ।
जगजिवन गुरु चरन परि कै, जुग जुग अम्मर कीन्ह ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

काया कैलास कासी राम सो बनायो ॥ टेक ॥
जा को वार पार नाहिं, अंत नाहिं पायो ।
तीनि लोक दस दुआर, दरवाज नाहिं लायो ॥ १ ॥
तीरथ तेहि माँ कोटिन्ह, गुरू सो बतायो ।
तस्कर तहँ बहुत पाँच, अपथ ही चलायो ॥ २ ॥
पचीस सेन बाँधि साथ, जहँ तहँ उठि धायो ।
लागे सब बिगारन हिं, से रावन दुख पायो ॥ ३ ॥
चौंकि मनुवाँ जागि धागा, गगनहिं गढ़ लायो ।
जगजिवन उसवास† मिटि गा, दरस सतगुरु पायो ॥ ४ ॥

॥ शब्द १२ ॥

अरे मन रहहु थिर ठहराय ।
बेद ग्रंथ संत संत कहि, सुकृत दीन्ह लखाय ॥ १ ॥

---

*ठग । †अंदेशा

गगन मंडप बना है, तहँ अचल बैठहु जाय ।
तजहु आस निरास है कै, देहु सब बिसराय ॥ २ ॥
भान गनं ससि नाहिं निसु दिन, पवन नहिं संसाय ।
चमक झलमल रूप निर्मल, रहहु इक टक लाय ॥ ३ ॥
तजहु नहिं परसंग कबहूँ, बैठि जुगहिं ढुढ़ाय ।
जगजिवन निर्बान सतगुरु, चरन रहु लपटाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द १३ ॥

बिरिछ* के ऊपर मँदिल बनावा ।
ताहि मँदिल इक जोगी आवा ॥ १ ॥
जोगी भागि अनत काँ जाय, मँदिल अपने मन पछिताय ॥२॥

॥ दोहा ॥

ताहि मँदिल को गृह भयो, ता मैं दिसि न दुवार ।
ता के भीतर रहत है, बिधना देत अहार ॥ ३ ॥

॥ शब्द १४ ॥

सखि बाँसुरी बजाय कहाँ गयो प्यारो ॥ टेक ॥
घर की गैल बिसरि गै मोहिं तेँ, अंग न बस्त्र सँभारो ।
चलत पाँव डगमगत धरनि पर, जैसे चलत मतवारो ॥१ ॥
घर आँगन मोहिं नीक न लागै, सब्द बान हिये मारो ।
लागि लगन मैं मगन वही सोँ, लोक लाज कुल कानि बिसारो २
सुरत दिखाय मोर मन लीन्ह्यो, मैं तो चहौं होय नहिं न्यारो ।
जगजीवन छबि बिसरत नाहीं, तुम से कहौं सो इहै पुकारो ॥३॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो बूझे बिनु समुझि न आवै ।
अंध अहै भव जाल मैं बंधा, को काहि कै गोहरावै ॥ १ ॥

---

*पेड़ । †भँवर गुफा का शब्द ।

बाहर निसु दिन भटकत भरमत, थिर नहिं कबहूँ आवै ।
बूड़त जानि मानि भवसागर, अवरन कहँ समुझावै ॥ २ ॥
बहु बकताई करत फिरत है, रचि बहु भेष बनावै ।
सिख पढ़ि करहिं बिबाद जहाँ तहँ, आपन अंत न पावै ॥३
पाइ जोग केहु भेद भाँड़ गति, गहि दम साँस न आवै ।
दुखित होत तन फूलि मसक से, दुइ कर पेट ठठावै ॥ ४ ॥
यहु नहिं जोग रोग है भाई, साधू नाहिं बतावै ।
सहज रीति मन साध पवन गहि, अठदल कमल समावै ॥५॥
अजपा जपत रहै बिन जिभ्या, मधुर मधुर मधु पावै ।
ह्वै मस्तान मगन ह्वै गावै, बहुरि न यहि जग आवै ॥ ६ ॥
अस मत गहै रहै केहू बिधि, काहु न भेद बतावै ।
जगजीवन सुख तब हीं पावै, सूरति सत्त मिलावै ॥ ७ ॥

॥ शब्द १६ ॥

साधो को धौं कहँ तें आवा ।
खात पियत को डोलत बोलत, अंत न काहू पावा ॥१॥
प्रानी पवन संग इक मेला, नहिं बिबेक कहुँ गावा ।
केहि के मन को कहाँ बसत है, केइ यहु नाच नचावा ॥२॥
पय महँ घृत घृत महँ ज्यौं बासा, न्यारा एक मिलावा ।
घृत मन बास पास मनि तेहि माँ, करि सो जुक्ति बिलगावा ३
पावक सर्ब अंग काठहि माँ, मिलि कै करखि* जगावा ।
ह्वै गै खाक तेज ताही तें, फिर धौं कहाँ समावा ॥४॥
भान समान कूप सब छाया, दृष्ट सबहिँ माँ आवा ।
परि घन† कर्म आनि अंतर महँ, जोति खैंचि लै आवा ॥५॥

---

*धौंक कर । †बादल रूपी कर्म ।

अस है भेद अपार अंत नाहिँ, सतगुरु आनि बतावा ।
जगजीवन जस बूझि सूझि भै, तेहि तस भाखि जनावा ॥६॥

॥ शब्द १७ ॥

जा के लगी अनहद तान हो, निरबान निरगुन नाम की ॥१॥
जिकर करके सिखर हेरे, फिकर रारंकार की ॥२॥
जा के लगी अपजा गगन झलकै, जोत देख निसान की ॥३॥
मृदु मुरली मधुर बाजै, बाँए किँगरी सारँगी ॥४॥
दहिने जो घंटा संख बाजै, गैब धुन झनकार की ॥५॥
अकह की यह कथा न्यारी, सोखा नाहीँ आन है ॥६॥
जगजीवन प्रान सोध के, मिल रहे सतनाम है ॥७॥

॥ शब्द १८ ॥

साधो समुझि बूझि मन रहना ।
डोरी पोढ़ि लाय कै रहिये, भेद न काहू कहना ॥१॥
गुरु परताप नाम जिन पायो, बड़े ताहि के लहना ।
लियो सँभारि सँवारि पवन गहि, गगन मँदिल ठहराना ॥२॥
चाँद सुरज दिन रजनी नाहीँ, सब्द रसालहिँ ज्ञाना ।
सिव ब्रह्मा बिस्नु मन तहवाँ, अलख रूप निरबाना ॥३॥
रहु लव लाइ समाइ छबिहिँ तकि, जग तेँ किहे बहाना ।
जगजिवनदास धन्न वै साधू, सदा रहैँ मस्ताना ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

गगरिया मोरी चित सोँ उतरि न जाय ॥ टेक ॥
इक कर करवा* एक कर उबहनि†, बतिया कहैाँ अरथाय ॥१॥
सास ननद घर दारुन आहैँ, ता सोँ जियरा डेराय ॥२॥

*डोल । †रस्सी ।

जो चित छूटै गागरि फूटै, घर मोरि सासु रिसाय ॥३॥
जगजीवन अस भक्ती मारग, कहत अहौं गोहराय ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

और फिकिर करि फरके*, जिकिर† लगाउ रे ॥टेक॥
सूरति सूवा‡ करि, गगनै बैठाउ रे ।
तहँ हरि हरि करि, कहि कै पढ़ाउ रे ॥१॥
साँईं एक, एक करि जानु रे ।
दुबिधा नहिँ मन, कबहुँ लै आउ रे ॥ २ ॥
जगजिवनदास तहँ, सुरति निहारु रे ।
दुइ कर जोरि करि, साँईं मनाउ रे ॥३॥

॥ शब्द २१ ॥

सत्त नाम मन गावहु रे ॥ टेक ॥
यहु मन दृढ़ करि अंतर राखहु, अनत न कतहुँ बहावहु रे ।१।
मैं तैं गरब गुमानहिं त्यागौ, दीन सुमति लै आवहु रे ॥२॥
बृथा जानि सब नैनन देखहु, अंतर ध्यान लगावहु रे ॥३॥
जगजीवन चित चरनन राखहु, कबहुँ नहीं बिसरावहु रे ।४

॥ शब्द २२ ॥

सोभा प्रभु की मो से बरनि न जाई ॥ टेक ॥
अनहद बानी मूरति बोलै, सुनहु संत चित लाई ॥ १ ॥
बिनु कर ताल पखाउज बाजै, तहँ सूरति चलि जाई ॥ २ ॥
अबरन बरन कहाँ लहि बरनौं, सब महँ रह्यो समाई ॥३॥
जगजीवन सत मुरति निरखि छबि, रहे चरन लपटाई ॥४॥

*दूर । †जाप । ‡तोता ।

॥ शब्द २३ ॥

बौरे मते मंत्र सुनु सोई ॥ टेक ॥
जो सुनि गुनि परतीत करि कै, तब सुख पावै सोई ॥ १ ॥
गुरुमुख मन मनि गगन मँदिल रहि, उहाँ भरम नहिँ कोई२
चाँद सुरज तेहिँ दिप्ति* नहीं सम, संत बास तहँ सोई ॥३॥
जगजीवन अस पाय भाग जो, आवागवन न होई ॥ ४ ॥

॥ शब्द २४ ॥

तुम सोँ लागो रे मोर मनुआ ॥ टेक ॥
झलझल झलझल देखौँ रूप । तुम तँ नाहीं और अनूप ॥१॥
दिप्ति तुम्हारी आहै धूप । तकि परछाँहीं जैसे कूप ॥२॥
सो नौखंड मँ सातौ दीप । जगजिवन गुलाम है तुम हो भूप ३

साध महिमा और असाध की रहनी

॥ शब्द १ ॥

जब मन मगन भा मस्तान ।
भयो सीतल महा कोमल, नाहिँ भावै आन ॥१॥
डोरि लागी पोढ़ि गुरु तँ, जगत तँ बिलगान ।
अहै मता अगाध तिन का, करै को पहिचान ॥२॥
अहैँ ऐसे जगत माँ कोइ, कहत आहैँ ज्ञान ।
ऐसे निर्मल ह्वै रहे हैँ, जैसे निर्मल भान ॥३॥
बड़ा बल है ताहि के रे, थमा है असमान ।
जगजिवन गुरु चरन परिकै, निर्गुनं धरि ध्यान ॥४॥

---

*प्रकाश ।

॥ शब्द २ ॥

अमृत नाम पियाला पिया । जुग जुग साधू सोई जिया ॥१॥
सतगुरु सदा रहै परसंग । मस्त मगन ताही के रंग ॥२॥
तकि कै अंत कतहुँ नहिँ जाय । निर्मल निर्गुन निरखि रहाय ॥३॥
जेहि की माया का बिस्तार । को बपुरा करि सकै बिचार॥४॥
ब्रह्मा थके बेद गुन गाय । थकित भये सिव ताड़ी लाय ॥५॥
ठाढ़े रहहिँ बिस्नु कर जोरि । निर्मल जोति अहै तिन्ह कोरि६
जगजीवन सो धरि रहे ध्यान । सतगुरु सुरति निर्मल निर्बान॥७

॥ शब्द ३ ॥

साधो खेलि लेहु जग आय । बहुरि नहीं अस औसर पाय॥१
जनम पाय चूका सब कोय । अंतर नाम जाहि नहिँ होय॥२॥
जिन केहु उलटि कै बूझा ज्ञान । साधू सोई भया निरबान ॥३॥
तिन पर किरपा कीन्ह्यौ आय । राखि लिह्यौ चरनन सरनाय४
निरखि नैन तेँ रहि टक लाय । अमृत रस बस पियो अघाय ५
मरि अम्मर भे जुग जुग सोइ । न्यारे कबहूँ नाहीं होइ ॥६॥
जगजिवनदास धन्य वे साध । तिन का सत मत भेद अगाध७

॥ शब्द ४ ॥

गऊ निकसि बन जाहीं । बाछा उनका घर ही माहीं ॥१॥
तृन चरहिँ चित्त सुत पासा । यहि जुक्ति साध जग बासा॥२॥
साध तेँ बड़ा न कोई । कहि राम सुनावत सोई ॥३॥
राम कही हम साधा । रस एक मता औराधा ॥४॥
हम साध साध हम माहीं । कोउ दूसर जानै नाहीं ॥५॥
जिन दूसर करि जाना । तेहिँ होइहि नरक निदाना ॥६॥
जगजिवन चरन चित लावै । सो कहि के राम समुझावै॥७॥

॥ शब्द ५ ॥

जस घृत पय मँ बासा । अस कीन्हे रहौँ निवासा ॥१॥
साध पुहुप कर नाऊँ । मैँ तहँ तँ बास* बसाऊँ ॥२॥
अस अहै मोर परसंगा । मैँ साध साध मोर अंगा ॥३॥
जगजीवन जिन जाना । सो भक्त भयो निर्बाना ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

साध कै गति को गावै । जो अंतर ध्यान लगावै ।१॥
चरन रहे लपटाई । काहू गति नाहीँ पाई ॥२॥
अंतर राखै ध्याना । कोइ बिरला करै पहिचाना ॥३॥
जगत किहो एहि बासा । पै रहैँ चरन के पासा ॥४॥
जगत कहै हम माहीँ । वै लिप्त काहु माँ नाहीँ ॥५॥
जस गृह तस उदयाना† । वै सदा अहैँ निरबाना ॥६॥
ज्यौँ जल कमल कै बासा । वै वैसे रहत निरासा ॥७॥
जैसे कुरम‡ जल माहीँ । वा की सुति अंडन माहीँ ॥८॥
भवसागर यह संसारा । वै रहैँ जुक्ति तँ न्यारा ॥९॥
ज्यौँ मक डोर बढ़ावै । जो नीच ऊँच काँ धावै ॥१०॥
जगजीवन ठहराना । सो साध भया निरबाना ॥११॥

॥ शब्द ७ ॥

मन मँ जेहि लागी तेहि लागी है ॥ टेक ॥
रहे बेसुद्ध सुद्धि तब नाहीँ, चौँकि उठे तब जागी है ॥१॥
पाँच पचीस बाँधि इक डोरी, एकौ नहिँ कहुँ भागी है ॥२॥
मैँ तैँ मारि बिचारि गगन चढ़ि, दरस पाय रस पागी है ॥३॥

---

*सुगंधि । †सैरगाह, जंगल । ‡कछुआ ।

गहि सतगुरु के चरन रहे हैं, मस्त भये बैरागी हैं ॥४॥
जगजीवन ते अम्मर जुग जुग, नाहिं सतसंगति त्यागी है ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

बौरे त्यागि देहु गफिलाई ।
डरत रहहु मन संत राम कहँ, कहत अहौं गोहराई ॥१॥
संतन दीन हीन नहिं जानहु, कठिन तेज अधिकाई ।
जब चाहहिं तब कहहिं राम तैं, लंका पतन कराई ॥२॥
जेहि मन आवत कहत सो तैसे, नाहिं सकुच कछु आई ।
होहि अकाज ताहि को बहु बिधि, रहिहै मन पछिताई ॥३॥
नृपति होय कि छत्र-पति दुनिया, भूलै ना प्रभुताई ।
रहहि जो संतन तैं अधीन ह्वै, नहिं तौ खाक मिलि जाई ४।
परगट कहौं छिपावौं नाहीं, जुग जुग अस चलि आई ।
जगजीवन आधीन रहैं जे, तेहि पर रहहिं सहाई ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

सत्त नाम रस अमृत पिया । सो जग जनम पाय जन जिया १
डोरी पोढ़ि रहत है लाय । सोवत जागत बिसरि न जाय ॥२॥
कबहूँ मन कहुँ अनत न जाय। अंतर भीतर रहै लव लाय॥३॥
राम भक्त तैं नाहीं न्यारे । कहौं बिचारि के सब्द पुकारे॥४॥
भक्त जगत महँ यहि बिधि रहहीं।प्रगट भेद आपन नहिं कहहीं५
राम तैं जुदा कहै जो कोई । तेहि कै गति औ मुक्ति न होई ॥६॥
साध के दरस भाग तैं पाई । है अस मत कोइ नाहिं भुलाई ॥७॥
जगजीवन निरखै निर्बान । गावत ब्रह्मा बेद पुरान ॥८॥

॥ शब्द १० ॥

अपने मन महँ सुमिरहु नाम। बाहर नाहिं कछु सरिहै काम १

जो मन बाहर जाइहि धाय । बिनु जल गहिरे बूड़हि जाय २
परि भवजल माँ करहि बिगार । मनहिँ मारि कै जनम सँवार ३
मन यहु साँच झूँठ है सोई । मन का भेद न पावै कोई ४
मन के सुख तन का सुख होई । मन छीजे तन सुख नहिँ कोई ५
मन यहु खात अहै जल पीवै । मन यहु अम्मर जुग जुग जीवै ६
मन यहु जीव केर मनि आही । मन की मनि मथि संत लखाही ७
संतन लखि मनि राखि छिपाई । जग सब अंध अंत नहिँ पाई ८
सो मनि त्रिकुटि गगन महँ बास । ज्ञानि तत्त जन करहिँ बिलास ९
जग जड़ मूरख चेत न आनि । संत बचन परमान न मानि १०
जगजिवन दास धन्य वै साध । पाय मता सो भये अगाध ११

॥ शब्द ११ ॥

आपु काँ चीन्है नहिँ कोई ।
खात पियत को डोलत बोलत, देखत नैनन सोई ॥ १ ॥
अचरज सब्द समुझि जो आवै, सब माँ रहा समोई ।
रहै निरंतर बासा कीये, कबहूँ बिलग न होई ॥ २ ॥
अच्छर चारि पँडित पढ़ि भूले, करैँ चार्चा सोई ।
साधन की गति अंत न पावत, जेहि का मन मति जोई ॥ ३ ॥
जिन जिन तत्तहिँ मथि कै लीन्ह्यो, रहि गहि गुप्तहिँ सोई ।
जगजीवन धरि सीस चरन तर, न्यारे कबहुँ न होई ॥ ४ ॥

॥ शब्द १२ ॥

मन महँ राम रमे हैँ ताहि ।
लागि जब तेँ पागि तब तेँ, नाहिँ अनतै जाहिँ ॥ १ ॥
नाहिँ आसा रही जग की, नाहिँ धाइ अन्हाहिँ ।
सदा सूरत रहैँ लाये, जपत हैँ मन माहिँ ॥ २ ॥

राति दिन वै रहत लागे, साध वोई आहिँ ।
बहु किये पाखंड जग महँ, भक्त हैँ ते नाहिँ ॥ ३ ॥
जपहिँ अजपा बकैँ ना वह, गुप्त जगत रहाहिँ ।
जगजीवन वै दास न्यारे, जोति महँ मिलि जाहिँ ॥ ४ ॥

॥ शब्द १३ ॥

अब कछु नाहिँ गति कहि जात ।
साध कहि करि करहिँ दरसन, करहिँ पाछे घात ॥ १ ॥
भेष माला पहिरि लीन्हेव, नाम भजन लजात ।
जहाँ तहाँ परमोध करि कै, स्वान नाईँ खात ॥ २ ॥
दियो अहै बढ़ाय तृस्नहिँ, नाहिँ कछु खिसियात ।
भयो गाफिल भूलि माया, नाहिँ उद्र अघात ॥ ३ ॥
देखि सिखि पढ़ि लेत आहैँ, कहैँ सोई बात ।
जहाँ तहाँ बिबाद ठानहिँ, ओस बुंद बिलात ॥ ४ ॥
साध सत मत रहत साधे, नाम रसना रात ।
जगजीवन सो पास सतगुरु, नाहिँ न्यारे जात ॥ ५ ॥

॥ शब्द १४ ॥

जिन के रसना भै नाम अधार ।
तिन के मन का अंत को पावै, ठाढ़ रहत दरबार ॥ १ ॥
तेहि जग कहहि अहहिँ दुनिया महँ, वह दुनिया तेँ न्यार ।
उन के दरस राम के दरसन, मेटत सकल बिकार ॥ २ ॥
छूटत नाहिँ कबहुँ नहिँ टूटै, तजि षट कर्म अचार ।
जानि अजान अज्ञान भे बौरे, नहिँ कोउ परखनहार ॥३॥
यह गति अहै साध कै रहनी, बिरले हैँ संसार ।
जगजीवन तिन तेँ नहिँ अंतर, तिन का भेद अपार ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

तजि कै बिबाद जक्त, भक्त भजि होवै ॥ टेक ॥
अहंकार गुमान मान, जानि दूर खोवै ।
काग ऐसो निहचिंत, कबहूँ नहिं सोवै ॥ १ ॥
रहै गुप्त चुप्प जिभ्या, प्रीति रीति होवै ।
नीर सील सींच सीतल, सहजहीं समोवै ॥ २ ॥
राखि सीस सिखर ऊपर, चरन कमल टोवै ।
नैनन निरखि दरस अमी, अंग ताहि धोवै ॥ ३ ॥
भे हैं निर्बान साध, काल देखि रोवै ।
जगजीवन त्यागि सर्ब, अचल अमर होवै ॥ ४ ॥

॥ शब्द १६ ॥

साध बड़े दरियाव अंत को पावै ।
ज्ञान बास करि पास राम कहि गावै ॥ १ ॥
निर्मल मन निर्बान निर्गुनहिं समावै ।
सतगुरु बैठे पास चरन पै सीस नवावै ॥ २ ॥
सदा हजूरी ठाढ़े निरखि कै दरसन पावै ।
भाखत सब्द सुनाय जगत काँ कहि समुझावै ॥ ३ ॥
जेहि के भै परतीत ताहि काँ भक्ति दृढ़ावै ।
जहाँ नाहिं बिस्वास ताहि तें भेद छिपावै ॥ ४ ॥
जगजीवनदास गुप्त को प्रगट सुनावै ।
जेहि के जैसे भाग सो तैसे पावै ॥ ५ ॥

॥ शब्द १७ ॥

जग में बहुत बिबादी भाई ।
पढ़ि गुनि सब्द लेत हैं बहु बिधि, बातैं करहिं बनाई ॥१॥

आपु न भजहिँ गहहिँ नहिँ नामहिँ, औरन कहहिँ सिखाई
कहहिँ और कहँ तैँ भूला है, अपुहिँ परे भुलाई ॥ २ ॥
बहुती बातैँ जहाँ तहाँ की, आपन कहैँ प्रभुताई ।
साधन्ह कहा सब्द सो काटहिँ, परहिँ नरक महँ जाई ॥३॥
जो कोउ जग महँ अंतर सुमिरै, ताहि देहिँ भटकाई ।
लालच लोभ पुजावे खातिर, डारिन्ह धर्म नसाई ॥ ४ ॥
गीता ग्रंथ पढ़िन बहुतै करि, मिटो नाहिँ मुरखाई ।
बिद्या मद अंधे ह्वै डोलहिँ, भिड़हिँ साध तैँ जाई ॥ ५ ॥
कोमल बानी सदा सीतल ह्वै, सब काँ सीस नवाई ।
साधन केरे ये लच्छन हैँ, करैँ ते मुक्तै जाई ॥ ६ ॥
जे पूछै तेहिँ राह लगावहिँ, नाहिँ तो रहहिँ छिपाई ।
जगजीवन भजु सतगुरु चरना, बादिहिँ देहु बहाई ॥ ७ ॥

॥ आरती ॥

(१)

आरति सतगुरु समरथ करऊँ । दोउ कर सीस चरन तर धरऊँ १
निरखौँ निर्मल जोति तिहारी । अवर सर्बसो देहुँ बिसारी ॥२
मैँ तौ आदि अंत का आहूँ । अवर न दूजा जानौँ नाऊँ ॥३
तुम्हरे आहुँ सदा संग बासी । तुम बिन मनुआँ रहत उदासी ४
रह्यो अजान तुम दियो जनाई । जहाँ रहौँ तहँ बिसरि न जाई५
जगजिवन दास तुम्हार कहावै । जनम जनम तुम्हरो जस गावै६

(२)

आरति सतगुरु साहेब करऊँ । आपन सीस चरन तर धरऊँ १
जब तुम मोहिँ काँ दाया कीन्हा । आई सूझि बूझि मैँ चीन्हा २

पास बास मैं डोलौं नाहीं । गगन मंडल रहौं सत की छाहीं३
निरखि नैन तें सुरति निहारौं । रबि ससि नेग* रूप मनि वारौं४
जगजिवनदास चरन दियो माथ। साहेब समरथ करहु सनाथ५

(३)

आरति गुरु गुन दीजे मोहीं । सुरति रहै नित चरन सनेही॥१
निकट तें भटकि कतहुँ नहिँ धावै। सोवत जागत ना बिसरावै २
मैं सुधि बुधि तें आहौं हीना । रहौं मैं चरन कृपा तें लीना ३
जो तुम मोहिँ काँ जानहु दासा । निर्मल दृष्टि सत दरस प्रकासा४
जगजीवन दास आपनो जानो । अवगुन अघ क्रम मनहिँ न आनो ॥ ५ ॥

(४)

आरति सतगुरु समरथ तोरी ।कहँ लगि कहौंकेतक मति मोरी१
सिव रहे तारी लाइ न जाना । ब्रह्मा चतुर मुख करहि बखाना२
सेस गनेस औ जपत भवानी । गति तुम्हरो प्रभु तिनहुँ न जानी३
बिस्नु बिनय मन मनहिँ समाई । कोउ बपुरा गति सकै न गाई४
ससि गन भान जती सुर सोई । सब माँ बास न दूजा कोई ॥५॥
संत तंत तें रहे हैं लागी । जेहि जस चहि तस रहि रस पागी६
जगजीवन नहिँ थाह अथाहा । कृपा करहु जन के निर्बाहा ७

(५)

आरति अरज लेहु सुनि मोरी । चरनन लागि रहै दृढ़ डोरी १
कबहुँ निकट तें टारहु नाहीं । राखहु मोहिँ चरन की छाहीं २
दीजै केतिक बास यहँ कीजे । अघ कर्म मेटि सरन करि लीजै३
दासन दास ह्वै कहौं पुकारी । गुन मोहिँ नहिँ तुम लेहु सँवारी४

*अनेक ।

जगजीवन काँ आस तुम्हारी । तुम्हरी छबि मूरति पर वारी५

(६)

आरति कवन तुम्हारी करई । गति अपार केहु जानि न परई १
ब्रह्मा सेस महेस गुन गावैं । से। तुम्हार कछु अंत न पावैं २
तुमहिँ पवन औ तुमहीँ पानी । तुम सब जीव जोति निर्बानी३
नर्क स्वर्ग सब बास तुम्हारी । कहुँ दुख कहुँ सुख है अधिकारी४
तुम सब महँ सब तुमहिँ बनावा।रहि रस बस करि नाच नचावा५
दियो चेतान करि तैसि लखाया। जगजीवन पर करिये दाया ॥६

(७)

केतिक बूझ का आरति करऊँ। जैसे रखिहहिँ तैसे रहऊँ ॥१॥
नाहीँ कछु बसि आहै मोरी । हाथ तुम्हारे आहै डोरी ॥२॥
जस चाहौ तस नाच नचावहु। ज्ञान बास करि ध्यान लगावहु३
तुमहिँ जपत तुमहीँ बिसरावत। तुमहिँ चेताइ सरन लै आवत४
दूसर कवन एक हौ सोई । जेहिँ काँ चाहौ भक्त सो होई५
जगजीवन करि बिनय सुनावै। साहेब समरथ नहिँ बिसरावै ६

(८)

आरति चरन कमल की करऊँ। निकट तेँ दाया करु नहिँ टरऊँ१
सदा पास मैँ रहौँ तुम्हारे । तुम महिँ काँ नहिँ रहहु बिसारे २
जानत रहहु जनावत सोई । तब बंदे तेँ बँदगी होई ॥३॥
बसि न काहु का कोऊ बिचारै । जेहि चाहै तेहि तस निस्तारै४
जगजीवन कि बिनय सुनि लीजै । अपने जन काँ दरसन दीजै५

॥ मंगल ॥

(१)

नहिँ आवै नहिँ जाइ भरोसा नाम को ॥टेक॥
ज्यौँ चकोर ससि निरखत सुधि तन नहिँ ताहि को ।
चरन सीस दै रहै भुगुतै फल काहि को ॥१॥
अपने मन माँ समुझि बूझि मैँ आहुँ को ।
केहि घर तेँ जग आइ जाउँ मैँ काहि को ॥२॥
अमर मरै नहिँ जिये फेरि घर जाइ को ।
निर्गुन केर पसार फंद भ्रम जार को ॥३॥
निर्मल मैल मँ मिला रहै लय लाइ को ।
जगजीवन गुरु समरथ जानहि जन जाहि को ॥४॥

(२)

बिनती करौँ कर जोरि के तुमहिँ सुनावऊँ ।
दाया होय तुम्हारि तौ मंगल गावऊँ ॥१॥
देहु ज्ञान परकास तौ सत्त बिचारऊँ ।
निस दिन बिसरहुँ नाहिँ मैँ सुरति सँभारऊँ ॥२॥
तुम सब जानत अहहु जनावत हौ सोई ।
काया नगर बनाइ किह्यो रचना सोई ॥३॥
तेहि काँ अंत न खोज न गति जानै कोऊ ।
नव खिरकी दरवाजा दसव बनायऊ ॥४॥
तेहि मंदिल सत पुरुष बिराजै नित सोई ।
नगर कै सुधि सब लेहि दुःख केहु नहिँ होई ॥५॥
सर्ब नगर बस्ती कहुँ खाली नाहीँ ।
अपने रमहि सुभाउ सो आपुहि आही ॥६॥

तेहि मद्धे करि बास बिचार तेहि माहीं ।
भटक भरम मन बूझि अहै कछु नाहीं ॥७॥
बिप्र* बिस्वास तब आयो मंत्र बिचारेऊँ ।
सुरति के पितु प्रीतम सो तिन्हहिं पुकारेऊँ ॥८॥
सुमति जो ऐसी आइ तबहिं सुख पावई ।
निर्गुन सो है दूलह तिन्हहिं बियाहई ॥९॥
सुमति सुरति की माइ बिचार्यो सोई ।
निरती नेह लगाइ भाग तेहि होई ॥१०॥
नाऊ नाम लीन्ह लय लगन धरायऊँ ।
नगर में गगन भवन सो तहँ काँ आयऊँ ॥११॥
माड़ो माया बिस्तार तृन तीनि बनायऊँ ।
बाँस बास गुन गूँथ जहाँ तहँ लायऊँ ॥१२॥
सहज सेहरा बनि पूरा ते सिर बाँधेऊँ ।
चौका चार बिचार राग अनुरागेऊँ ॥१३॥
पाँच बजावहिं गावहिं नाचहिं ओई ।
करहिं पचीस सो निरत एक ह्वै सोई ॥१४॥

॥ छंद ॥

एक ह्वै कै करहिं निर्तं तत्त तिलक चढ़ावहीं ।
पढ़हिं अनहद सब्द सुमिरत अलख बरहिं मनावहीं ॥१५॥
गाँठि जोरी पोढ़ि कै दृढ़ भँवरि सान फिरावहीं ।
मेटि दोहाग अनेक बिधि कै सोहाग रँग रस पावहीं ॥१६॥
सूति रहि सत सेज एकै निरखि रूप निहारऊँ ।
चमकमनि झलमलित रबि ससि ताहि छबि पर वारऊँ ॥१७॥

---

*उत्तम या पवित्र जाति का मनुष्य ।

वारि डारौं सीस चरनन बिनय कै बर माँगऊँ ।
रहै सदा सँजोग तुम तेँ कबहुँ नाहीं त्यागऊँ ॥१८॥
लेउँ माँगी रहै लागी दरस नैनन चाखऊँ ।
आवागवन नेवार करिकै मन हितै करि भाखऊँ ॥१९॥
रहौं सरन निकट निसु दिन कबहुँ नहिँ भटकावहू ।
जगजीवन के सत्त साहेब तुमहिँ ब्रत निबाहहू ॥२०॥

(३)

अरे यहि जग आइके कहाँ गँवायो रे ।
निर्गुन तेँ फुटि आनि धस्यो गुन, वह घर मन बिसरायो रे॥१॥
कर्म फाँसि माँ सुख भा, सुद्धि भुलायो रे ।
रचि पचि मिलि माँटी महँ, सबै गँवायो रे ॥२॥
बहुत लागि हित माया, मन बौरायो रे ।
भाई बंधु कबीला सबै, बिचास्यो रे ॥३॥
जब तजि चलत है काया, सँग न सिधारे रे ।
रोवत मोह बस माया, ह्वैगे न्यारे रे ॥४॥
जीवत कस नहिँ त्यागहु, बृथा करि जानहु रे ।
आपुनि सुरति सँभारि, नाम गहि आनहु रे ॥५॥
रहहु जगत की संगति, मन तेँ न्यारे रे ।
पुहमी* पाँव उठावहु रहहु बिचारे रे ।
काँट गड़ै नहिँ पावै, रहहु सँभारे रे ॥६॥
काल तेँ कोउ नहिँ बाचहि, सब काँ खाइहि रे ।
नाम सुकृत नहिँ गहहि, अंत पछिताइहि रे ॥७॥

---

*हलके

जस मोहिं समुझि परतु है, तस गोहरावौं रे।
सुनै बूझि मन समुझि, तौ पार उतारौ रे ॥८॥
अचरज आवत देखिकै रे, मन मन समुझि रहायो रे।
मैं तो कछु नहिं जान्यो, गुरू जनायो रे ॥९॥
रहौं बैठि तहवाँ मैं, सुरति निहारौं रे।
चरन सदा आधार, सीस मैं वारौं रे ॥१०॥
जगजीवन के साँई, तुम सब जान्हु रे।
दास आपना जानहु, अवर न आनहु रे ॥११॥

(४)

जागहु जागहु अवरन* कुंड, सब पापन के भाजहिं झुंड ॥१॥
जागे ब्रह्मा जागे इन्द्र, सहस कला जागे गोबिंद ॥२॥
जागे धरती जगे अकास, सिव जागे बैठे कैलास ॥३॥
तुम जागहु जागे सब कोइ, तीनि लोक उँजियारी होइ ॥४॥
जगजीवन सिष जागे सोइ, चरन सीस धरि रहे हैं जोइ ॥५॥

॥ शब्द ५ ॥

यह मन राखहु चरनन पास। काहे काँ भरमत फिरहु उदास ॥१॥
जो यहु मनुवाँ अंते जाय। राखि लेहु चरनन सिर नाय ॥२॥
जो यह मनुवाँ जानै आन। तुम्ह तजि करै न अनत पयान ॥३॥
धरती गगन तुम्हार बनाव। चरन सरन मन काँ समुझाव ॥४॥
दूजा अवर नहीं है कोय। जल थल महँ रहि जोति समोय ॥५॥
व्यापि रह्यो है सबहिन माहिं। अवर दूसरो जानहु नाहिं ॥६॥
न्यारे रहत हैं संतन माहिं। संत से न्यारे कबहूँ नाहिं ॥७॥
मोहिं का परत अहै अस जानि। निर्मल जोति न्यारि निर्बानि ८
जगजीवन काँ आस तुम्हारी। दाया करि कबहूँ न बिसारी ॥९॥

---

*आवरन।

॥ शब्द ६ ॥

का तकसीर भई प्रभु मोरी। काहे टूटि जाति है डोरी ॥१॥
तब तुम साहेब अब तुम जोरी। नाहीं लागु अहै कछु मोरी ॥२॥
तुम्ह तेँ कहत अहौँ कर जोरी। प्रीति गाँठि कबहूँ नाहिँ छोरी ॥३॥
नाहिँ बसि अहै गुलामन केरी। तुम्ह तेँ काह अहै बरजोरी ॥४॥
माथ चरन तर करौँ न चोरी। करता तुम्हहीं मोहिँ न खोरी ॥५॥
नैन निरखि छबि देखौँ तोरी। आदि अंत दृढ़ राखहु डोरी ॥६॥
जगजीवन काँ आसा तोरी। निर्मल जोति तकौँ टक* जोरी ॥७॥

॥ सावन व हिँडोला ॥

(१)

जबतेँ लगन लगी री, तब तेँ कानि काह की सखी री ॥१॥
मैँ प्यासी अपने पिय केरी, बिन पिय प्यास मिटै न सखी री२
कामिनि दुइ कर धर चरन पर, सीस नवाइ मनावै सखी री॥३
पिय तौ गरू गँभीर कहावहिँ, जिय मेँ दरद न आनैँ सखी री४
मान गुमान तज्यो है सखी री, पिय के निकट बसी री सखी री५
पिय का बदन निहारत सुख भा, अनत न चित्त धस्यो है सखीरी६
मधुकर पुहुप बास कहँ भेँटै, चाखत सुधि बिसरी री सखी री७
जगजीवन साँईँ की छबिहीं, देखि कै मस्त भई री सखी री८

(२)

असाढ़ आस तजि दीन्हेऊ, सावन सत्त बिचार।
भादौँ भरमहिँ त्यागेऊ, लियो तत्त निरुवार ॥१॥

*दृष्टि।

कुँवार कर्म जो लिखि दियो, कातिक करनी होय ।
अगहन अम्मर देखेऊ, जुग जुग जीवै सोइ ॥२॥
पूस परम सुख उपजेऊ, माघै माया त्यागि ।
फागुन फंदा काटेऊ, तब जाग्यो बड़ भागि ॥३॥
चैत चरन चित दीन्हेऊ, बैसाखै बरन बिचार ।
जेठ जोति घर आयेऊ, उतर्‌यो भवजल पार ॥४॥
निर्गुन बारह मासा, संतन करहु बिचार ।
जगजीवन जो बूझही, त्यागहि माया जार ॥५॥

(३)

पपिहै जाय पुकारेऊ, पंछिन आगे रोय ।
तीनि लोक फिरि आयेऊँ, बिनु दुख देख्यो न कोय ॥१॥
जोगिन ह्वै जग ढूँढ़ेऊँ, पहिर्‌यौँ कुंडल कान ।
पिय का अंत न पायेऊँ, खोजत जनम सिरान ॥२॥
बैठि मैं रहेऊँ पिया सँग, नैनन सुरति निहारि ।
चाँद सुरज दोउ देखेऊँ, नहिं उनकी अनुहारि* ॥३॥
माया रच्यो हिंडोलना, सब कोइ झूल्यो आय ।
पैँग मार वहि घर गयो, काहू अंत न पाय ॥४॥
बिस्नु औ ब्रह्मा झूलेऊ, झूल्यो आइ महेस ।
मुनि जन इंदर झूलि सब, झूले गौरि गनेस ॥५॥
सतगुरु सत खंभन गगन, सुरति डोरि लगाय ।
उतरै गिरै न टूटई, झूलहि पैँग बढ़ाय ॥६॥
जगजीवन कहि भाखही, संतन समझहु ज्ञान ।
गगन लगन लै लावहू, निरखहु छबि निर्बान ॥७॥

---

*बराबर ।

माया बहुत अपबल्ल, अलख तुम्हार बनाउ ।
जगजीवन बिनती करै, बहुरि न फेरि झुलाउ ॥८॥

॥ बसंत ॥

॥ १ ॥

मोरे सतगुरु खेलत यह बसंत,
जा की महिमा गावत साध संत ॥टेक॥
कोइ जल माँ रहिगे रैनि गँवाय,
कोइ महि प्रदच्छिना दहिनि लाय ।
कोइ गृह तजि बन माँ किये बास,
बिना नाम सब खूसखास* ॥ १ ॥
कोइ पंच अगिन तप तन दहाय,
कोइ उर्ध बाहु कर रहे उठाय ।
कोइ निराधार रहि पवन आस,
बिना नाम सब खूसखास ॥ २॥
कोइ दूधाधारी पर घर चित्त,
नग्न रहै कोइ लकड़ी नित्त।
कोइ पावक सूरति करि निवास,
बिना नाम सब खूसखास ॥ ३ ॥
कोइ एक आसन कबहूँ न डोल,
कोइ मवनी है कबहूँ न बोल ।
कोइ गगन गुफा महँ लिये बास,
बिना नाम सब खूसखास ॥ ४ ॥

---

* घास फूस ।

कोइ निसु दिन रहिगे झूला झूल,
  कोइ स्वाँस बंद करि पकरि मूल ।
जगजीवन एक नाम अधार,
  नाम नाव चढ़ उतरै पार ॥ ५ ॥

॥ २ ॥

खेलहु बसंत मन यहि बन माहिं,
  अमृत नाम बिसारहु नाहिं ॥ १ ॥
यहि बन का नहिं वार पार ।
  आइ के भूलि परा संसार ॥ २ ॥
जिन्ह जिन्ह आइ धरी है देंह ।
  दीन्हेव तजि तिन्हहीं सनेह ॥ ३ ॥
वह सुधि डारिन्ह मन बिसराय ।
  मैं तैं यह रस बहुत हिताय ॥ ४ ॥
ता तें टूटि गई वह डोरि ।
  पड़े भवजाल झकोरि झकोरि ॥ ५ ॥
अब मन लीजै तत्त बिचारि ।
  गहि रहिये मन नाहिं बिसारि ॥ ६ ॥
रसना रटना रहहु लगाय ।
  प्रभु समरथ लेहैं अपनाय ॥ ७ ॥
जगजिवनदास मधुर रस चाखि,
  जग्त न कहौं सत्त मत भाखि ॥ ८ ॥

॥ ३ ॥

साधो मन महँ करहु बिचार ।
  दुइ अच्छर भजि उतरहु पार । १ ॥

पूजा अरचा त्यागि तुम देहु ॥
कर मैं माला कबहुँ न लेहु ॥ २ ॥
जिभ्या चलै न कहहु पुकारि ।
अस रहि अंतर डोरि सँभारि ॥ ३ ॥
काया भीतर मन लै आउ ।
तीरथ ब्रत कहँ नाहीं धाउ ॥ ४ ॥
दान औ पुन्न जग्ग महँ नाहिँ ।
सहजहि नाम भजहु मन माहिँ ॥ ५ ॥
दुइ अच्छर समान नहिँ कोय ।
बेद पुरान संत कहैँ सोय ॥ ६ ॥
मूल मंत्र याहै मत आहि ।
यहि तजि सो भूलहि भव माहिँ ॥ ७ ॥
ज्ञान सब्द तेँ कहौं पुकारि ।
साधो सुनि मन गहहु बिचारि ॥ ८ ॥
जगजीवन सहजहिँ सब मानु ।
मूरति गहि कर अंतर आनु ॥ ९ ॥

॥ ४ ॥

खेलहु मनुवाँ तुम नाम साथ । हित आपन करिहै सनाथ ॥१॥
यहि काया भीतर रहि गाव । बाहर इत उत कहूँ न धाव २
कहि मन परगट देउ लखाव । जग आये का इहै बनाव ॥३॥
तीरथ ब्रत तप नेम अचार । उत्तम सहज राखु बेवहार ॥४॥
सब आसा चित देवहु त्यागि । एक टेक करि रहहु लागि ॥५॥
सोवत जागत बिसरै नाहिं । रमत भ्रमत रहु नामहिँ माहिँ ६
मिलि कै निर्मल होहु निहग । सुमति सुमन सतगुरु परसंग ७

अम्मर अजर तबै तुमु होहु । जो यहु मंत्र तत्त गहि लेहु ८
जगजिवनदास रहु चरन लागि । यह बर सरन लेहु सत माँगि ९

॥ ५ ॥

साधो खेलहु समुझि बिचारि ।
अंतर डोरि गहि रहहु सम्हारि ॥ १ ॥
लोक आइ सब खेल्यो खेल ।
मिलि आसा नहिँ भयो अकेल ॥ २ ॥
हित करि जगत कि रह्यो लोभाय ।
मति पाछिल सब गई हिराय ॥ ३ ॥
फूटि निर्गुन गुन धारिन्ह आनि ।
पर्‌यो मोह मिटि कैाल कानि ॥ ४ ॥
लागि और कछु और कमाय ।
बीते समय चले पछिताय ॥ ५ ॥
मुनि सुरपती नाचि बहु भाँति ।
नर बपुरे की काह बिसाति ॥ ६ ॥
देँही धरि धरि नाच्यो राम ।
भक्तन केर सँवार्‌यो काम ॥ ७ ॥
थिर नहिँ कोउ आवत सो जात ।
सुख भा सुधि गै कुबुधि तिरात ॥ ८ ॥
मन मद मातो फिरहि बेहाल ।
अंत भयो धरि खायो काल ॥ ९ ॥
तत्त ज्ञान मन करहु बिचार ।
सुकृत नाम भजु होइ उबार ॥ १० ॥
यह उपदेस देत हैँ सोय ।
देँह धरे कछु दुक्ख न होय ॥ ११ ॥

बेद ग्रंथ ज्ञान लियो छानि ।
चेत सचेत है लीजै जानि ॥ १२ ॥
जगजीवन कहै परघट ज्ञान ।
उलटि पवन गहि धरि रहु ध्यान ॥ १३ ॥

॥ ६ ॥

नैहर सुख परि नाहिँ भुलाहु ।
मनहिँ बूझि सखि पियहिँ डेराहु ॥ १ ॥
माइ तुम्हारि बहुत सुख खानि ।
इन्ह के गुमान जानि रहहु भुलानि ॥ २ ॥
यहि तुम्ह तेँ पूँछिहिँ नाहिँ बात ।
ससुरे चलिहहु मन पछितात ॥ ३ ॥
पितु औ पाँचौ भाइ पियार ।
भौजी सोउ अहै हितकार ॥ ४ ॥
इन्ह तेँ कबहुँ न राखेहु रीति ।
सब तजि करि रहु पिय तेँ प्रीति ॥ ५ ॥
सखि पचीस सँग फिरहु उदास ।
एइ तुम्हारि करिहैँ उपहास ॥ ६ ॥
इन्ह के मते चले दुख होय ।
कहौँ सिखाइ मानि ले सोय ॥ ७॥
सासु कहै बहु कैसी आहि ।
ससुर कहै यहु समुझै नाहिँ ॥ ८ ॥
ननद देखि कै रहहि रिसाय ।
तब चलिहहु कर मलि पछिताय ॥ ९ ॥
अब तुम इहै सिखावन लेहु ।
सुमति सो आनि कुमति तजि देहु ॥ १० ॥

जनम धरे का याहै लाह ।
  है सुचित्त रहु चरनन माँह ॥ ११ ॥
जो मन बाहर जाइहि धाय ।
  बिनु जल गहिरे बूड़हि जाय ॥ १२ ॥
परि भवजाल माँ करहि बिगार ।
  मनहिँ मारि कै जनम सँवार ॥ १३ ॥
मन यहु साँच झूँठ है सोय ।
  मन का भेद न पावै कोय ॥ १४ ॥
मन के सुख तन का सुख होय ।
  तन छीजे सुख मनहिँ न कोय ॥ १५ ॥
मन यहु खात अहै जल पीवै ।
  मन यहु जुग जुग अम्मर जीवै ॥ १६ ॥
मन यहु जीव केरि मनि आहि ।
  मन की मनि मथि संत लखाहि ॥ १७ ॥
संतन लखि मनि राखि छिपाय ।
  जग सब अंध अंत नाहिँ पाय ॥ १८ ॥
सो मन त्रिकुटि गगन महँ बास ।
  छानि तत्त जन करहि बिलास ॥ १९ ॥
सूरति ध्यान करहु यहि भाँति ।
  लखि मूरत छबि सोँ रहु राति* ॥ २० ॥
जगजीवनदास धन्य वै साध ।
  पाइ मता मत भये अगाध ॥२१॥

---

*राता

॥ ७ ॥

ज्ञान समुझि के करहु बिचार ।
कोउ काहुक नहिँ यहि संसार ॥ १ ॥
निर्गुन तेँ फूटि ब्रह्म यहु आय ।
गुन जल बुंद मेँ रहा समाय ॥ २ ॥
लखि माया हित बहुतै लागि ।
वह सुधि गई नाम दियो त्यागि ॥ ३ ॥
उदर अग्नि महँ रह्यो दस मास ।
जल्यो न गल्यो नाम की आस ॥ ४ ॥
बाहर आनि कै भयो सयान ।
करि मैं तैँ जग देखि भुलान ॥ ५ ॥
मातु पिता सुत हित भै नारि ।
चलहि कुचाल कुमंत्र बिचारि ॥ ६ ॥
धन माया सुख रह्यो लपटाय ।
अंत चल्यो कर मलि पछिताय ॥ ७ ॥
जग जड़ मूरुख चेत न आनि ।
संत बचन परमान न मानि ॥ ८ ॥
कहौँ सब्द कछु चेतत नाहिँ ।
जस जल बुंद हिम जलहिँ माहिँ ॥९॥
माया जार फँसा सब कोय ।
कवनि जुगति तेँ न्यारा होय ॥ १० ॥
जगजीवन जे चहै उबार ।
सो प्रभु सुमिरै नाम तुम्हार ॥ ११ ॥

॥ होली ॥

(१)

मनुआँ खेलै यह होरी, गुरु तैँ रहौ कर जोरी ॥ टेक ॥
पाँच पचीस साँच माँ करिये, होरि लगावौ पोढ़ी ।
आवौ नाहिँ कतहुँ नहिँ धावौ, आपुहिँ देहु न खोरी ॥१॥
जे जे चलि या जग माँ आये, ते ते पड़े झकझोरी ।
बाच्यो नाहिँ काल तेँ कोई, सब के पाँजर तोरी ॥२॥
रहि जुग बाँधि पास नहिँ टरिये, जग माँ जीवन थोरी ।
जुग जुग संग रहेउ साथहि माँ, तबकै अब नहिँ छोरी ॥३॥
निर्गुन निर्मल निर्बान निरखि सत, झरै अमीरस तन
रहि घोरी ।
जगजीवन दे सीस चरन तर, सन्मुख ह्वै नहिँ पाछे मोरी ॥४॥

(२)

खेलु मगन ह्वै होरी, औसर भल पाये ।
साँई समरथ तोहिँ फरमाया, तब यहि जग माँ आये ॥१॥
बिंदम बुंद बनाइ कै जामा, दीन्ह्यो तोहिँ पहिराये ।
सिरिजि कियो दस मास सुद्ध तोहिँ, जरत से लीन्ह बचाये॥२॥
बाहर जब तैँ भयसि, माइ तब दूध पियाये ।
बाल बुद्ध तब रह्यो, जानि कछु नाहीँ पाये ॥३॥
तरुन भयो मद मस्त, कर्म तब बहुत कमाये ।
काम क्रोध लोभ मद तृस्ना, माया मैँ लौ लाये ॥४॥
मैँ तैँ मद परपँच, ताहि तेँ ज्ञान गँवाये ।
साध सँगति नहिँ किये, ज्ञान कछु नाहीँ पाये ॥५॥

गह्यो पचीस तरंग, तीनि तजि चौथे धाये ।
देखि तखत पर पुरुष, ताहि काँ सीस नवाये ॥६॥
फगुआ दरसन माँगि पागि, अंतर धुनि लाये ।
जगजीवन जुग बंध, जुगन जुग ना बिलगाये ॥७॥

(३)

कौनि बिधि खेलौं होरी, यहि बन माँ भुलानी ॥ टेक ॥
जोगिन ह्वै अँग भसम चढ़ायो, तनहिं खाक करि मानी ।
ढुँढ़त ढुँढ़त मैं थकित भई हौं, पिया पीर नहिं जानी ॥१॥
औगुन सब गुन एकौ नाहीं, माँगत ना मैं जानी ।
जगजीवन सखि सुखित होहु तुम. चरनन मैं लपटानी ॥२॥

(४)

साधो खेलहु फाग, औसर तो इहै अहै ।
लेहु सँभारि सँवारि कै, तबहिं तो सुख लहिहै ॥१॥
काया कनक कै नगर बनायो, बहुरि नहीं फिरि बनिहै ।
अब का ख्याल हाल लै लावौ, अमर ह्वै जुग जुग जीहै ॥२॥
जे जे आनि जानि जग जागे, से से पार निबहि हैं ।
अहैं अचेत चेत नहिं दुनियहि, ते भवजलहिं समैहैं ॥३॥
तजि कै तीनि चौथे महँ पहुँचे, आसन दृढ़ करि रहिहैं ।
जगजीवन सतगुरु संगी भे, वे नहिं न्यारे बहिहैं ॥४॥

(५)

मनुआँ खेलहु फाग बचाय ।
डारत फाँसि हाँसि नहिं आवत, देत आहै भरमाय ॥१॥
पाँच लिहे लै लासी कर तें, मारत आहै धाय ।
तिन की चोट खोंटई लागत, गैल चला नहिं जाय ॥२॥

नारि पचीसौ रमत अहैं सँग, लेत अहैं ललचाय ।
ते सब थाँभि बाँधि रस हीं तें, गगन गुफा चढ़ि जाय ॥३॥
निरगुन निरमल साहेब बैठे, निरखि रहै टक लाय ।
जगजीवन तहँ माँगि पागि रस, चरन रहै लपटाय ॥४॥

(६)

पिय सँग खेलौ री होरी ।
हम तुम हिलमिलि करि एक-सँग ह्वै, चलैं गगन की ओरी ॥१॥
पाँच पचीस एक कै राखौ, लै प्रमोधि एक डोरी ।
चली भली बनि आई तहवाँ, पिय तें रहि कर जोरी ॥२॥
निरति निबाह होइहै तबहीं, आपु जानि है चेरी ।
सूरति सुरति मिलाय रहो तहँ, भीँजि सतहिं रस घोरी ॥३॥
तजि गुमान मान बहु बिधि तें, मैं तैं डारी तोरी ।
सुख ह्वैहै दुख मिटिहै तबहीं, नैनन तकि मुख मोरी ॥४॥
सिखर महल में बैठि मगन ह्वै, और जानि सब थोरी ।
जगजीवनजुग बंधिजुगन जुग, प्रीति गाँठि नहिं छोरी ॥५॥

(७)

सखी री खेलहु प्रीति लगाय ।
ह्वै सुचित्त चित्त काँ थिर करि, दीजै सब बिसराय ॥१॥
बैरी बहुत बसत यहि नगरी, डारत अहैं नसाय ।
ऐसी जुगुति बाँधि कै रहिये, करि बस पाँचौ भाय ॥२॥
लेहु बोलाय पचीसौ बहिनी, रहहिं नाहिं बिलगाय ।
तब लै लाय चलो मंडफ काँ, पिय तें मिलिये जाय ॥३॥
गगन मँडफ तहँ नीक सोहावन, देखत बहुत हिताय ।
तहँ सत सेज बैठि रहु सुख तें, जोतिहिं जोति मिलाय ॥४॥

निरखहु जोति रूप वह निर्मल, अनतै दृष्टि न जाय ।
जगजिवनदास भाग तब जागै, नैन दरस रस पाय ॥५॥

(८)

यहि नगरी में होरी खेलौं री ।
हम तें पिय तें भेंट करावौ, तुम्हरे सँग मिलि दौरौं री ॥१॥
नाचौं नाच खोलि परदा मैं, अनत न पीव हँसौं री ।
पीव जीव एकै करि राखौं, सो छबि देखि रसौं री ॥२॥
कतहुँ न बहौं रहौं चरनन ढिग, यहि मन दृढ़ होय कसौं री ।
रहौं निहारत पलक न लावौं, सर्बस ग्रौर तजौं री ॥३॥
सदा सोहाग भाग मोरे जागे, सतसँग सुरति बरौं री ।
जगजीवन सखि सुखित जुगन जुग, चरनन सुरति धरौं री ॥४॥

(९)

साधो होरी खेलत बनि आई ।
अजब गावँ यह काया आहै, ता में धूम मचाई ॥१॥
खेलहिं पाँच अपने अपने रस, तेहि काँ तस समुझाई ।
लिहे पचीस सहेली साथहिं, बाहर नाहिं बिलगाई ॥२॥
लियो लगाय रसाय डोरि तें, तीनि तजि चौथे धाई ।
सतगुरु साहेब तहाँ बिराजैं, भेंट कीन्ह तेहिं जाई ॥३॥
जगे भाग तब बड़े हमारे, लीन्ह्यो माँगि रिझाई ।
जगजीवन गुरु चरनन लागे, भल प्रसंग बनि आई ॥४॥

(१०)

मनुआँ खेलहु ख्याल मचाई ॥
अजब तमासे अहैं नगर में, देखि न परहु भुलाई ॥१॥
यहि नगरी का सीर थाह नाहिं, अंत न केहू पाई ।
ठग श्रौ डाइन बसत ताहि मैं, तिन हीं की प्रभुताई ॥२॥

सोरह सहस जहँ उठैं तरंगैं पाँच पचीस मग धाई ।
तिन्ह जो जीतै चढ़ै गगन कहँ, तब ह्वै थिर ठहराई ॥३॥
ताहि के संग रंग रस माते, सबै एक रस आई ।
जगजीवन निरगुन गुन मूरति, रहिये सुरति मिलाई ॥४॥

(११)

रहु मन चरनन लाय, खेलौ होरी ।
अवसर इहै बहुरि नहिं पैहौ, दिह्यो न काहू खोरी* ॥१॥
आये बहुत परे बंधन माँ, सक्यो न फंदा तोरी ।
ऐंचा खैंची भै सबहिन कै, परिगै झक्काझोरी ॥२॥
बचे न कोऊ आय जगत महँ, लियो खाय विष घोरी ।
लियो बचाय आय सरनागति, पियो अमीरस तोरी† ॥३॥
धागा पाँच पचीस लिये सँग, करहिं राति दिन सोरी ।
इन तें खबरदार ह्वै रहिये, बाँधि लेहु इक डोरी ॥४॥
मैं मारि‡ जीवत रहहु मरहु नाहिं, तें काँ डारहु तोरी ।
चढ़हु पड़हु सतसंग बास करि, गुरु तें रहहु कर जोरी ॥५॥
निर्मल जोति निहारत रहिये, बहुरि होय नहिं फेरी ।
जगजीवन जग आस तजे रहु, यहि बिधि खेलहु होरी ॥६॥

(१२)

काया सहर कहर, कैसे खेलौं होरी ।
अंत न पावौं भेद, अहै केतिक मति मोरी ॥१॥
मैं तो परिउँ भुलाय, टूटि गै डोरी ।
करौं अब कौनि उपाय, ताजिन सुधि मोरी ॥२॥

---

*दोष । †घूँट । ‡ "मैं" को मार कर ।

माया परि जंजाल, कैसे अब छोरी ।
आय कौल करि सुद्धि हरी, मैं कीन्ह्यो चोरी ॥३॥
उनके नाहीं लागु, अहै सब हमरी खोरी ।
झूठ भरम परि कर्म, औगुन बहु कीन्ह्यो को री॥४॥
आयो रहि निर्बान, यहाँ बिष अमृत घोरी ।
अरे मन मुगुध* समुझि, सब जानहु थोरी ॥५॥
यहँ तेँ उलटि लगाय, डारि दे जग तेँ तोरी ।
कोऊ रहन न पाइ है, लै जैहै बरजोरी ॥६॥
सबै खाक ह्वै जाइ हैँ, साँवरि औ गोरी ।
मैं तैँ पाँच पचीस, बाना† ते सब काँ छोरी ॥७॥
जगजीवन चढ़ि गगन, लाउ लै पोढ़ी ।
चरनम सीस राखि, पाछे नहिँ हेरी‡ ॥८॥

(१३)

मनुआँ फाग खेलु पहिचानी ॥ टेक ॥
बेद पुरान ग्रन्थ ते सब तेँ, लीन्ह्यो सारहिँ छानी ।
सो लै गहहु बहहु नहिँ काहूँ, मन बिस्वास करि आनी ॥१॥
सिव ब्रह्मा औ बिस्नु हित लागे, मानि लेहु परमानी ।
अस रस पाइ कै भीँजि मस्त भे, तिन हीं कह्यो बखानी ॥२॥
मंडफ अजब रात दिन नाहीं, एक जोति निर्बानी ।
तेहिँ कै दिप्र महा उँजियारो, सब महँ जोति समानी ॥३॥
लेहु माँगि दीन ह्वै बहु बिधि, दाता सतगुरु दानी ।
जगजीवन दै सीस चरन तर, अचल अमर ठहरानी ॥४॥

---

*मूढ़ । †भेष, बस्त्र । ‡देखो ।

(१४)

यहि जग होरी, अरी मोहिं तैं खेलि न जाई ।
साँईं मोहिं बिसराय दियो है, तब तैं पर्यौं भुलाई ॥१॥
सुख परि सुद्धि गई हरि मोरी, चित्त चेत नहिं आई ।
अनहित हित करि जानि बिषै महँ, रह्यो ताहि लपटाई ॥२॥
यहि साँचे महँ पाँचौ नाचैं, अपनि अपनि प्रभुताई ।
मैं का करौं मोर बस नाहीं, राखत हैं अरुझाई ॥३॥
गगन मँदिल चलि थिर ह्वै रहिये, तकि छबि छकि निरथाई ।
जगजीवन सखि साँईं समरथ, लेहैं सबै बनाई ॥४॥

(१५)

औसर बहुरि न पैहौ मनुआँ, खेलहु नगरी फाग ।
काया कनक अनूप बनी है, सुकृत नाम अनुराग ॥१॥
सात दीप नौ खंड पिर्थवी, सात समुद्र समाग ।
तोहिं भीतर तीरथ अनेक हैं, सोवत कस नहिं जाग ॥२॥
तजि दे पाँच पचीस औ तीनिउ, चौथे के पथ* लाग ।
दरस देख तहँ जाय पुरुष का, निरखि नीर रस पाग ॥३॥
झलकत रूप अनूप तहँ निर्मल, गहु ऐसो बैराग ।
ब्रह्मा बिस्नु सिव का मन तेहि माँ, सो गुरु जान सत भाग ॥४॥
जगजीवन निर्बान ध्यान करु, जक्त धंध सब त्यागु ।
अमर अजर अचल जुग जुग होइ, सीस चरन बर माँगु ॥५॥

(१६)

अरी मैं खेलौं रि फाग ।
दृढ़ कै डोरी पोढ़ि कै राखौं, गावौं मैं सुर राग ॥१॥

---

*पंथ, राह ।

मँदिल सोहावन नीक बना सखि निसु बासर तैँ जाग।
लै लावो जहँ पीव बसतु हैँ, सकल भरमना त्याग ॥२॥
निरखेहु निरति से रूप कहैा मोहिँ, इहै मंत्र अनुराग।
देखि दरस रस बस छबि मोही, दुइ कर जोरि कै माँग ॥३॥
पाँच पचीस सुरति सँग तोरे, करि बस मन तैँ पाग।
जगजीवन सखि सीस चरन धरु, जानहु आपन भाग ॥४॥

(१७)

मगन ह्वै खेल री होरी ॥ टेक ॥
यहि नैहर सुख परि नाहिँ भूलहु, फेरि नाहिँ केहु
दीन्ह्यो खोरी ॥१॥
पाँच भाय रस भंग करतु हैँ, इन बस परिय कठोरी ॥२॥
लेवौ लाइ पचीस इक संगहिँ, एक लाय लै नाहीँ छोरी ॥३॥
मैँ तैँ त्यागु गुमान न करु कछु, गगन अटारी चढ़ु पिय
होरी ॥४॥
रहि सतसंग सुरति सुख बिलसहु, लज्जा कानि त्यागु
सब बौरी ॥५॥
जगजीवन सखि कबहुँ न छूटै, जुग जुग प्रीति लागि
रहै पोढ़ी ॥६॥

(१८)

सखी री मैँ केहिँ बिधि मन समुझावौँ ॥ टेक ॥
गुन बिहून मैँ जोगिनि बैारी, बहु बिधि भेष बनावौँ ॥१॥
सकल जहान मैँ भ्रमत फिरत हौँ, पिय का अंत न पावौँ ॥२॥
जगजीवन सखि निरखि परखि कै, वह छबि नहिँ
बिसरावौँ ॥३॥

(१९)

नैन निरखि छबि देखि होरी खेलौ री ।
मैं बौरी ब्याकुल भइउँ, ढूँढ़त भेँट करन के हेत ॥१॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, अपरम्पार अलेख ।
तीनि लोक भूमि भसम चढ़ायो, करि जोगिन का भेख ॥२॥
कनक नगर सिरसंग महल मैं, बिनु उँजियारे सेत ।
लोक कानि मरजाद त्यागि सखि, हम तुम मिलिय समेत ३
लै कै पाँच नाचु होरी गहि, तजि कै कपट कि रेख ।
लाय साज लेहु सँग अपने, मानि लेहु सत एक ॥४॥
करि तहँ बास पास हौं छबि पर, रबि ससि वारू अनेक ।
जगजीवन मूरति दरसन रस, पीवत होत सँतोख ॥५॥

(२०)

होरी खेलौ संत चरन सँग, मगन रहौ रस रंग ।
काया मढ़ी गढ़ी है साँईं, रह्यो ब्यापि सब अंग ॥१॥
रहि तजि तीनि बसौ चौथे महँ, कबहुँ न ह्वै चित भंग ।
निरमल नीर बिहून रूप छबि, निरखि वारि ससि भानु अनंग* ॥२॥
ब्रह्मा बिस्नु सिव का मन एकै, ह्वै कै ताहि मिलै सतसंग ।
वाही लाय खेल खेलत है, करि करि नेग† तरंग ॥३॥
चमकत सो निरबान अमूरति, छकित भयो मन बोधि उमंग ।
जगजीवन बैठे तेहिं छाया, भे निरबान निहंग ॥४॥

*कामदेव । †अनेक ।

(२१)

अरी ए मैं तो बैरागिन, होरी कैसे खेलौं री ॥ टेक ॥
ढूँढ़त फिरौं कहुँ अंत न पावौं, कैसे कै धीर धरौं री ॥१॥
समुझि बूझि पछिताय रहिउँ मैं, का सौं भेद कहौं री ॥२॥
आपु चढ़े सिरसंग अटरिया, अब मैं धाइ चढ़ौं री ॥३॥
जगजीवन ऐसे साँईं के, चरनन सीस धरौं री ॥४॥

(२२)

कैसे फाग खेलौं यहि नगरी ।
काया नगर कै अंत खोज नहिँ, भटकत भ्रमत फिरौं री ॥१॥
नगरी नौ खिरकी फिरकी नहिँ, धुआँधार बरसौ री ।
तेहिँ की छाँह फिरौं बौरानी, मोहिँ न सूझि परौ री ॥२॥
फिरत पाँच वै दंडी बैरी, कल न करैं सकुचौं री ।
निसु बासर मोरे पिंड पड़तु हैं, गई सुधि सब बिसरौ री ॥३॥
तिन्ह की नारि रमहिँ पचीस सँग, अचलनि बहुत करहिँ री ।
समुझाये समुझत कछु नाहीं, सबै बिगार करहिँ री ॥४॥
सोरह सै तहँ फिरैं फिरंगिनि, कूप चौरासी गुन गहिरी री ।
तेहि करार बसि और बतावहिँ, तीनिउ लोक ठगी री ॥५॥
मैं मतंग तैं तोरि मिताई, हम तुम समत करी री ।
होइ एक मिलि चलिये वहँ जहँ, सत पिउ संग बरी री ॥६॥
सब लै त्यागि पयान गगन तकि, जहँ रबि ससि दिप्त हरी री ।
जगजीवन सखि हिलि मिलि करि कै, सूरति छबिहिँ गही री ॥७॥

(२३)

दुनियाँ जग धंध बँधा इक डोरी ।
कौनिउ नाहिँ उपाय, सकै कोइ नाहीं छोरी ॥१॥

सत्त सुकृत बहु नाम, रहै गहि अंतर चोरी ।
याहै अहै उपाय, लीन्ह तिन आपुहिँ छोरी ।२॥
सबै आपुनी लागु, देइ को केहि काँ खोरी ।
अमृत रसना तजै, खाइ रहि बिष माँ घोरी ॥३॥
ताहि तेँ सूझत नाहिँ, बुद्धि भै तेहि तेँ थोरी ।
मैँ तैँ गर्ब गुमान, जात सो नाहीँ तोरी ॥४॥
अंत गये बिनसाय, भये हैँ खाक कि ढेरी ।
अंत चले पछिताय, केहू नहिँ काहु बहोरी ॥५॥
काल तेँ सो बचि रह्यो, जो गुरु तेँ रहि कर जोरी ।
जगजीवन गहि चरन, करी निजु सूरत पोढ़ी ॥६॥

(२४)

अरी ए नैहर डर लागै, सखी री कैसे खेलौँ मैँ होरी ।
औगुन बहुत नाहिँ गुन एकौ, कैसे गहौँ दृढ़ डोरी ॥१॥
केहिँ काँ दोस मैँ देउँ सखी री, सबै आपनी खोरी ।
मैँ तो सुमारग चला चहत हौँ, मैँ तैँ बिष माँ घोरी ॥२॥
सदा पाँच परिपंच मेँ डारत, इन तेँ बस नहिँ मोरी ।
नाहिँ पचीस एक सँग आवत, धरत मोहिँ कहि मोरी ॥३॥
समत होहि तब चढ़ौँ गगन गढ़, पिय तेँ मिलौँ कर जोरी ।
भीजौँ नैनन चाखि दरस रस, प्रीति गाँठि नहिँ छोरी ॥४॥
रहौँ सीस दै सदा चरन तर, होउँ ताहि की चेरी ।
जगजीवन सत सेज सूति रहि, और बात सब थोरी ॥५॥

(२५)

पिय तें रहु लौ लाय, सुनहु सखि मोरी ॥ टेक ॥
कहौं साँची समुझाय, करौं नहिं चोरी ।
लोक लाज कुल कानि त्यागि, प्रीति नहिं तोरी ॥१॥
मैं तैं सखि दे त्यागि, सचेत हो बौरी ।
पाँच प्रपंचहिं त्यागि, डारि इन सब अरुझोरी ॥२॥
करि पचीस बहु रंग, खेलत हहिं होरी ।
एइ सब रसहिं रसाय, बाँधि ले एकहिं डोरी ॥३॥
चढ़ि गढ़ गगन टक लाय, नयन रहु जोरी ।
जगजीवन सत सेज सूति, जुग जुग तेहिं के री ॥४॥

(२६)

सतगुरु साहेब समरथ, सुनु अरज हमारी ।
आदि अंत का आहुँ मैं, कबहूँ न बिसारी ॥१॥
केतेउ गुनहगार पापी, तेहिं लीन्ह्यो तारी ।
जब दाया तुम कियो, तब निरखि निहारी ॥२॥
एक जोति एक हूै, तिन रूप निहारी ।
सुमिरत ब्रह्मा बिस्नु, सिव लाये तारी ॥३॥
जल थल घट घट सर्ब माँ, है जोति तुम्हारी ।
जगजीवन तेहिं चरन की, जाऊँ बलिहारी ॥४॥

(२७)

रहु मारग ताके, होरी खेलु जगत माँ आन ॥ टेक ॥
यह होरी नित बरत जहाँ तहँ, सुरति तेँ करु पहिचान ।
दृष्टिहिं दृष्टि मिलाय रहौ तहँ, मिथ्या जगतहिं जान ॥१॥
सँगई भँवरिया देत हिये की, सो सखि चतुर सुजान ।
अजर अमर बर पाय मगन हूै, रहहु चरन लपटान ॥२॥

ते खेलहिं अपने पिय के सँग, छाँड़ि लाज औ कान ।
बहुतक फिरहिं गरब की माती, खोजत पुरुष बिरान* ॥३॥
इन बातन कछु भल है नाहीं, समुझौ अपने ज्ञान ।
जगजीवन बिस्वास आनि मन, चीन्हहु पुरुष पुरान ॥४॥

(२८)

मैं तो परिउँ भुलाइ, काहि सँग खेलौं होरी ।
ढुँढ़त ढुँढ़त मैं थकित भई हौं, कस पिय की अनुहारी† ॥१॥
नींद न आवै सुख नहिं मोहिं काँ, ढूँढ़ि मुइउँ बन झारी ।
कहँ धौं अहैं देखि मैं पावौं, तन मन देहौं वारी ॥२॥
निरति सुरति काँ कहि समझावै, सुन ले बचन हमारी ।
हम तुम मिलि कै चली गगन कहँ सुख होइहि अधिकारी ॥३॥
पाँच पचीस लाय इक रस तें, एकौ रहै न न्यारी ।
गगन मगन साँईं रँग रातै, दीजै सबै बिसारी ॥४॥
रहि सतसंग बाँधि जुग जुक्तिहिं, निरखत रहि अनुहारी ।
जगजीवन सखि चरन सीस दै, दुनियाँ धंध बिसारी ॥५॥

(२९)

या बन में मन खेलत होरी ॥ टेक ॥
सील सिया रस रंग राम है, लछमन सँग लिये जोरी ॥१॥
नर सो पाँच पचीसौ नारी, त्रिमति तें धूम मच्यो री॥२॥
जगजीवन छबि निरखि निरति से, चरनन सीस धरो री॥३

---

*दूसरे का । †सूरत, रूप ।

मिश्रित अंग

॥ शब्द १ ॥

यहि नगरी महँ आनि हिरानी ॥टेक॥
गली गली महँ चलत फिरत रहि, अंत नहीं मैं जानी ।
जब मैं आइउँ कोउ सँग साथ न, इहवाँ भइउँ बिरानी ॥१॥
सोई समुझि जन्म पाइ जग, मूल बस्तु नहिं जानी ।
बड़े भाग तें पाइ देंह नर, सुधि गै भूलि परिउँ भव आनी २
देखत खात पियत गाफिल मन, सुख आनंद बहुत हरषानी ।
डोलत बोलत चलत अपथ पथ, भरे मद अंध गुमानी ॥३॥
मैं तैं मारि सँभारि न आवै, अघ कर्म हित करि बहुत कमानी ।
तेहि परि हरिगै सुधि बुधि सब कर, पग थाके जब फिर
पछितानी ॥४॥
साधो साधि सुरति दृढ़ करिये, रहि रसि बसि छबि अंतर जानी।
जगजीवन ते जग तें न्यारे, गुरु के चरन तजि और न जानी ॥५

॥ शब्द २ ॥

सुनु बिनु कृपा भक्त न होइ ।
नाहीं अहै काहु के बस मैं, चहै मन महँ कोइ ॥१॥
तिरथ ब्रत तप दान पुन्नं, होम जज्ञं सोइ ।
बैठि आसन मारि जंगल, तेहु भक्त न होइ ॥२॥
ज्ञान कथि कबि पढ़ै पंडित, डारि तन मन खोइ ।
नहीं अजपा जाप अंतर, भरम भूले रोइ ॥३॥
दियो दुइ अच्छर भइ दाया, गहा दृढ़ मत टोइ ।
जगजिवन बिस्वास बस जन, चरन रहे समोइ ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

आय के झगरा लायो रे ॥ टेक ॥

जहँ तें चलि एहि जग कहँ आयो, वह सुधि मन तें
त्याग्यो रे ॥ १ ॥

सतगुरु साहेब कान लागि मोरे, मैं सोवत उठि जाग्यो रे॥२॥

भयौं सचेत हेत हित लाग्यो, सत दरसन रस पाग्यो रे ॥३॥

जगजीवन बर नाम पाइ कै, चरन कमल अनुराग्यो रे॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

चरनन तर दियो माथ, करिये अब मोहिं सनाथ,
दास करिकै जानी ।

बूड़ा सब जग्त सार, सूझै नहिं वार पार,
देखि नैनन बूझिय हित आनी ॥

सुमति मोहिं कौं देउ सिखाय, आनि मैल रहि लोभाय,
बुद्धिहीन भजन हीन, सुद्धि नाहिं आनी ।

सहस फन तें सेस गावै, संकर तेहिं ध्यान लावै,
ब्रह्मा बेद प्रगट कहै बानी ॥

कहौं का कहि जात नाहिं, जोतो वा सब माहिं,
जगजीवन दरस चहै, दीजै बरदानी ॥

॥ शब्द ५ ॥

कहाँ गयो मुरली को बजैया, कहाँ गयो रे ॥टेक॥

एक समय जब मुरली बजायो, सब सुनि मोहि रह्यो रे ।

जिन के भाग भये पूर्बज* के, ते वहि संग रह्यो रे॥१॥

---

*पूर्ब जन्म ।

खबरि न कोई केहु की पाई, को धौं कहाँ गयो रे ।
ऐसे करता हरता येहि जग, तेऊ थिर न रह्यो रे ॥२॥
रे नर बौरे तैं कितान है, केहिं गनती माँ है रे ।
जगजीवनदास गुमान करहु नहिं, सत्त नाम गहि रहु रे ॥३॥

॥ शब्द ६ ॥

तुम तैं कहत अहौं सुनाय ।
चरन परि कै करौं बिनती, लेहु प्रभु जो बनाय ॥१॥
भान गन ससि तीनि चारिउ, लिये छिनहिं बनाय ।
आनि इच्छा भई ऐसी, बिलँब नाहीं लाय ॥२॥
महा अपरबल अहै माया, दियो सब छिटकाय ।
जहाँ जैसी तहाँ तैसी, दियो धंधे लाय ॥३॥
पाय रस तस रंग राते, लागि कर्म कमाय ।
ताहि के बस कर्म परि कै, मिले तेहि माँ जाय ॥ ४ ॥
डारि दीन्ह्यो जक्त फाँसी, खैंचि नाच नचाय ।
बिना सतगुरु पार नाहीं, फेरि फिरि डहकाय* ॥ ५ ।
लियो लाइ लगाय चित्तहिं, मंत्र दीन्ह सिखाय ।
नाम गहि रहे जक्त न्यारे, भक्त सोइ कहाय ॥ ६ ॥
साधु ऐसे अहैं जग यहि, काहु नहिं गति पाय ।
जगजीवन वै अमरगढ़ मेँ, बैठि थिर ह्वै जायँ ॥ ७ ॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो नाम भजहु मन माहिँ ।
दुइ अच्छर रसना रट लावहु, परगट भाखहु नाहिँ ॥ १ ॥

---

*धोखा खाना ।

करि कै जुक्ति रहहु जग न्यारे, रहि के जक्तहिं माहिं ।
जैसे जल महँ रहै जल-कुकुरी*, पंख लिप्त जल नाहिं ॥ २ ॥
भव का सागर कठिन है साधो, तीर थाह कछु नाहिं ।
सुगति नावँ† के बेड़ा‡ चढ़ि कै, तेई पार तरि जाहिं ॥ ३ ॥
गुप्त प्रगट सत मंतर आहै, समुझहु आपुहि माहिं ।
जगजीवन गुरु मूरत निरखहु, सीस चरन तेहिं माहिं ॥ ४ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो नाम बिसरि नहिं जाई ।
सोवत जागत बैठे ठाढ़े, अंतर गुप्त छपाई ॥ १ ॥
सेस सहस मुख नामहिं बरनत, संकर तेउ लव लाई ।
ब्रह्मा चारिउ बेद बखानत, नामहिं की प्रभुताई ॥ २ ॥
नेगन§ पतित तरे यहि नाम तें, सकै कौन गति गाई ।
तीरथ बरत तपस्या करि कै, बड़े भाग जिन्ह पाई ॥ ३ ॥
नामहिं गहहु रहहु दुनिया में, गहे रहहु दिनताई ।
जगजीवन जग जनम देँह धरि, होइहि तबहि बड़ाई ॥ ४ ॥

॥ शब्द ९ ॥

मन तन काँ खाक जानु, चित्त रहु लगाई ॥ टेक ॥
निर्गुन तें फूटि छूटि, टूटि नाहिं जाई ।
सुधि सँभारि उलटि निरखि, छोड़ि देहु गाफिलाई ॥ १ ॥
पुरइन पात नीर जैसे, रहु ऐसे ठहराई ।
बास जक्त रहि निरास, निरखहु निरथाई ॥ २ ॥
कंज बास बिगसित मधुकर, मनि जोति मिली आई ।
संपुट करि बाँधि प्रीति, उड़न नाहिं पाई ॥ ३ ॥

---

*मुरग़ाबी । †नाव । ‡किश्ती । §अनेक ।

ऐसी यह जुक्ति भक्त, जक्त माँ रहाई ।
जगजीवन बिस्वास करि कै, चरन गुरु लपटाई ॥ ४ ॥

॥ शब्द १० ॥

मनुआँ तैं कहुँ अनत न जाई ।
गगम गुफा सतगुरु कै मूरति, तहाँ रहौ लौ लाई ॥ १ ॥
है माया बिस्तार ताहि का, अंत न काहू पाई ।
वहि घर तें निरमल चलि आयो, इहवाँ गयो भुलाई ॥ २ ॥
कोई तपस्या दान पुन्न करै, कोइ कोइ तिरथ नहाई ।
कोई पखान बखान करत रहै, याही गये भुलाई ॥ ३ ॥
नाम नाहिँ अंतर महँ चीन्है, बहुत कहै बकताई ।
जगजीवन निरमल मूरति तेँ, रहौ एक टक लाई ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

अब मन बैठि रहु चौगान ।
महा अपरबल अहै माया, अनत करु न पयान ॥ १ ॥
गये बाहर जाहुगे बहि, भूलि है बहु ज्ञान ।
मंत्र मत कहि देत आहौँ, मानि ले परमान ॥ २ ॥
पवन पानी नाहिँ तहवाँ, नाहिँ ससि गन भान ।
नाहिँ सुधि बुधि सुःख दुःखं, सत्त दिष्टि निसान ॥ ३ ॥
निरखु निरमल लाइ इक टक, निर्गुनं निर्बान ।
जगजिवन गुरु बाँधि रहु जुग, (तहँ) चरन हीं लपटान ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

साधो को मूरख समुझावै ।
सूकर स्वान बृषभ* खरकी बुधि, सोई वहि काँ आवै ॥१॥

---

*बैल, साँड़ ।

बहु बकबाद बिबाद करहिँ हठ, करहिँ जो मन माँ भावै।
बेद गरंथ अनत कहँ निंदत, औरहिँ ज्ञान सिखावै ॥२॥
बहु अहंकार क्रोध छिम नाहीं, नाहक जीव सतावै।
इतने पाप परै दुख तिन कहँ, सुख नहिँ कबहूँ पावै ॥३॥
परैँ अघोर नर्क ते प्रानी, नाम न सुपनेहुँ आवै।
जगजीवन जे जे ऐसे हहिँ, बिरथा जन्म गँवावै ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

मूरख बड़ा कहावै ज्ञानी।
सब्द संत का मानै नाहीं, अपने मन की ठानी ॥१॥
भक्त काँ देखि चलहि सूमारग, भजन नाहिँ मन आनी।
कहहि कि हम समान नहिँ कोई, बूड़े ते अभिमानी ॥ २॥
कबहुँ के चुटकी देहि भिखारी, कहहि कि हम बड़ दानी।
हम जोगी हम ध्यानी आहैँ, हम हन आगम-जानी ॥३॥
ऐसे बहुतक आहहिँ एहि जग, परहिँ नरक ते प्रानी।
जगजीवन वै न्यारे सब तेँ, सूरति मुरति समानी ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

कलि को देखि परखि मैँ जानी।
मातु पिता काँ दे दुख बहु बिधि, कछु मन दरद न आनी १
देखा नैनन सो कहि भाषौं, लिया बिबेक करि छानी।
सुत परबीन कहावत बहुतै, पितहिँ कहै अज्ञानी ॥२॥
पकड़ि टाँग घिसियावहिँ मारहिँ, तजहिँ धरम की कानी।
जीवत जैसे धरत हैँ हाड़ा, मुए देत हैँ पानी ॥३॥
रहे इक भक्ति अचार बिचारे, पंडित बचन प्रमानी।
देहिँ पिंड बहु प्रीति भाव करि, अस सरा धनहिँ मानी ॥४॥

बिप्रन कहँ पकवान खवावहिं, भात बरा तिथि मानी ।
आजा बाप कै नाम पुकारहिं, खाइ के पेट अघानी ॥५॥
बहुतन के जग ऐसे पच्छन*, होवै जेहिं जस ठानी ।
पड़े अघोर नर्क माँ सोई, जिन अस कीन्हो प्रानी ॥६॥
त्यागै कुमति सुमति मन गहि रहि, बोल सदा सुभ बानी ।
जगजीवन तेहिं हित प्रभु मानत, कबहुँ न अंतर आनी॥७॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो नहिं कोइ भरम भुलाई ।
कहे देत हौं प्रगट पुकारे, राखौं नाहिं छिपाई ॥१॥
नाम अच्छर दुइ तत्त सार है, भजै सोई चित लाई ।
यहि सम मंत्र और है नाहीं, देख्यो ज्ञान थहाई ॥ २ ॥
रटै सो अंतर गुप्त रहै जग, काहु न देइ जनाई ।
अपने भाय सुभाय रमत रहै, चित्त न अनते जाई ॥३॥
सिखि पढ़ि फूलि भूलिगे बहुतै, करै बिबाद अधिकाई ।
अस कलि-भक्त पुजावे खातिर, परहिं नरक महँ जाई ॥४॥
बहुतक पंडित सब्दी ज्ञानी, जहँ तहँ आपु पुजाई ।
भजहिं न नाम रंग नहिं रातहिं, कहि औरन समुझाई ॥५॥
भेख अलेख कहा मैं बखानौं, मैं तैं कै प्रभुताई ।
त्यागिन्ह ध्यान अपथ पथ धावहिं, लागे कर्म कमाई ॥६॥
जानि कै कानि त्याग दइ सोई, लागि करै कुटिलाई ।
ताहि पाप संताप भयो तेहिं, गयो है सबै नसाई ॥७॥
सब संसार अहै सब ऐसै, काहुहिं चेत न आई ।
महा अपरबल माया बस परि, डारि दियो भरमाई ॥८॥

---

*हठ, टेक ।

कोइ कोइ उबरे गुरु किरपा तैं, जुक्ति भाग तें पाई ।
जगजीवन गृह ग्राम भवन सम, चरन रहे लपटाई ॥९॥

॥ शब्द १६ ॥

साधो मैं ज्ञान सोँ तत्त बिचारी ।
जो बूझै तो सूझि अंध भा, जानिकै भयो अनारी ॥१॥
तीन लोक तीनिउ जब कीन्हेउ, चैाथो साजि सँवारी ।
ताहि मद्ध रबि ससिगन तारे, को करि सकै बिचारी ॥२॥
आहि को कौन कौन सबहीं महँ, नाहिं पुरुष नहिं नारी ।
बासन नाँव धरा सबही केहु, वह तो सब तें न्यारी ॥३॥
फूटि निर्गुन तेँ आयो ब्रह्मंडहि, गुन धरि भटका सारी ।
बासन बुन्द ब्रह्म वह एकै, कहत हैं न्यारी न्यारी ॥४॥
भूला सब प्रकृती सुभाव तैं, नाहीं सुद्धि सँभारी ।
जगजीवन कोइ उलटि पवन कहँ, गहि गुरु चरन निहारी ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

पंडित काह करै पँडिताई ।
त्याग दे बहुत पढ़ब पोथी का, नाम जपहु चित लाई ॥१॥
यह तो चार बिचार जगत का, कहे देत गोहराई ।
सुनि जो करै तरै पै छिन महँ, जेहिं प्रतीति मन आई ॥२॥
पढ़ब पढ़ाउब बेधत नाहीं, थकि दिन रैन गँवाई ।
एहि तेँ भक्ति होत है नाहीं, परगट कहौं सुनाई ॥३॥
सत्त कहत हैाँ बुरा न मानो, अजपा जपै जो जाई ।
जगजीवन सत मत तब पावै, उग्र ज्ञान अधिकाई ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

प्रभु मैं कछु जानि न पायो ।
हाँ तो पठयो मोहिं कौलि करि, वह सुधि मैं बिसरायो ॥१॥
अब सुधि भई चेत जब दीन्ह्यो, चित्त चरन तैं लायो ।
मैं को आहुँ अहहु सब तुमहीं, तुमहीं कारन लायो ॥२॥
अब निर्बाह हाथ है तुम्हरे, मैं नाहिं लखा लखायो ।
बहा जात रह्यौं अपथ पंथ महँ, सरन खींच ले आयो ॥३॥
अब अरदास सुनहु एह मोरी, तुम समरत्थ कहायो ।
जगजीवन दास तुम्हार कहावै, अनत न कतहुँ बहायो ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

अब मन भयो है मस्तान ।
धन्य साधू रहहि साधे, गहहि करि पहिचान ॥ १ ॥
सीस दीन्ह्यो चरन परिया, करहि सोइ बयान ।
सब्द साँची कहत भाषे, मानु सुनि परमान ॥२॥
तकत नैनन निरखि निर्गुन, रहत ताहि समान ।
नाहिँ टूटत नाहिँ छूटत, भरम तजि दृढ़ आन ॥३॥
अजब सतगुरु दिये जेहिँ गुन, नाहिँ तेहि सम आन ।
जगजीवन सो भयो पूरा, कहत बेद पुरान ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

जब तैं देखि भा मस्तान ।
रोम रोमं छकित ह्वैगा, करै कौन बखान ॥१॥
जैसे गूँगा खाइ गुड़ को, करै कवन बयान ।
जानि सोई मानि सोई, ताहि तस परमान ॥२॥

नाहिँ तन की सुद्धि आहै, भूलिगा बहु ज्ञान ।
गुरू की निर्बान मूरति, ताहि माहिँ समान ॥३॥
सीस लाग्यो चरन महिँयाँ, सदा है गलतान ।
जगजिवनदास निरास आसा, सतसँग नहिँ बिलगान ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

साँईं काहु के बस नहिँ होई ।
जाहि जनावै सोई जानै, तेहि तेँ सुमिरन होई ॥१॥
आपुहिँ सिखत सिखावत आपुहिँ, आपुहिँ जानत सोई ।
आपुहिँ बरतं बिदित करावत, आपुहिँ डारत खोई ॥२॥
आपुहिँ मूरुष आपुहिँ ज्ञानी, सब महँ रह्यो समोई ।
आपुहिँ जोति अहै निर्बानी, आपु कहावत वोई ॥३॥
संत सिखाइ कै ध्यान बतायो, न्यारा कबहुँ न होई ।
जगजीवन बिस्वास बास करि, निरखत निर्मल सोई ॥४॥

॥ शब्द २२ ॥

साधो कठिन जोग है करना ।
जानत भेद बेद कछु नाहीं, नाहक बकि बकि मरना ॥१॥
द्वादस आँगुर पवन चलतु है, नाहिँ सिमटि घर औना ।
ना थिर रहहि न हटका मानै, पलक पलक उठि धौना ॥२॥
दुइ आँगुर मौताज* रहै, तब करै एक सी गौना ।
तहाँ अमूरति संग बसेरा, तेहि का होइ खिलौना ॥३॥
रहि तेहिँ साथ सनाथ करै सो, रमत रहै तेहिँ भौना† ।
जगजीवन सतगुरु कै मूरति, निरखो निर्मल ऐना ॥४॥

---

* नाप । † घर ।

॥ शब्द २३ ॥

साधो कासी अजब बनाई ।
साँईं समरथ सब रचि लीन्ह्यो, धोखा सबहिँ दिखाई ॥१॥
काया कनक बनायो पल मैं, तेहिँ का अंत न पाई ।
है घट हीं केहु सूझा नाहीं, अंतहिँ अंत बताई ॥२॥
सात दीप नौखंड पिर्थवी, सिद्धन इहै लखाई ।
सात समुद्र कि लहरि तरंगैं, पंछी पानि न पाई ॥३॥
पंछी उड़ा गयो ऊपर काँ, पानि पानि धुनि लाई ।
पायो पानी बुन्द चौंच तें, तिरपति प्यास न जाई ॥४॥
बैठा डार बिचार करै तहँ, तकि थिर सुधि बिसराई ।
जगजीवन अस ठानि लियो जिन्ह, तिन्ह काँ जोग दृढ़ाई ॥५॥

॥ शब्द २४ ॥

साधो भले अहैँ मतवारे ।
कुत्ते पाँच किये बसि डोरी, एकौ रहत न न्यारे ॥१॥
कुत्ती पचीस ताहि सँग लागीं, ताहि संग अधिकारे ।
सबै बटोरि एक माँ बाँध्यो, साधे रहहिँ सँभारे ॥२॥
सो लै जाय गये मंडफ कहँ, जोगी आसन मारे ।
भे गुरुमुखी ताहि ढिंग बैठे, महा दिप्र उँजियारे ॥३॥
पीवत अमी अमर ते जुग जुग, रहत हैँ जुगुत बिचारे ।
जगजीवनदास अचल ते साधू, नाहिँ टरत हैँ टारे ॥४॥

॥ शब्द २५ ॥

बपुरा का गुनि गुनि कोउ गावै ।
जा की अपरम्पार अहै गति, अंत न कोऊ पावै ॥१॥

सेस सारदा ब्रह्मा सुमिरत, संकर ध्यान लगावै ।
बिनती बिस्नु करहिँ कर जोरे, सूरति सुरति मिलावै ॥२॥
माया प्रबल बिस्तार दियो है, सब काँ नाच नचावै ।
न्यारा न्यारा नाम धरै काँ, आपु नहीँ जग आवै ॥३॥
है बनाव कछु अजब तमासा, रंग मेँ रंग मिलावै ।
जानि परत पहिचान होत तब, चरन सरन लै लावै ॥४॥
सतगुरु साहेब जब तुम सिखवा, सिखि तब परगट गावै ।
जगजीवन है चरनन लागा, अब तुम्ह नहिँ बिसरावै ॥५॥

॥ शब्द २६ ॥

मन तैँ पियत पियै नहिँ जाना ।
पीयत रहेसि आइ मद मातेसि, अब कस भइसि हेवाना ॥१॥
पाँच पचीस अहैँ सँग बासी, ते तो हहिँ गैबाना* ।
बाँधु पोढ़ि कै साधि सुरत तेँ, करु तैँ गगन पयाना ॥२॥
रहु ठहराइ बहहु नहिँ कतहूँ, गुरु निरखहु निर्बाना ।
जगजीवनदास सदा सतसंगी, चरन रहौ लपटाना ॥३॥

॥ शब्द २७ ॥

अब मन रहहु थिर ठहराइ ।
पदुम पात्रं जैसे नीरं, नाहिँ बाहर जाइ ॥१॥
अहै मता गँभीर यह तो, गुरू दीन्ह बताइ ।
रहहु लागे पागि तेहि तेँ, परहु ना बौराइ ॥२॥
आइ जे जे बसे यहि जग, पियो रस हित लाइ ।
माति केते सोइगे हैँ, गुफा गये भुलाइ ॥३॥

* छिपे हुए ।

जागि चौंकि के खैंचि लीन्ह्यो, सरन पहुँचे जाइ ।
जगजीवन निर्बान सतगुरु, मिले तेहिँ लपटाइ ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

एहु मन खोट छोट न होइ ।
जात पल छिन धाइ जहँ तहँ, नाहिँ मानत सोइ ॥१॥
जहाँ बहु हित नीक लागत, बिलम तँहवाँ होइ ।
त्यागि मूरति भूलि सूरति, देत ध्यान बिगोइ ॥२॥
मैं न मरत तैं पहिरि धागा, मातु गर्भै सोइ ।
सयन* साथहिँ लिहे पाछे, नाहिँ जानै कोइ ॥३॥
मरै मंत्र तें धुआँ लागे, जाय बरतन खोइ ।
जगजिवन निर्गुन देखि निर्मल, रह्यौ ताहि समोइ ४ ॥

॥ शब्द २९ ॥

साधो नाम तें रहु लौ लाइ । प्रगट न काहू कहहु सुनाइ ॥१॥
झूठे परगट कहत पुकारि । तातें सुमिरन जात बिगारि ॥२॥
भजन बेलि जात कुम्हिलाइ । कौनि जुक्तिके भक्ति दृढ़ाइ ॥ ३ ॥
सिखि पढ़ि जोरि कहै बहु ज्ञान । सो तौ नाहिँ अहै परमान ४
प्रीति रीति रसना रहै गाय । सो तौ राम काँ बहुत हिताय ॥५॥
सो तौ मोर कहावत दास । सदा बसत हौं तिन के पास ॥६॥
मैं मरि मन को रहे हैं सँघारि† । दिप्त जोति तिन कै उँजियारि ७
जगजीवनदास भक्त भे सोइ । तिन का आवा गमन न होइ ८

॥ शब्द ३० ॥

साँईं अब मोहिँ दाया कीजे ।
औगुन कर्म गुनाह मेटिये, सरन राखि मोहिँ लीजे ॥ १ ॥

---

*फ़ौज । †मार डालना ।

सुरति सुमन सुभाव सुसीतल, सुधि किरपा करि दीजै ।
बिसरहि नाहिँ चरन मन मो तेँ, सत रस अमृत पीजै ॥२॥
झलमल निरखि परखि आमूरति, चुवै चमकि रस भींजै ।
लीन्हे रहु बिस्वास गहि थाती*, जनम जनम नहिँ छीजै ॥३॥
आवा गवन तवन थिर करिये, काल कँटक मिटि जीजै ।
जगजीवन बल सदा संत कहँ, अहै काल का कीजै ॥४॥

॥ शब्द ३१ ॥

यहु मन नाहिँ इत उत जाय ॥टेक॥
कृपा तेँ जब होइ थिर यहु, रहै दृढ़ता लाय ॥ १ ॥
बहुत खोजी खोज कीन्हे, दीन्ह केहु लखाय ॥ २ ॥
जिन्ह लखा तिन्ह लखा, नाहीँ परत नीचे आय ॥ ३ ॥
पाइ कस्तं करत है उहँ, रहत नाहीँ पाय ॥४॥
लीन्ह खैँचि कै ऐँचि सरनं, देत नाहिँ बहाय ॥ ५ ॥
जगजीवन गुरु किये दाया, नाहिँ तजि बिलगाय ॥ ६ ॥

॥ शब्द ३२ ॥

साधो मन भजहु सच्चा नाम ।
झूठि दुनियाँ झूठि माया, परि झूठे धन धाम ॥ १ ॥
झूठि संगत जगत की, परपंच काम हराम ।
परपंच पारस भजन बिगरत, होत नहिँ सिध काम ॥ २ ॥
पाँच और पचीस गहि, नित नेम करि संग्राम ।
जगजिवनदास गुरु चरन गहि, सत सूकृतं धन धाम ॥३॥

॥ शब्द ३३ ॥

साँई तुम समरत्थ हमारे ।
हम तो तुम्हरे दास कहावत, हमहिँ न रहहु बिसारे ॥ १॥

---

* पूंजी ।

जो बिस्वास किहे रहे मन तें, तिन्ह के काज सँवारे ।
जिन जाना अपने मन नाहीं, तिन्हैं भरम तुम डारे ॥ २ ॥
जहँ जहँ भक्त को गाढ़ पर्यो है, तहँ तहँ तुरत सिधारे ।
सुखी कीन्ह बिलम नहिं लायो, तुरतहिं कष्ट निवारे ॥३॥
बहुत निवाजा* कहँ लग गाजौं, बेद पुरान पुकारे ।
जगजिवन को चरन तुम्हारे, सो अवलम्ब† हमारे ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३४ ॥

साधो गहहु समुझि बिचारि ॥ टेक ॥
करै कोउ बिबाद निंदा, जाहु तेहिं तें हारि ।
मगन रहहू लगन लाये, डारि मैं तैं मारि ॥ १ ॥
पाँच एइ तो पचीस हहिं, ते देत अहहिं बिगारि ।
रहहु सीतल दीनता ह्वै, डोरि सुरति संभारि ॥ २ ॥
है अनूपं गगनगढ़ तहँ, रहहु आसन मारि ।
जगजीवनदास जोति निर्मल, देखि देखि निहारि ॥ ३ ॥

॥ शब्द ३५ ॥

साँईं गति जानि जात न कोइ ॥ टेक ॥
कृपा करहु जेहिं जानि आपन, भजन तेहि तें होइ ।
देखत नैनन सुनत सरवन, आवत अचरज सोइ ॥ १ ॥
तत्त सार बिसारि दीन्ह्यो, डारिन्हि सर्बस खोइ ।
भूला सब पाखंड महँ हित, रहे मैं तैं समोइ ॥ २ ॥
करत जानि बिबाद जहँ तहँ, परे भ्रम महँ सोइ ।
ब्रत भंग करि हठ मान मारहिं, भक्त एहि नाहिं होइ ॥ ३

*[illegible] की । †सहारा ।

इत्त उत्त पुजाइबे कहँ, नाहिँ हम सम कोइ ।
निंदहिँ साध कै सब्द काटहिँ, जनम सूकर होइ ॥ ४ ॥
रहै मन मरि मारि जग महँ, दुक्ख नाहिँ केहु देइ
कोमल बानी रहै सीतल, भक्त तबहीँ होइ ॥ ५ ॥
रहै लागी जाहि की जहँ, तहाँ तेहिँ का सोइ ।
बसत है सब आपु जल थल, नाहिँ दूजा कोइ ॥ ६ ॥
ध्यान धरु मन जानि अंतर, चरन गहि रहु टोइ ।
जगजिवनदास के तुमहिँ साहेब, चहौ करहु सोइ होइ ॥ ७ ॥

॥ शब्द ३६ ॥

साधो अंतर सुमिरत रहिये ।
सत्तनाम धुनि लाये रहिये, भेद न काहू कहिये ॥१॥
रहिये जगत जगत तेँ न्यारे, दृढ़ ह्वै सूरति गहिये ।
कर्म भर्म का होइ बिनासा, सत समरथ कहँ पइये ॥२॥
निंदा बादी बहुतक आहैँ, एइ सब दूरि बहैये ।
इन तेँ खबरदार नित रहिये, सुमति सुमारग चलिये ॥३॥
जो जस करहि सो तैसे पाइहि, सब्द पुकारे कहिये ।
जगजीवन बिस्वास किहे रहु, सूरति चरन मिलैये ॥४॥

॥ शब्द ३७ ॥

साधो भक्त जक्त तेँ न्यारा ।
उलटि दृष्टि दीन्ह चरनन तेँ, बास किहे संसारा ॥१॥
भ्रमत फिरहिँ निसि दिन दुनिया महँ, कीन्हे रहत बिचारा ।
अलख सरूप लखै कोउ नाहीँ, है गति अगम अपारा ॥२॥

तेहि कहँ सम करि जे नर जानहिँ, ते बूड़े मँझ धारा ।
परे अघोर नर्क ते प्रानी, नाहीं होइ उबारा ॥३॥
धन्य भक्त यहि जुक्ति रहँ जे, देखि जे करहिँ लबारा ।
जगजीवन रस मस सत माते, तकत रहे निरंकारा ॥४॥

॥ शब्द ३८ ॥

साधहिँ अबल न जानै कोई ।
जो कोउ मन महँ अबल बूझिहै, नर्क परै ते सोई ॥१॥
नाम अमल रस चाखि मस्त भे, ते नाहीं नर लोई ।
वै वाही सँ सुरति लाये, उनहिँ जानु ये वोई ॥२॥
साध सेस पुहमी सिर लीन्हे, नाहिँ दुचित्ते होई ।
रावन मारै की उपाइ कह, सायर बाँध्यो सोई ॥३॥
जिन्ह केहु साध क हीनै जाना, ते ते गये बिगोई ।
जुग जुग सदा अहै सँग बासी, बिलग न जानै कोई ॥४॥
चरनन सीस रहत है दीन्हे, निर्मल जोति समोई ।
जगजीवन मरि भे अम्मर जो, रहत देखि जम रोई ॥५॥

॥ शब्द ३९ ॥

साधो ज्ञान कथी कथि हारे ।
जा को वार पार नाहीं है, जानै कौन बिचारे ॥१॥
नानक कबीर नामदेव पीपा, सब हरि के हित प्यारे ।
जे जे वह रस पाइ मस्त भे, ते सब कुल उँजियारे ॥२॥
बरनत सेस सहसमुख जिभ्या, कीरति नाम पुकारे ।
नाम भरोस भयो है जिन के, ते बहुतेरे तारे ॥३॥
संकर बिस्नु ताहि मन सुमिरत, ब्रह्मा बेद पुकारे ।
निरगुन जोति अहै निरबानी, माया किहे बिस्तारे ॥४॥

जिन्ह काहू पर भई है दाया, राहत जगत बिसारे ।
जगजीवन सतगुरु के चरनन, निरखि सीस रहि वारे॥५॥

॥ शब्द ४० ॥

नाम की को करि सकै बड़ाई ।
जेइ जस माना तेइ तस जाना, भाग बड़े ते पाई ॥१॥
नामहिं तें बल भयो है सेसहिं, पृथवी भार उठाई ।
सदा मगन मस्तान रहत है, कबहुं नाहिं गरुवाई ॥२॥
हनूमान लछिमन औ भारत, नामहिं कै प्रभुताई ।
बिस्नु बिरंचि सिव नामहिं तें अस, केउ न सकै गति गाई ३
चारिहु जुग महँ नामहिं तें अस, अब सो सब्द बताई ।
साधो सत्तनाम है साँचा, मन भजु तजि गफिलाई ॥४॥
नामहिं सब जल थल महँ ब्यापित, दूसर कहिय न जाई ।
जगजीवन सतगुरु के चरन गहि, सत्तनाम लौ लाई ॥५॥

॥ शब्द ४१॥

नहिं भरमावहु बारम्बार ।
बहुत दुख मन समुझि आवत, करत अहौं बिचार ॥१॥
कठिन सागर अहै नौका, कैसे उतरौं पार ।
चरन की मैं रहौं सरनन, तुमहिं खेवनहार ॥२॥
चहहु करहू होय सोई, कैान बरजनहार ।
अहहु बड़े समर्थ साहेब, सर्ब सकल पसार ॥३॥
कर्म भर्म अघ मेटि कै, जन जानिये हितकार ।
जगजीवन निरखाइये, मैं अहौं निरखनहार ॥४॥

॥ शब्द ४२ ॥

तुमहीं सोँ चित लागु है, जीवन कछु नाहीं ।
मात पिता सुत बंधवा, कोउ संग न जाहीं ॥१॥
सिद्धि साध मुनि गंध्रबा, मिलि माटी माहीं ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस्वरा, गनि आवत नाहीं ॥२॥
नर केतानि को बापुरा, केहि लेखे माहीं ।
जगजीवन बिनती करै, रहै तुम्हरी छाँहीं ॥३॥

॥ शब्द ४३ ॥

प्रभु जी कहौं मैं कर जोरि ।
मैं तौ दास तुम्हार आहौं, सुरति दृढ़ करु मोरि ॥१॥
इत उत कतहूँ चलै नाहीं, रहै लागी डोरि ।
पास दासहिं राखु अपने, कौन सकि है तोरि ॥२॥
रह्यो चित्त समोइ सत महँ, भई दाया तोरि ।
रूप सोइ अनूप मूरति, रह्यो नैना हेरि ॥३॥
देखि छबि कहि जात नाहीं, सुरत सत भइ चेरि ।
जगजीवन बिस्वास करि कहु, अगम गति तेहिं फेरि ॥४॥

॥ शब्द ४४ ॥

साँईं तुम ब्रत पालनहारे ।
जे जे आस तुम्हारी राखे, तिनहिं न रहहु बिसारे ॥१॥
बहुतक दुष्ट अहहिं परपंची, डारत अहैं बिगारे ।
बिगरत नाहिं बनाय लेत सो, राखत सदा सँवारे ॥२॥
भाव नाहिं मन महँ लै आवत, बचन कठोर पुकारे ।
बंदा कैसे करै बंदगी, मोह फाँस मैं डारे ॥३॥

जे जे भक्त होत सब आये, तिन्हैं न राखहु न्यारे ।
जगजीवन के इतनी बिनती, सतगुरु सरन तुम्हारे ॥४॥

॥ शब्द ४५ ॥

प्रभु जी जन काँ जानत रहिये ।
जो जस जानै तेहिं तस जानहु, कबहुँ न दूर बहैये ॥१॥
जो कोउ सरन तिहारी आवै, तेहि का ब्रत निरबहिये ।
तेहि काँ सुख आनंद तेँ राखहु, आपहु सुख तब लहिये ॥२॥
नैन निकट है बास तुम्हारो, दूर कहाँ कँह कहिये ।
परगट अहौ ब्यापि रहे जल थल, मिलि रहि ज्ञान तेँ कहिये॥३॥
चरन सीस दै कहौं कर जोरे, सूरति सुरति मिलइये ।
जगजीवन के सतगुरु पूरे, तुम तेँ काह छिपैये ॥४॥

॥ शब्द ४६ ॥

यहँ कोइ काहु क नाहीं, समुझहु मन माहीं रे ॥टेक॥
झूठै जानि परत अहै, यह है परछाहीं रे ।
जबहिं महूरत आइहै, जहँ तहाँ बिलाहीं रे ॥१॥
काया टाटी है सबहिं की, बटोही सब माहीं रे ।
बटोही जहँ तहँ जाहिंगे, सब खाक मिलाहीं रे ॥२॥
मोर तोर जग कहत है, बहु गर्ब गुमाना रे ।
सबै खाक मिलि जाइ हैं, रहै नाम निदाना रे ॥३॥
सब्द पुकारे कहत हौं, सुनि करु परमाना रे ।
जगजीवन सतनाम गहि, चरनन लपटाना रे ॥४॥

॥ शब्द ४७ ॥

साधौ जिन्ह प्रभु सबहिं बनाय ।
मानि ले आकीन मनुवाँ, सत्तनाम लै लाय ॥१॥

चाँद सूरज किये। तारा, गगन लियो बनाय ।
थाम्ह थूनी बिना देखौ, राखि लियो ठहराय ॥२॥
पवन पानी जल थल महँ, रही जोति समाय ।
जानि ऐसे। परत आहै, नाहिँ कहुँ बिलगाय ॥३॥
चौथ तीनिउ कोटि तीरथ, रच्यो दीन्ह जनाय ।
ऐसन साँई बिसारि कै तैँ, नाहिँ भरम भुलाय ॥४॥
गहे। अंतर डोरि दृढ़ ह्वै, कबहुँ ना बिसराय ।
जगजीवन बिस्वास कै गुरु, चरन रहै। लपटाय ॥५॥

॥ शब्द ४८ ॥

अब मन नाहिँ कतहूँ जाय ।
काया भीतर बनो मंदिर, सत्य नाम ले गाय ॥१॥
बद्रीनाथ केदार मथुरा, द्वारिका बनवाय ।
अवध बेनी प्राग उत्तम, गया काँ जब धाय ॥२॥
लेत करवत जाइ कासी, जैसि जेहि रुचि आय ।
अहै अदेख केहु नाहिँ देखा, कवन फल दहुँ* पाय ॥३॥
जगन्नाथ जत नाइ कै जग, बैाध बैठे जाय ।
पास संतन के बिराजहि, नहिँ केहू गति पाय ॥४॥
जोति निर्मल अहै एकै, जहँ तहँ रही छिपाय ।
जगजीवन बिस्वास करि, गुरु चरन रहे लपटाय ॥५॥

॥ शब्द ४९ ॥

जग दै पीठ दृष्टि वहि लाव ।
करि रहु बास पास उनहीं के, अनत न कतहूँ चित्त बहाव ॥१॥

* धौं ।

जैसी प्रीति चकोर कि ससि तैं, पलक न टारत इकटक लाव।
ऐसी रहै रात दिन लागो, दुबिधा कबहूँ ना लै आव ॥२॥
लोक बड़ाई कीरति सोभा, गुन औगुन बिसराव।
सीतल दीन सदा ह्वै रहिये, दुनियाँ धंध बहाव ॥३॥
परपंची पाँचौ नित नाचहिं, इन को है अरुझाव।
छूटत नाहिं पड़े सब फाँसी, करि को सकै उपाव ॥४॥
सतगुरु चरन सरन जे रहिगे, तिन्ह का भयो बचाव।
जगजीवन सो न्यारे जग तैं, सुभ सधि भयो बनाव ॥५॥

॥ शब्द ५० ॥

तुम तैं करै कौन बयान।
रह्यौ सब महँ ब्यापि जल थल, दूसरो नहिं आन ॥१॥
ख्याल हाल अपार लीला, कहा बरनै ज्ञान।
कियो किरपा छिनहिं माँ जेहिं, भयो अंतरध्यान ॥२॥
सेस सम्भू बिस्नु ब्रह्मा, नाम सत्त बखान।
लागि डोरी जोति की वहि, नाहिं कोइ बिलगान ॥३॥
सदा यहि सतसंग बासा, कियो अब पहिचान।
जगजिवन गुरु के चरन परि कै, निरखि तकि निरबान ॥४॥

॥ शब्द ५१ ॥

दुनियाँ रोइ रोइ गोहरावै।
साँईं छाँड़ि दीन्ह तुम रच्छा, जिय माँ दरद न आवै ॥१॥
बेअकीन आहै सब दुनियाँ, बहु अपकर्म कमावै।
तेहि तैं दुखित भई सब दुनियाँ, नीचे नीर बहावै ॥२॥
जानत है घट घट कै बासी, को कहि के गोहरावै।
कपटी कुटिल हीन बहु बिधि तैं, तुम तैं कौन छिपावै ॥३॥

मैं का बिनय करौं गुरु तुम तें, करहु सो तस मन भावै ।
जगजीवन के साँईं समरथ, सीस चरन तर नावै ॥४॥

॥ शब्द ५२ ॥

साँईं निर्मल जोति तुम्हारी ।
आयो दृष्टि जबै जिन्ह देखा, किरपा भई तुम्हारी ॥१॥
तीरथ ब्रत औ दान पुन्न करि, करि कै तपस्या हारी ।
जब करि थक्यौ सक्यौ नहिँ एकौ, नाहिँ मिटी अँधियारी ॥२॥
जेहिँ बिस्वास बढ़ाय दियो जस, सो तस भा अधिकारी ।
तैसे रूप अनूप सँवार्‌यौ, तेइ तस लायौ तारी ॥३॥
जोगी जती सिद्ध साधन घट, जहँ जस तहँ तस वारी ।
जगजीवन सतगुरु साहेब की, सूरति की बलिहारी ॥४॥

॥ शब्द ५३ ॥

साधो एक जोति सब माहीं ।
अपने मन बिचारि करि देखो, और दूसरो नाहीं ॥१॥
एक रुधिर इक काया आहै, बिप्र सूद्र कोउ नाहीं ।
कोउ कहै नर कोऊ कहै नारी, गैबी पूरुष आहीं ॥२॥
कहुँ गुरु ह्वै कै मंत्र सिखावै, कहुँ चेला ह्वै स्रवन सुनाही ।
कतहूँ चेत हेत की बातैं, कतहूँ भ्रमै भुलाही ॥३॥
कहुँ निरबान ध्यान महँ लाग्यो, कतहूँ कर्म कमाही ।
जो जस चहै चलै तेहि मारग, तेहिँ के सतगुरु आहीं ॥४॥
सब्द पुकारि प्रगट ह्वै भाषौं, अंतर राखौं नाहीं ।
जगजीवन जोती वह निर्मल, बिरले तिन की छाहीं ॥५॥

॥ शब्द ५४ ॥

साधो जानि कै होइ अजाना ।
रहै गुप्त अंतर धुनि लाये, तिन हौं तौ कछु जाना ॥१॥
तजि चतुराई कपट रीति मन, दूसर नाहीं जाना ।
एक तें टेक लगाय रहे हैं, दूसर नाहीं आना ॥२॥
मान गुमान दूरि करि डार्‌यो, दिनताई हिये आना ।
सब्द कुसब्द केतौ कोउ बोलै, सब कै करि सनमाना ॥३॥
हारि रहै जीतै नहिं केहु तें, भयो सिद्ध निमाना ।
जगजीवन सतगुरु की किरपा, चरन कमल धरि ध्याना ॥४॥

॥ शब्द ५५ ॥

ऐसे साँई की मैं बलिहरियाँ री ।
ए सखि संग रंग रस मातिउँ, देखि रहिउँ अनुहरियाँ री ॥१॥
गगन भवन माँ मगन भइउँ मैं, बिनु दीपक उजियरियाँ री ।
झलकि चमकि तहँ रूप बिराजै, मिटिगै सकल अँधेरियाँ री ॥२॥
काह कहौं कहिबे की नाहीं, लागि जाहि मन महियाँ री ।
जगजीवन वह जोती निरमल, मोती हीरा वारियाँ री ॥३॥

॥ शब्द ५६ ॥

हम कहँ दुनियाँ कहि समुझावै ।
जानि बूझि कै करै सयानी*, तेहि तें पार न पावै ॥ १ ॥
सीतल ह्वै कै नवै आइ कै, बहु बिधि भाव सुनावै ।
निंदा करै फेरि बहु बिधि तें, राम कानि नहिं आवै ॥ २ ॥
कोउ कहै भिच्छुक कोउ कहै भगली, अपकीरति गोहरावै ।
देखत राम सुनत है कानन, ताकि तेहिं तस पहुँचावै ॥ ३ ॥

---

*चालाकी ।

कहत अहै सब्द यह साँचा, करै जाय तस पावै ।
जगजीवन के साँईं समरथ, सीस चरन तर नावै ॥ ४ ॥

॥ शब्द ५७ ॥

नाम बिना गे जन्म गँवाय ।
भजबँ होय भजहु नर प्रानी, कहत सब्द गोहराय ॥ १ ॥
रावन कौरौ कंस औ कच्छप, तेऊ गये बिलाय ।
गर्ब गुमान किहिनि दुइ दिन का, अंत चले पछिताय ॥ २ ॥
अंध धुंध मा बाप रुवै* रे, बहुरि नहीं अस अवसर पाय ।
जगजीवन यह भक्ति अचल है, जुग जुग संतन कीरति गाय ३

॥ शब्द ५८ ॥

बूसी† राजा बूसी राव, बूसी का है सबै बनाव ॥ १ ॥
बूसी राजा राज करावै, बूसी दर दर भीख मँगावै ।
बूसी तेनी भये अमीर बिन बूसी के भये फकीर ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

बादसाह बूसीहिं तेँ, बूसिहिं सब संसार ।
जगजीवन बूसी नहीं, जिनके नाम अधार ॥ ३ ॥
बूसी राजा बूसी परजा, बूसी क अहै पसार ।
जगजीवन के बूसी नाहीं, केवल नाम अधार ॥ ४ ॥

॥ शब्द ५९ ॥

साँईं अब मैं काह कहौं ।
जानत तुमहिं जनावत तुमहीं, राखहु तैसे रहौं ॥ १ ॥

---

*रोवै । †भूसी या तुस ।

जल थल जीव जंतु नर नारी, मारग चलै जो चहै ।
पूजत कहूँ पुजावत काहूँ, सुमन कहूँ अभाव कहैं* ॥२॥
कहुँ दुख दारिद दरद निर्दया, सुख धन धाम लहै ।
काहूँ कुमति सुमति जड़ मूरुख, काहूँ ज्ञान गहै ॥३॥
काहूँ पंडित खंडित कबित्त, बहु बातैं चुप्प अहै ।
काहूँ दुष्ट कुटिल कूकरमी, कहुँ सुभ है निबहै ॥४॥
कहुँ दाता कहुँ कृपिन कीट सम, कहुँ थिर जात बहै ।
अस नाचत सब नाच नचावत, जहँ जस तैसे अहै ॥५॥
कहैं कर जोरि मोरि यह सुनिये, चरन कि सरनहिं रहैं ।
जगजीवन गति अगम तुम्हारी, दासन दास अहैं ॥६॥

॥ शब्द ६० ॥

साधो देखत नैनन साँई ।
अस कोउ अपने मनहिं न बूझै, पैसो कौनिउ नाहीं† ॥१॥
सुनत स्रवन पपील‡ की बानी, तिन तें का गोहराई ।
अस मन मुगुध अहै मद माता, करत अहै चतुराई ॥२॥
धरती गगन भानु ससि तारा, छिन महँ लियो बनाई ।
निर्मल जोति बहुत बिस्तारा, जहाँ तहाँ छिटकाई ॥३॥
पवन में पवन पानि महँ पानी, दूजा रंग बनाई ।
अगिन में अगिन बास महँ बासा, अस मिल ना बहराई ॥४॥
भा जहँ जैसे करी बंदगी, जोति मैं जोति मिलाई ।
जगजीवन ऐसे सतगुरु के, चरनन की बलि जाई ॥५॥

*कहीं अच्छा भाव और कहीं बुरा भाव । †ऐसा कोई न समझै कि कोई मालिक मौजूद नहीं है । ‡चींटी ।

॥ शब्द ६१ ॥

साधो को कहि काहि सुनावै।
आपुहिँ कहत सुनत है आपुहिँ, सब घट नाच नचावै ॥१॥
ज्ञानी आपु आपु है ध्यानी, आपुहिँ मंत्र सिखावै।
आपुहिँ परगट सबहिँ दिखावत, आपुहिँ गुप्त छपावै ॥२॥
देखत निरखत परखत आपुहिँ, निरमल जोति कहावै।
जेहि काँ चहै खैँच लै राखै, काहुइँ दूरि बहावै ॥३॥
जोगी आपु आपु रस-भोगी, आपुहिँ भोग लगावै।
आपु लच्छमी परसत आपुहिँ, आपुहिँ आपु सो पावै ॥४॥
लिप्त नाहिँ आलिप्त रहत है, ज्यौँ रबि जोति समावै।
जगजिवनदास भक्त है आपुहिँ, कहै सो जस मन भावै ॥५॥

॥ शब्द ६२ ॥

साधो अब मैँ ज्ञान बिचारा।
निरगुन निराकार निरबानी, तिन्ह का सकल पसारा ॥१॥
काया धरि धरि नाचत आहै, बझे करम के जारा।
बिनु सत डोरी जोग नहिँ छूटै, कैसे होवै न्यारा ॥२॥
कृपा कीन्ह जेहिँ सुद्धि सम्हार्‌यो, उलटि कै दृष्टि निहारा।
सब संसार चित्त तेँ बिसरै, पहुँचे सो दरबारा ॥३॥
निरगुन अहि गुन धर्‌यो आइ कै, राम भयो संसारा।
जगजीवन गहि नाम उतरि गे, सतगुरु चरन अधारा ॥४॥

॥ शब्द ६३ ॥

दीनता सम और कछु नाहीँ, तजि दे गर्ब गुमान।
रहो दीन अधीन है कै, सो सब के मन मान ॥१॥

दीन तें कंचन कोटि भयो है, कहे देत हैाँ ज्ञान ।
गर्ब गुमान कीन जब रावन, मारि कियो घमसान ॥२॥
बिभीखन जब दीन भयो है, ताहि कियो परधान ।
दीन समान और कछु नाहीं, गावत बेद पुरान ॥३॥
रहे अधीन नामहीं गहि कै, पंडो भे बलवान ।
कौरौ दीन तें प्रभुता पायो, गर्ब तें खाक समान ॥४॥
दीन तें कंस महा बल भयऊ, तबहिं गर्ब मन आन ।
केस पकरि कै तिन काँ मार्‌यो, सो सब के मन मान ॥५॥
हिरनाकच्छप दीन भयो जब, दीन्ह्यो सब बरदान ।
जब अहंकार कीन भक्तन तें, मार्‌यो कृपा-निधान ॥६॥
होहु दीन हंकार करै जो, सो अंतर पछितान ।
राजा रंक छत्रपति दुनियाँ, गनौं कौन केतान ॥७॥
दौलत धाम औ माया पायो, बार बार चित तें बिलगान ।
जगजिवनदास नाम भजु अंतर, चरन कमल धरि ध्यान ॥८॥

॥ शब्द ६४ ॥

साधो रटत रटत रट लाई ।
अमृत नाम रहो रस चाखत, हिय माँ ज्ञान समाई ॥१॥
मधुर मधुर चढ़ि चल ऊँचे काँ, फिर नीचे काँ आई ।
फिर ऊँचे चढ़ि थिर ठहराना, पास बास भे जाई ॥२॥
छूट्यो नाम मुकाम भयो दृढ़, निर्गुन जोति तहँ छाई ।
जगजीवन परगास उदित है, कछु गति कही न जाई ॥३॥

॥ शब्द ६५ ॥

साधो जग की कौन बिचारै ।
उत्तम होय रती भरि काहू, सो कहि बहुत पुकारै ॥१॥

तो मध्यम करतब्य कर्म करि, सो मनहीं में बिचारै ।
परगट कहे असोभा मानै, रामहिं कहि कै अभारै* ॥२॥
करत है राम जबून भला, हम अपुरा कौन सँवारै ।
अस नर नारी देखि परत हैं, सुमति हिये तें डारै ॥३॥
जो उपदेस बेद पढ़ि देवै, समुझाये नहिं हारै ।
सुमति न आनै नाम न जानै, मैं ममता नहिं मारै ॥४॥
बेधत नहिं अनबेधा सब है, सुनि सूरति न सम्हारै ।
जगजीवन साधू अस जग महँ, दरसन नैन निहारै ॥५॥

॥ शब्द ६६ ॥

साधो जग की कहौं बखानी ।
जेहि तें जाइ होइ कहैं तेहि तें, कहहिं लाभ काँ हानी ॥१॥
खल† तें प्रीत महा हित मानहिं, संत देखि अभिमानी ।
कुटिल कि अस्तुति बहुते बिधि तें, भक्त कि निंदा टानी २।
भक्तन कहैं कि महा अबल हैं, हम हैं बहु बलवानी ।
दाता जिन्हैं अदत्त‡ कहैं तेहिं, हम तें कोऊ न दानी ॥३॥
जानत ग्रहैं कुकर्म करत हैं, गे ज्यों धूर उड़ानी ।
जगजीवन मन चरन कमल मह, निरखत निर्मल बानी ॥४॥

॥ शब्द ६७ ॥

जो पै भक्ति कीन्ह जो चहै ।
अजपा जपत रहै निसु बासर, भेद प्रगट नहिं कहै ॥१॥
जगत भाव सुभाव देखि चालि, गुप्तहिं अंतर रहै ।
ऐसी प्रीति रीति मन लावै, सुख आनँद तब लहै ॥२॥

*हलका होय अर्थात संतोष करै । †दुष्ट । ‡सूम ।

बहु अचार नहिँ करै डिंभ कछु, सहजै रहनी रहै ।
मुसलमान जे भये औलिया, लाइ भोग कब रहै ॥३॥
अंतर माँ अंतर कछु नाहीँ, लाइ भाेग सो रहै ।
बंदा खात खात सो साँईं, दूसरि गति को कहै ॥४॥
देत अहौँ उपदेस कहे मैँ, जो वहि नामहिँ चहै ।
जगजीवन वै साहब ह्वैगे, सदा मस्त जो रहै ॥५॥

॥ शब्द ६८ ॥

मोहिँ न जानि परत गति तोरी, केतिक मति साँईं है मोरी
महा अपरबल माया तोरी, अब दृढ़ करिये सूरति मोरी
करहु कृपा तुम दास कै जानी, हित करि लै भव बंधन छोरी
चरनन लागि रहै चित मोरा, जानि दास प्रभु मोहिँ तन हेरा
जगजीवन अरदास* सुनावै, छबि देखत रहुँ कबहुँ न तोरी†

॥ शब्द ६९ ॥

अब मैँ कहौँ का गति तोरि ।
चहौ सो करहु होइ पै सोई, है केतान मति मोरि ॥१॥
चाँद सुरजगन गगन तीनि महँ, सब नाचत एक डोरि ।
एत‡ बिस्तार पसार अंत नहिँ, लाइ एक तैँ जोरि ॥२॥
काहूँ कुमति सुमति परमारथ, कहुँ बिष अमृत घोरि ।
कहुँ ह्वै साह सूम ह्वै बैठत, कहूँ करत है चोरि ॥३॥
कहुँ तप तीरथ बरत जोग करि, कहुँ बंधन कहुँ छोरि ।
कहूँ पराक§ कहै कछु नाहीँ, कहूँ कहै मोरि मोरि ॥४॥
छूछे भरे अहौ सब तुमहीँ, देइ कौन को खोरि ।
जगजीवन काँ सरनै राखहु, चरन न टूटै डोरि ॥५॥

---

*अरजी । †न टूटै । ‡इतना । §बैराग ।

॥ शब्द ७० ॥

कलि महँ कठिन बिबादो भाई ।
कानि संत की मानत नाहीं, मन आवै तस गाई ॥१॥
सुधि नाहीं कछु आगिल पाछिल, औरहिं कहै चेताई ।
भ्रमत फिरहि दुनियाँ के धंधे, जोरि गाँठि बकताई ॥२॥
देखि सिखहि सो करहि जाइ कै, नाम तें प्रीति न लाई ।
ऐसी रीति भाव करि भूले, परे नरक महँ जाई ॥३॥
कहुं विद्या पढ़ि सब्द साखी, जहाँ तहाँ गोहराई ।
दाम काम रस बस निसु बासर, रचि बहु भेष बनाई ॥४॥
करि कै स्वाँग पुजावहिं सब तें, नहि बिबेक करि जाई।
बिज्ञानी ज्ञानी कबिता भे, नाम दीन्ह बिसराई ॥५॥
परिहैं महा मोह की फाँसी, छोरि तोरि नहिं जाई ।
ज्यों बंसी गहि मीन लीन भे, मारि काल लै खाई ॥६॥
सहजहिं अजपा जपै निरंतर, भेद न कहै सुनाई ।
जगजीवन गुरुमुख सत सन्मुख, चरन गहौ लिपटाई ॥७॥

॥ शब्द ७१ ॥

बरनि न आवै मोहिं, राम नाम पर वारी ।
सेस सारदा संकर बरनत, कैतिक बुद्धि हमारी ॥१॥
सुनियत बेद गिरंथ पुकारत, जिन मति जान बिचारी ।
निरगुन निरबान रहत हौ न्यारे, माया जगत पसारी ॥२॥
तीनि लोक महँ छाय रही है, को करि सकै बिचारी ।
दियो जनाइ जाहि काँ जैसे, तेइ तस डोरि संभारी ॥३॥
बैठि जाय चौगान चौक महँ, दृढ़ ह्वै आसन मारी ।
जगजीवन सतगुरु दाया त, निरखि परखि नीहारी ॥४॥

॥ शब्द ७२ ॥

साँईं अजब तुम्हारी माया ॥टेक॥
सुर नर मुनि सब थकित भये हैं, काहू अंत न पाया ॥१॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस सेस सब, सती सारदा गाया ॥२॥
सब परवास* निरंतर खेलहिँ, जहँ जस तहाँ समाया ॥३॥
पानी नीर पहिरि सो जामा, तहँ का नाम धराया ॥४॥
रवि अस्थूल अहै निरबानी, किरिन सो जोति बढ़ाया ॥५॥
जगजीवन जस जानि परा है, उलटि कै ध्यान लगाया ॥६॥

॥ शब्द ७३ ॥

प्रभु मैं का प्रतीत लै आवौं ।
जो उपदेस दियो मोरे मन काँ, सोई मंत्र मैं गावौं ॥१॥
विद्या मोहिँ पढ़ाय सिखायो, सो पढ़ि जगहिँ सुनावौं ।
जग भावै सो करहि जाइ कै, मैं मन अनत न धावौं ॥२॥
कासी प्राग द्वारिका मथुरा, कहँ कहँ चित दौरावौं ।
जगन्नाथ मैं जानौं एकै, सो अंतर लै लावौं ॥३॥
तीनिउ चारिउ लोक पसारा, अनत कहाँ ठहरावौं ।
जगजीवन अंतर महँ साँईं, चरन नाहिँ बिसरावौं ॥४॥

॥ शब्द ७४ ॥

प्रभु को हृदय खोज करु भाई ।
भटका भटका काह फिरतु है, फिरि फिरि भटका खाई ॥१॥
दुनियाँ भटकी काह फिरतु है, भेद दीन्ह बतलाई ।
घटही में है गंग द्वारिका, घटहीं देखु समाई ॥२॥

---

* परदेसी ।

तन करु मेटुकी मन की मथानी, यहि बिधि मही* मथाई।
सत्त नाम सुधा बरतावहु, घिरत लेहु बहिराई ॥३॥
घिरत सत्त नाम की बासा, एहि बिधि जुक्ति बताई।
जगजीवन मत इहै कहत है, सहज नाम मिलि जाई ॥४॥

॥ शब्द ७५ ॥

साधो कौन कथै का ज्ञान।
जेहि का वारा पार नहीं है, को करि सकै बखान ॥१॥
चाँद सुरज गन पवनहिं पानी, धरती किये। असमान।
लियो बनाय पल माँ वो साँई, केहु घट नहिं बिलगान ॥२॥
सेस सहस जिभ्या मन सुमिरत, संकर लाये ध्यान।
ब्रह्मा बिस्नु बसत मन तेहि माँ, सो निरगुन निर्बान ॥३॥
माया का बिस्तार अहै सब, बूझै कौन हेवान।
देखत खेलत नाचत अपुहिं, आपुहिं करत बखान ॥४॥
मैं अजान केतान काहि माँ, जनवाये तैं जान।
जगजीवन सत नाम गहे मन, गुरु चरनन लपटान ॥५॥

॥ शब्द ७६ ॥

सत्तनाम भजि गुप्तहिं रहै। भेद न आपन परगट कहै ॥१॥
परगट कहे सुखित नहिं होई। सत मत ज्ञान जाल सब खोई२
गर्ब गुमान त्यागि ममताई। ह्वै सीतल करि रहि दिनताई ॥३॥
पाँच पचीस एक अरुझाई। ताहि मिलत कछु बिलँब न लाई ४
जगजीवन अस कहि गोहराई। गुप्त कि बात करि प्रगट बताई५

॥ शब्द ७७ ॥

यह मन चरन वारि डारी।
रह्यो लगाय आय सरनागति, इत उत सबै बिसारी ॥१॥

---

*मट्ठा।

रह्यो अचेत सुद्धि नहिँ आई, टूटै डोरि सँभारौ ।
डोरी पोढ़ि बिलग ना होई, तहँ सत मूरि बिचारौ ॥२॥
रहि ठहराय किये दृढ़ आसन, निरखि कै रूप निहारौ ।
जगजीवन के समरथ साहेब, तुमहीं पार उतारौ ॥३॥

॥ शब्द ७८ ॥

साँईं सूरति अजब तुम्हारी ।
जेहिँ जस लागि तेई तस जानी, तिन तस गहा बिचारी ॥१॥
सो तस देखि मस्त मन ह्वैगा, कहि नहिँ जात पुकारी ।
दियो सिखै सत मंत्र मते महँ, बिसरत नहिँ अनुहारी ॥२॥
गन ससि भानु रूप तेहिँ वारौं, ते नहिँ चरन बिसारी ।
ब्रह्मा सेस बिस्नु मन सुमिरत, संकर लाये तारी ॥३॥
जाहि भक्त पर किरपा कीन्ह्यो, कर लीन्ह्यो जग न्यारी ।
जगजीवन माया है परबल, भवजल पार उतारी ॥४॥

॥ शब्द ७९ ॥

प्रभु जी नाहिँ कछु कहि जाइ ।
जहँ तहाँ परपंच बहूतै, नाहिँ कोइ सकुचाइ ॥१॥
धर्म दाया त्यागि दीन्ह्यो करहि बहु कुटिलाइ ।
चेत नहिँ कोउ करत मन तेँ, गयो सब गफिलाइ ॥२॥
जहाँ तहाँ बिबाद ठानहिँ, भिड़हिँ बृष की नाँइ* ।
कहा कछु दिन सुःख भुगुतैं, अंतहूँ दुख पाइ ॥३॥
जहाँ सुमिरन करत कोई, बैठि तहवाँ आइ ।
देत ध्यान बिगारि छिन महँ, अवरि बात चलाइ ॥४॥

*साँड़ की तरह लड़ते हैं ।

देखि सुनि मोहिँ परत ऐसे, कलि कि प्रभुता आइ ।
करै जो जस जाइ भुगुतै, कोइ न कहुँ गति पाइ ॥५॥
पार उतरहि उबरि बिरला, सुमति जेहिँ मन आइ ।
जगजीवन बिस्वास करि रहु, सुरति चरनन लाइ ॥६॥

॥ शब्द ८० ॥

राम नाम बिना कहौ कैसे को तरिहै ॥ टेक ॥
कठिन भरम सागर परि, जग्त का उबरिहै ।
आवत है मोहिँ अँदेस, कठिन है बिदेस, काह करिहै ॥१॥
लागहिँ नहिँ कोउ साथ, आइहि नाहिँ कोउ काम,
जम की फाँसि परिहै ।
खाइ लेहै जमदूत कोऊ, खोज काहु नाहिँ पैहै ॥२॥
सत सुकिर्त नाम भजु, संकट बिकट तेँ बाचिहै ।
जगजिवन प्रकास जोति, निर्मल गुरु चरन सरन रहिहै ॥४॥

॥ शब्द ८१ ॥

साधो भजहु नाम मन लाई ।
दुइ अच्छर रसना रट लावहु, कबहूँ मन तेँ नहिँ बिसराई ॥१॥
मन मैँ फूलि भूलि धन माया, अंत चले पछिताई ।
काया कोट अंतर रहु थिर ह्वै, बाहर चित्त कबहुँ नहिँ जाई ॥२॥
यहि रहि जुक्ति जक्त करि बासा, सर्ब बिकार दूर ह्वै जाई ।
जगजीवन जो चरन गहा जिन, ताहिँ काल तेँ लेहिँ बचाई ॥१॥

॥ शब्द ८२ ॥

जग की रीति कही नहिँ जाई ॥ टेक ॥
मिलहिँ भाव करि कै अधीन ह्वै, पाछे करि कुटिलाई ।
माला कंठी पहिरि सुमिरनी, दीन्ह्यो तिलक बनाई ॥१॥

करहिं बिबाद बहुत हठ करि कै, परहिं भरम माँ जाई।
कहहिं कि भक्त सिद्ध हैं निपटिन्ह,* बहु बकबाद बढ़ाई ॥२॥
अंतर नाम भजन तेहिं नाहीं, जहँ तहँ पूजा लाई।
जगजिवनदास गुप्त मति सुमिरहु, प्रगट न देहु जनाई ॥३॥

॥ शब्द ८३ ॥

नाम मंत्र तत्त सार लीजै भजि सोई ॥ टेक ॥
करि कै परतीत नित्त बिलग नाहिं होई।
डोरि पोढ़ि लागि रहै तूरै† नहिं कोई ॥१॥
लियो बिचारि बेद चारि मथि कै मन सोई।
पोथी औ पुरान ज्ञान कहत बेद जोई ॥२॥
होवै निर्बान कर्म भर्म मैल धोई।
अजपा जप लागि रहै निरमल तब होई ॥३॥
ऐसी जुक्ति जक्त रहै दुबिधा कहँ खोई।
जगजीवन भेंटु गुरू सन्त, बिलग नाहिं होई ॥४॥

॥ शब्द ८४ ॥

साधो जग बिरथा बातैं करही।
साध तें मिलहिं कपट मन कीन्हे, बातैं औरै करहीं ॥१॥
पकरैं पाँव भाव करि बहु बिधि, पाछे निंदा करहीं।
भयो पाप कर्म कहँ प्रापति, घोर नरक माँ परहीं ॥२॥
साँचा नाम कहहि ते झूँठा, भरम भुलाने फिरहीं।
अस हम परखि नैन तें देखा, सुभ कारज नहिं सरहीं ॥३॥
इत उत की बातैं कहि भाखहिं, सुधि नाहीं घट धरहीं।
जगजीवन रहु चरन ध्यान धरि, जिहिं हित सो तस बहहीं ॥४

---

* निर्बन्ध होगये। † तोड़ै।

॥ शब्द ८५ ॥

डोरि पोढ़ि लाय चित्त अंतै नहिँ जाई ।
पाँच औ पचीस साथ, देत हैँ भ्रमाई ॥१॥
ऐसी जुक्ति करहु एक, एक हीं चलाई ।
मन मतंग मारि दे तैँ, तोरि दे मिताई ॥२॥
नीच होहु नीच जानि, ऊँचेहु चढ़ि धाई ।
सब कहँ लै बाँधि डारु, दुनियाँ बिसराई ॥३॥
सतगुरु सरूप रूप, निरखहु निरधाई ।
जगजीवन पास बास, थिर रहु ठहराई ॥४॥

॥ शब्द ८६ ॥

चरनन पै मैँ वारी तुम्हारी ।
भ्रमत फिरयौँ कछु जानत नाहीँ, ज्ञान तेँ कछु न बिचारी ॥१॥
जो मैँ कहौँ कहा बसि मोरी, आहै हाथ तुम्हारी ।
सुन्यौँ गरंथ संत कहि भाष्यो, अनगन लीन्ह्यो तारी ॥२॥
सुनि प्रतीत होत मन मोरे, जब भै कृपा तुम्हारी ।
जगजीवन कि अरज सुनि लीजै, तुम सब लेहु सँवारी ॥३॥

॥ शब्द ८७ ॥

तुम सोँ यह मन लागा मोरा ।
करौँ अरदास इतनी सुनि लीजै, नर्को नरक मोहिँ कोरा ॥१॥
कहँ लगि औगुन कहौँ आपना, कामी कुटिल औ
लोभी चोरा ।
तब के अब के बहु गुनाह भे, नाहिँ अंत कछु छोरा ॥२॥
साँईँ अब गुनाह सब मेटहु, चितै आपनी ओरा ।
जगजीवन कै इतनी बिनती, टूटै प्रीति न डोरा ॥३॥

॥ शब्द ८८ ॥

जा पर भयो राम दयाल ।
दरस दे कर्म मेटि डास्यौ, तुरत कीन्ह निहाल ॥१॥
निर्बान केवल भयो अम्मर, गयो काटि भ्रम जाल ।
दुख दूरि दुबिधा सुःख दै, जन जानि करि प्रतिपाल ॥२॥
भक्त काँ जब कष्ट ब्याप्यो, धाइ आयो हाल ।
दुष्ट केर बिनास कीन्ह्यो, त्रास मानी काल ॥३॥
ऐस आपन दास जानत, मातु के ज्यौं बाल ।
जगजीवन गुरु रूप अमृत, नयन पियहु रसाल ॥४॥

॥ शब्द ८९ ॥

साँईं अब सुन लीजै मोरी ।
तुम जानत घट के सब की भति, तुम तेँ करौं न चोरी ॥१॥
प्रीति लगाय राखिये निसु दिन, कबहुँ न तोरहु डोरी ।
मोहिँ अनाथ के नाथ अहै। तुम, किरपा करि कै हेरी ॥२॥
करि दुख दूरि देहु सुख जन कहँ, केतिक बात है थोरी ।
जब जब धाय दास पहँ आयो, जब सुनाय कै टेरी ॥३॥
जन काजे जग आय देँह धरि, मास्यो दैत घनेरी ।
करि सुखि पलहिँ एक छिन माहीँ, राम दोहाई फेरी ॥४॥
कहौं काह कहिबे की नाहीँ, सीस चरन तर मेरी ।
जगजीवन के साँईं समरथ, अब किरपा करि हेरी ॥५॥

॥ शब्द ९० ॥

आनँद के सिंध मेँ आन बसे, तिन को न रह्यो तन
को तपनो
जब आपु मेँ आपु समाय गये, तब आपु मेँ आपु
लह्यो अपनो

जब आपु में आपु लह्यो अपुनो, तब अपनो ही जाप
रह्यो जपनो
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो, जगजीवन होय
रह्यो सपनो ॥

॥ शब्द ९१ ॥

साहेब मोहिं गुन एकौ नाहीं ।
औगुन बहुत महा अघ लादे, तातें सूझत नाहीं ॥१॥
काया कोटि नर्क की आहै, बसत अहौं तेहि माहीं ।
तस्कर* संग भंग मति मोरी, रहत अहौं तेहि माहीं ॥२॥
झगरा करत रात दिन छिन छिन, कहत हैं रहु हम माहीं ।
मैं तो चहौं रहौं चरनहिं सँग, एइ राखत हैं नाहीं ॥३॥
करु दाया तब होहि छिमा एह, सीतल रहौं छबि छाहीं ।
जगजीवन की बिनती इतनी, आदि अंत के तुम्हरे आहीं ॥४॥

॥ शब्द ९२ ॥

सतगुरु मैं तो तुम्हार कहावौं ।
तुम काँ जानौं तुम काँ मानौं, अवर न मन लै आवौं ॥१॥
धन औ धाम काम तुमहीं तें, तुम काँ सीस नवावौं ।
तुमहीं तें निर्बाह हमारा, तुमहीं तें सुख पावौं ॥२॥
जब बिसरावहु तब मोहिं बिसरत, चहो तो सरनहिं आवौं ।
दाया करत जानि जन आपन, तब मैं ध्यान लगावौं ॥३॥
हाथ सर्बसौ अहै तुम्हारे, केतक भाँति मैं गावौं ।
जगजीवन काँ आस तुम्हारी, नैन दरस नित पावौं ॥४॥

*चोर ।

॥ शब्द ९३ ॥

अब मैं तुम सों सुरति लगाई ।
औगुन क्रम भ्रम मेटि हमारे, राखि लेहु सरनाई ॥१॥
हौं अज्ञान अजान केति बुधि, सकौं नाहिं गति गाई ।
ब्रह्मा सेस महेस थकित भे, भेद न तिनहूँ पाई ॥२॥
सब बिस्तार पसार तुम्हारा, राख्यो है अरुझाई ।
केहु समुझाय बुझाय बतायो, काहुहि दियो बहाई ॥३॥
तुम दाता औ मुक्ता आहहु, तुम कहँ सीस चढ़ाई ।
जगजीवन को इतनी सुनिये, कबहुँ नाहिं बिसराई ।४॥

॥ शब्द ९४ ॥

तुम्हरी गति कछु जानि न पायो ।
जेइ जस बूझा तेइ तस सूझा, ते तैसइ गुन गायो ॥१॥
करौं ढिठाई कहौं बिनय करि, मोहिं जस राह बतायो ।
जस मैं गहा लहा लै लागी, चरन सरन तब पायो ॥२॥
भटकत रहेउँ अनेक जनम लहि, वह सुधि सो बिसरायो ।
दाया कीन्ह दास करि जानेहु, बड़े भाग तें आयो ॥३॥
दियो बताइ दिखाइ आपु कहँ, चरनन सीस नवायो ।
जगजीवन कहँ आपन जानेहु, अघ कर्म भर्म मिटायो ॥३॥

॥ शब्द ९५ ॥

अब सुनि लीजै बिनय हमारी ।
तुम प्रभु अहहु प्रान तें प्यारे, और न कोउ अधिकारी ॥१॥
केतेउ तारेहु केते उबारेहु, हम केतानि बिचारी ।
तनिक कोर ओर हम देखहु, होहूँ तुरत सुखारी ॥२॥
सेस सहस-फनि मन सुमिरत हैं, सिव सत सुरति सुधारी ।
सनक सनंदन करहिं बंदना, गावहिं बेदो चारी ॥३॥

जल थल पवन भानु ससि गन महँ, काहु तेँ जोति न न्यारी ।
जगजीवन एह चरन कमल तेँ, सूरति कबहुँ न टारी ॥४॥

॥ शब्द ९६ ॥

साँईं अब सुनि लीजे मोरी ।
दाया करहु दास करि जानहु, करहु प्रीति दृढ़ डोरी ॥१॥
तुम्हरे हाथ नाथ सबही की, जानत सो मति मोरी ।
जेहि करि चहहु नचावहु तेहि करि, नाहिँ केहु की बरजोरी ॥२॥
ठग बटमार साह हौ तुमहीं, तुमहिँ करावत चोरी ।
दाता दान पुन्न हौ तुमहीं, विद्या ज्ञान घनोरी ॥३॥
सब महँ नाचत सबहिँ नचावत, करौ कुसब्द निबेरी ।
जगजीवन काँ किरपा करहू, निरखत रहौं छबि तेरी ॥४॥

॥ शब्द ९७ ॥

साँईं तेरा करै कौन बखान ॥ टेक ॥
ज्ञान भेदं बेद तुमहीं, और कवन केतान ।
बिस्नु तुव दरबार ठाढ़े, अज्ञा मन परमान ॥१॥
चहत आहौ होत सोई, अवर होत न आन ।
सेस सुमिरहि सहस मुख तेँ, धरे संकर ध्यान ॥२॥
कर्म गति जो लिखि बिधाते, तिनहुँ नहिँ गति जान ।
जगजिवन रबि ससि नेग* वारौँ, नाहिँ छबिहिँ समान॥३॥

॥ शब्द ९८ ॥

साधो जेहिँ आपन कै लीन्हा ।
औगुन कर्म मिटायो छिन महँ, भक्ति भेद तेहिँ दीन्हा ॥१॥

*अनेक ।

भजत सोई बिसरावत नाहीं, रहत चरन तें लीना ।
आहै अलख लख्यो तब आयो, निर्गुन मूरति चीन्हा ॥२॥
बैठि रहा मन भा सुखबासी, अनत पयान न कीन्हा ।
अम्मर भयो मरहि ते नाहीं, गुप्त मंत्र मत लीन्हा ॥३॥
सतगुरु मूरति निरखि निहारहि, जैसे जलहित मीना ।
जगजीवन चकोर ससि देखत, पाय भाग तें लीन्हा ॥४॥

॥ शब्द ९९ ॥

साँईं बिनती सुनु मोरी । चरनन तें छुटै न डोरी ॥१॥
मैं अहौं चरन को दासा । मोहिं राखहु अपने पासा ॥२॥
मैं आहौं दासन दासा । मोहिं सदा तुम्हारी आसा ॥३॥
किरपा जब भई तुम्हारी । तब आपनि सुरति सँभारी ॥४॥
तुम तजि अवर न जानौं । किरपा तें नाम बखानौं ॥५॥
तब मैं कह्यौं पुकारी । किरपा जब भई तुम्हारी ॥६॥
सब तीरथ तुमहीं कीन्हा । हम साहेब तुम कहँ चीन्हा ॥७॥
रहौं सोवत जागत लागी । सो देहु इहै बर माँगी ॥८॥
मन अनत कतहुँ नहिं धावै । चरनन तें सदा लव लावै ॥९॥
जगजिवन चरन लपटाना । तुम मोहिं सिखायो ज्ञाना ॥१०॥

॥ शब्द १०० ॥

मन तुम भजौ रामै राम ।
तार दीन्हो बहुत पतितन, उत्तम अस नाम ॥१॥
गह्यो जिन परतीत करिके, भयो तिन को काम ।
मिटे दुख संताप तिन के, भयो सुख आराम ॥२॥
देखि सुख पर भूल ना तैं, दौलत धन धाम ।
अहै सब यह झूठ आसा, नाहिं आवे काम ॥३॥

चढ़ौ ऊँचे नीच होइ के, गगन है भल ग्राम ।
जगजिवनदास निहार मूरति, चरन कर बिस्राम ॥४॥

दोहा

राम राम रट लागि जेहि, आय मिले तेहि राम ।
जगजीवन तिन जनन के, सफल भये सब काम ॥

शिष्यों के नाम पत्र ।

(१)

साधो सीतल यह मन करहु । अंतर भीतर साधे रहहु ॥१॥
जुक्ति इहै दुइ अच्छर करहु । सतगुरु भेँट कीन्ह जो चहहु ॥२॥
क्रोध तमा* यह देहु बिसारि । राखहु अंतर डोरि सँभारि ॥३॥
तमा तुनुका† तेँ जोति बुझाय । कैसेहु भट होय नहिँ जाय ॥४॥
नैन नीर बाहर नहिँ आवै । बाहर आवै तो दरस न पावै ॥५॥
सदा सुचित्त चित्त यह रहई । अंतर बाहर कबहुँ न बहई ॥६॥
देबीदास देउँ उपदेस । त्यागहु मन तेँ सबै अँदेस ॥७॥
जगजीवन धरि अंतर ध्यान । सीतल रहि कर भाषौ ज्ञान ॥८॥

(२)

भक्त देबीदास । मन राखहु चरन की आस ॥१॥
वै करहिँ सब औसान । तुम करत रहु दृढ़ ध्यान ॥२॥
मन नाहिँ ब्याकुल होहु । करि रहहु चरन सनेहु ॥३॥

*लोभ । † जल्द भड़क उठना ।

(३)

भक्त दूलमदास । रहु सदा नाम की आस ॥१॥
मन रहहु अंतर लाय । सत सब्द कहौं सुनाय ॥२॥
गगन करु मंडान । जहँ आहिं ससि गन भान ॥३॥
तहँ अलख लखि पहिचान । सतगुरू छवि निरबान ॥४॥
जगजिवन कहै बिचारि । गहि रहहु नाम सँभारि ॥५॥

(४)

भक्त देवीदास । मन सदा चरन की आस ॥१॥
मन ज्ञान ध्यान अनंद । कटि जाहिंगे भ्रम फंद ॥२॥
सदा सुख बिसराम । चित भजत रहिये नाम ॥३॥
जगजीवन कहत है सोय । चित रहै चरन समोय ॥४॥

॥ दोहा ॥

सदा सहाई दास पर, मनहिं बिसारै नाहिं ।
जगजीवन साँची कहै, कबहूँ न्यारे नाहिं ॥५॥

(५)

भक्त देवीदास । मन नाम करि बिस्वास ॥१॥
मन करै गगन मुकाम । सत दरस तें सिध काम ॥२॥
गुरु चरन तें रहु लाग । तहँ [illegible] है भाग ॥३॥
निरखि हू मनसार । मिटि जाय सब भ्रम जार ॥४॥
अमर जुग जुग होहु । रहु नाम कहँ न बिछोहु* ॥५॥

॥ दोहा ॥

सत समरथ तें राखि मन, करिय जगत को काम ।
जगजीवन यह मंत्र है, सदा सुख बिसराम ॥६॥

---

* बियोग, जुदाई ।

साखी

मैं तैं गाफिल होहु नहिं, समुझि कै सुद्धि सँभार ।
जौने घर तैं आयहू, तहँ का करहु विचार ॥१॥
काहे भूल गइसि तैं, का तोहि काँ हिल लाग ।
जवने पठवा कौल करि, तेहि कस दीन्ह्यो त्याग ॥२॥
भूलु फूलु सुख पर नहीं, अब हूँ होहु सचेत ।
साँई पठवा तोहि काँ, लावो तेहि तैं हेत ॥३॥
इहाँ तो कोऊ रहि नहीं, जो जो धरिहै देँह ।
अंत काल दुख पाइहौ, नाम तैं करहु सनेह ॥४॥
तजु आसा सब झूँठ हो, सँग साथी नहिं कोय ।
केउ केहू न उबारिही, जेहि पर होय सो होय ॥५॥
मारहिं काटहिं बाटहीं, जानि मानि करु त्रास ।
छाँड़ि देहु गफिलाई, गहहु नाम की आस ॥६॥
जगजीवन गुरु सरनहीं, अंतर धरि रहु ध्यान ।
अजपा जपु परतीत करि, करिहैं सब औसान ॥७॥
सत्त नाम जप जीयरा, और वृथा करि जान ।
माया तकि नहिं भूलसी, समुझि पाछिला ज्ञान ॥८॥
कहवाँ तैं चलि आयहू, कहाँ रहा अस्थान ।
सो सुधि बिसरि गई तोहिं, अब कस भयसि हेवान ॥९॥
अबहूँ समुझि के देखु तैं, तजु हंकार गुमान ।
यहि परिहरि* सब जाइ है, होइ अंत नुकसान ॥१०॥

*छोड़कर ।

दीन लीन रहु निसु दिना, और सर्बसौ त्यागु ।
अंतर बासा किये रहु, महा हितु प्रीति तेँ लागु ॥११॥
काया नगर सोहावना, सुख तब हीँ पै होय ।
रमत रहै तेहिँ भीतरे, दुख नहिँ ब्यापै कोय ॥१२॥
दिना चारि का पेखना, अंत रहहि कोउ नाहिँ ।
जानु बृथा मन आपने, कोउ काहू कर नाहिँ ॥१३॥
मृत मंडल कोउ थिर नहीँ, आवा सो चलि जाय ।
गाफिल ह्वै फंदा पस्यो, जहँ तहँ गयो बिलाय ॥१४॥
जिन केहु सुरति सँभारिया, अजपा जपि भे संत ।
न्यारे भवजल सबहिँ तेँ, सत्त सुकृति तेँ तंत ॥१५॥
जगजीवन गहि चरन गुरु, ऐनन* निरखि निहारि ।
ऐसी जुगुती रहै जे, लेहैँ ताहि उबारि ॥१६॥